





[ सटीक ]

मनुष्यद्वय—

पाण्डेय एवं श्रीगणेशायनयनद्वय श्री गणेशाय 'धर्म'

॥ पुस्तक भवन, +  
त्रिपोठिया बाजार, २२/११/२०

या श्रीः कर्पं सुहृदिनां मन्त्रेष्वस्यसीः  
 पापात्मनां कृतघ्निनां इहयेषु बुद्धिः ।  
 मन्त्रा चर्ता कुलजनकपश्य मन्त्रा  
 तां त्वां मन्त्रा स परिपाद्य वैरि विन्वम् ॥

तं २ ४ ६ ८ १० १२ १४ १६ १८

तं २० २२ २४ २६ २८ ३० ३२ ३४ ३६

तं ३८ ४० ४२ ४४ ४६ ४८ ५० ५२ ५४

कुल १ ५२५

मूल्य ॥) बारह आना

सन्निध १) एक रुपया

फा-गीताप्रस, या गीताप्रस ( गानारपुर )

## विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१-निवेदन	५
२-सप्तस्तोत्री गुर्गा	७
३-श्रीगुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्र	९
४-पाठविधि	११
१-वैष्णवः कथयन्	११
२-शार्ङ्गस्तोत्रम्	१
३-श्रीकण्ठम्	११
४-मैत्रेयः शत्रिपुत्रम्	४१
५-तन्मैत्रेयः शार्ङ्गस्तोत्रम्	४९
६-श्रीवैष्णवसंघीर्षम्	४४
७-सर्वार्थविधि	५१
५-श्रीगुर्गासप्तशती	
१-प्रथमः अध्यायः—मेधा श्रुतिका राज्ञः पुराण और उग्रभि- को भक्तकी महिमा बताते हुए मनु-कैटभ-वक्ता प्रसन्न हुना	५
२-द्वितीयः अध्यायः—देवताओंके सेवसे देवीका प्राप्तिमान और महेश्वरकी सेवाका वचन	७५
३-तृतीयः अध्यायः—सेनापतिवैरहित महेश्वरका वचन	८९
४-चतुर्थः अध्यायः—इन्द्रादि देवताओंका देवीकी स्तुति	९७
५-पञ्चमः अध्यायः—देवताओंका देवीकी स्तुति पञ्च-मुखके मुखसे अभिषेकके रूपकी प्रणम्य हुनकर शुभम्भवनके पाठ पूत भेदन और वृत्तका निष्ठा और	१८

१-बह्वर्ण्य-ब्रह्मर्षि-वच	१८१
२-सप्तम ब्रह्मर्षि-ब्रह्म और मुखर्षि वच	१८८
८-ब्रह्मर्षि-ब्रह्म-वच	१९४
९-ब्रह्मर्षि-ब्रह्म-वच	१९५
१०-ब्रह्मर्षि-ब्रह्म-वच	१९६
११-ब्रह्मर्षि-ब्रह्म-वच-देवता-मोक्ष-देवी-की-स्तुति-वच-देवी- द्वारा-देवता-मोक्ष-वचन	१
१२-ब्रह्मर्षि-ब्रह्म-वच-देवी-परिचय-वच-माहात्म्य	१०
१३-ब्रह्मर्षि-ब्रह्म-वच-सुर-और-देवता-देवी- वचन	१०८
३-उपनिषद्	
१-ब्रह्मसूत्र-वच	१८९
२-ब्रह्मसूत्र-वच	१८९
३-ब्रह्मसूत्र-वच	१९९
४-ब्रह्मसूत्र-वच	१९८
५-ब्रह्मसूत्र-वच	१९९
७-साम-वच	१९४
८-साम-वच	१९५
९-साम-वच	१९६
१०-साम-वच	१९७
११-साम-वच	१९८
१२-साम-वच	१९९
१३-साम-वच	२००
१४-साम-वच	२०१
१५-साम-वच	२०२
१६-साम-वच	२०३
१७-साम-वच	२०४
१८-साम-वच	२०५
१९-साम-वच	२०६
२०-साम-वच	२०७
२१-साम-वच	२०८
२२-साम-वच	२०९
२३-साम-वच	२१०
२४-साम-वच	२११
२५-साम-वच	२१२
२६-साम-वच	२१३
२७-साम-वच	२१४
२८-साम-वच	२१५
२९-साम-वच	२१६
३०-साम-वच	२१७
३१-साम-वच	२१८
३२-साम-वच	२१९
३३-साम-वच	२२०
३४-साम-वच	२२१
३५-साम-वच	२२२
३६-साम-वच	२२३
३७-साम-वच	२२४
३८-साम-वच	२२५
३९-साम-वच	२२६
४०-साम-वच	२२७
४१-साम-वच	२२८
४२-साम-वच	२२९
४३-साम-वच	२३०
४४-साम-वच	२३१
४५-साम-वच	२३२
४६-साम-वच	२३३
४७-साम-वच	२३४
४८-साम-वच	२३५
४९-साम-वच	२३६
५०-साम-वच	२३७
५१-साम-वच	२३८
५२-साम-वच	२३९
५३-साम-वच	२४०
५४-साम-वच	२४१
५५-साम-वच	२४२
५६-साम-वच	२४३
५७-साम-वच	२४४
५८-साम-वच	२४५
५९-साम-वच	२४६
६०-साम-वच	२४७
६१-साम-वच	२४८
६२-साम-वच	२४९
६३-साम-वच	२५०
६४-साम-वच	२५१
६५-साम-वच	२५२
६६-साम-वच	२५३
६७-साम-वच	२५४
६८-साम-वच	२५५
६९-साम-वच	२५६
७०-साम-वच	२५७
७१-साम-वच	२५८
७२-साम-वच	२५९
७३-साम-वच	२६०
७४-साम-वच	२६१
७५-साम-वच	२६२
७६-साम-वच	२६३
७७-साम-वच	२६४
७८-साम-वच	२६५
७९-साम-वच	२६६
८०-साम-वच	२६७
८१-साम-वच	२६८
८२-साम-वच	२६९
८३-साम-वच	२७०
८४-साम-वच	२७१
८५-साम-वच	२७२
८६-साम-वच	२७३
८७-साम-वच	२७४
८८-साम-वच	२७५
८९-साम-वच	२७६
९०-साम-वच	२७७
९१-साम-वच	२७८
९२-साम-वच	२७९
९३-साम-वच	२८०
९४-साम-वच	२८१
९५-साम-वच	२८२
९६-साम-वच	२८३
९७-साम-वच	२८४
९८-साम-वच	२८५
९९-साम-वच	२८६
१००-साम-वच	२८७

## प्रथम सस्करणका निवेदन

देवि प्रपद्यस्मिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽश्लिष्टस्य ।  
प्रसीद विश्वेश्वरि पादि विद्वत् स्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥

दुर्गासुनराती हिंदू-धर्मका सर्वमान्य ग्रन्थ है । इसमें भगवतीकी कृपाके सुन्दर इतिहासके साथ ही बड़े-बड़े गूढ़ साधन-रहस्य भरे हैं । कर्म मति और ज्ञानकी त्रिविध मन्दाकिली बहानेवाला यह ग्रन्थ मज्जेके छिये बाज्जकल्पतरु है । सकलम भक्त इसके सेवनसे मनोऽभिडन्ति दुर्धमलम क्लृप्ता या स्थिति सहज ही प्राप्त करते हैं, और निष्कलम भक्त परम दुर्धम मोक्षको पाकर इत्थार्थ होते हैं । राजा सुरपसे महर्षि मेधाने कहा था—‘तामुपैहि महाराज शरण परमेश्वरीम् । आराधिता सैव नृणां मोगसंगोपगदा ॥’ महाराज ! आप उन्हीं भगवती परमेश्वरीकी शरण ग्रहण करिये । वे आराधनामे प्रसन्न होकर मनुष्योंका मोग, स्वर्ग और अपुनरावर्त्ती मोक्ष प्रदान करती हैं । इसीके अनुसार आराधना करके ऐश्वर्यकामी राजा सुरपने अक्षय्य साधन्य प्राप्त किया तथा वैराग्यवान् सम्राधि वैश्यने दुर्धम ज्ञानक द्वारा मोक्षकी प्राप्ति की । अतएव इस आशीर्वादरूप मन्त्रमय ग्रन्थके आश्रयमे न माद्वय चिन्तन आत, अर्थात् जिज्ञासु तथा प्रमी भक्त अपना मनोरथ सफल कर चुके हैं । हर्षसि बाल है कि जगज्जननी भगवती श्वेदुग्गञ्जी-की कृपासे बही सुनराती सशित पाठ-विधिसहित पाठ्यक्रमके समस्त पुस्तक-रूपमें उपस्थित की जा रही है । इसमें कथा-भाग तथा अन्य भागों के ही हैं, जो ‘कल्प्याग’के विरोधाद् ‘संश्लिप्त मयर्कशेप-ब्रह्मपुराण’में प्रकाशित हो चुकी हैं । कुछ उपयोगी स्तोत्र और ब्रह्माये गये हैं ।

इसमें पाठ करनेकी विधि स्पष्ट सरल और प्रासंगिकरूपमें दी गयी है । इसके मूल पाठको विशेषतः शुद्ध रज्ज्वेग्य प्रयास किया

गया है। अल्पकाल प्रेसमें छपी हुई अविकाराश पुस्तकों अद्भुत निकलती हैं, किंतु प्रस्तुत पुस्तकको इस दोषसे बचानेकी ययासाध्य चेष्टा की गयी है। पाठकोकी सुविधाके लिये कहीं-कहीं महत्वपूर्ण पाठान्तर भी दे दिये गये हैं। शापोन्धारके अनेक प्रकार काटछापे गये हैं। कलम, अर्जवा और कठिकके भी कार्य दिये गये हैं। वैदिक-तान्त्रिक रात्रि-सूक्त और देवीसूक्तके साथ ही देव्यर्चनार्थ, सिद्धपुष्टिकारस्तोत्र, मूक छत्रछोकी हुरग, श्रीहृर्गात्रिसन्ध्यामन्त्र, श्रीहृर्गाद्योत्तररात्रामन्त्रस्तोत्र श्रीहृर्गमानससूक्त और देव्यपराधक्षम्यपमस्तोत्रको भी दे देनेसे पुस्तककी उपयोगिता विशेष बढ़ गयी है। नवार्ण-विधि तो है ही, अल्पकाल ग्याप्त भी नहीं छूटने पाये हैं। छत्ररात्रीके मूक छत्रकोका पूरा कार्य दे दिया गया है। छत्रों रात्र्योमें आवे हुए कई गूढ़ लिपियोंमें छत्रिणीद्वारा स्पष्ट किया गया है। इन विशेषताओंके कारण यह पाठ और अल्पकालके लिये बहुत ही उपयोगी और उत्तम पुस्तक हो गयी है। यदि पाठकोने इसे अपनाय तो वागे कालमें निस्तुत पाठ-विधिके साथ छत्ररात्रीकी कभी पुस्तक निकलनेका भी विचार किया जा सकता है।

छत्ररात्रीके पाठमें विधिक काया रक्ता तो उत्तम है ही, उसमें भी सबसे उत्तम बात है मातृसी हृर्गमन्त्रके चरणोंमें प्रेमपूर्ण मच्छि। यन्त्रा और मच्छिके साथ अश्वत्थाके स्मरणपूर्वक मन्त्ररात्रीका पाठ करनेसेकेने उनकी कृपाका शीघ्र अनुभव हो सकता है। वारा है प्रेमी पाठक इससे कम ठगवेंगे। यद्यपि पुस्तकको सब प्रकारसे कुछ कालकी ही चेष्टा की गयी है तथापि प्रमाण-बश कुछ अशुश्रियोका रह जाना अनुभव नहीं है। परी मूछोंके साथ क्षमा माँगते हुए हम पाठकोसे अनुरोध करते हैं कि वे हम सुचित कर जिसमें मविष्यम उनका सुधार किया जा सके।

हनुमानप्रसाद पोरर

श्रीमान फनेसाचप्री श्रीचण्डी गोतोष्ठा  
बबपुर वाखो श्री भार से भेंट ॥

## अथ सप्तश्लोकी दुर्गा

सिख उवाच—

देवि त्वं मत्सुलभे सर्वकर्मविधायिनि ।

कलौ हि कर्मसिद्धयर्थमुपायं ब्रूहि व्रतता ॥

देव्युवाच—

शृणु देव प्रवक्ष्यामि कञ्चै सवेष्टासनम् ।

मया तत्रैव स्नेहेन्यमम्बास्तुतिः प्रकृत्यते ॥

ॐ अस्व श्रीदुर्गासप्तश्लोकीस्तोत्रमन्त्रस्य मारायण श्यपिः, बनुष्टुप्  
छन्दः श्रीमहाकालीमहात्म्यमीमहास्तरस्वस्त्यो देवताः

श्रीदुर्गाभीत्यर्थं सप्तश्लोकीदुर्गापाठे विनियोगः ।

ॐ इयन्मिमपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।

षट्पञ्चाक्षर्य मोहस्य महाभाया प्रमच्छति ॥ १ ॥

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिभयेपजम्तोः

स्वस्थैः स्मृता मतिमतीष शुभा ददाति ।

दारिद्र्यदुःखमहारिणि च स्वभ्या

मर्षोरक्षरक्षणाय

भदार्निधिता ॥ २ ॥



सर्वमाकलयन्त्यस्ये सिध सर्वावसाधिक ।

मरुत्ये अम्बके गोरि माराधनि ममोऽस्तु त ॥ ३ ॥

सरणमातदीभ्यर्तपरिभ्राणपराकणे ।

सर्वस्वार्तिहरे देवि माराधनि ममोऽस्तु त ॥ ४ ॥

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वसत्त्विसमन्विते ।

मवेम्बस्वादि भो देवि दुर्गे नमि ममोऽस्तु त ॥ ५ ॥

रोगघ्नसंशयघ्नीति

तथा

न्या तु कथमात्तु सर्वसम्पत्सिद्धिम् ।

त्यमाभिताना न विचारात्वा

त्यमाभिता व्याभ्यना प्रजाप्ति ॥ ६ ॥

सर्वबाधाप्रलमम श्रेयस्वस्वार्तिस्तेष्वदि ।

एकदेश लला कर्ममस्मद्देरिक्लिप्तनम् ॥ ७ ॥

इति श्रीसप्तस्योत्री दुर्गा स्तम्भ्या ॥



ॐ

॥ श्रीगुर्गाणि नमः ॥

## श्रीदुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ईश्वर उवाच

शतनाम प्रवक्ष्यामि मृणुष्व कमलानने ।  
 यस्य प्रसादमात्रेण दुर्गा प्रीता भवेत् सती ॥ १ ॥  
 ॐ सती साध्वी भवप्रीता भवानी भवमाधनी ।  
 आर्या दुर्गा जया चाद्या त्रिनेत्रा शूलधारिणी ॥ २ ॥  
 पिनाकधारिणी विद्या बभ्रुवध्या महातपा ।  
 मनो बुद्धिरहंकारा चित्तरूपा चिता चित्ति ॥ ३ ॥  
 सर्वमन्त्रमयी सत्ता सत्यानन्दस्वरूपिणी ।  
 अनन्ता भाविनी भाव्या भव्यामभ्या सद्गतिः ॥ ४ ॥

शाश्वरकी पार्वतीजीसं कहते हैं—कमलानने । अब मैं अष्टोत्तरशत नामका वर्णन करता हूँ तुमों । जिसके प्रसाद (पाठ या भजन) मात्रसे परम सत्यी प्रसक्ती दुर्गा प्रसन्न हो जाती हैं ॥ १ ॥

१ ॐ सती २ साध्वी ३ भवप्रीता ( भगवान् विद्वत् प्रीति रखने-वाली ) ४ भवानी ५ भवमाधनी ( तत्कारकजनने मुक्त करनेवाली ), ६ आर्या ७ दुर्गा ८ जया ९ चाद्या १ त्रिनेत्रा ११ शूलधारिणी १२ पिनाकधारिणी १३ विद्या १४ बभ्रुवध्या ( बभ्रुवध् स्वरसे बभ्रुवध्नाद करनेवाली ) १५ महातपा ( भारी तपस्या करनेवाली ), १६ मनः ( मनन शक्ति ) १७ बुद्धिः ( बोधशक्ति ) १८ अहंकारः ( अहंकार आत्मत्व ) १९ चित्तरूपा २ चिता २१ चित्ति ( चेतना ) २२ सर्व मन्त्रमयी २३ सत्ता ( सत्त्व-गुण ) २४ सत्यानन्दस्वरूपिणी २५ अनन्ता ( जिसके स्वरूपका कहीं अन्त नहीं ), २६ भाविनी ( गरही उत्पन्न करने वाली ) २७ भाव्या ( भावना एवं ध्यान करने योग्य ), २८ भव्या ( कस्यावरूपा ), २९ अभ्या ( जिसने बहुतकर मन्त्र कहीदे नहीं ) ३ सत्ता-

धाम्मपी देवमाता च पिन्ता रत्नमिया सदा ।  
 सर्वविद्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी ॥ ५ ॥  
 मणनिकर्मणा च पाटला पाटलावती ।  
 पद्माम्बरपरीधाना कलमञ्जरीरञ्जिनी ॥ ६ ॥  
 अनेपविक्कमा कृता सुन्दरी सुरसुन्दरी ।  
 वनदुर्गा च मातङ्गी मन्मथमुनिपूजिता ॥ ७ ॥  
 माद्यी मादयरी चैन्द्री कौमारी देव्यपी तथा ।  
 चामुण्डा चैव वाराही सक्कीच पुण्याह्विताः ॥ ८ ॥  
 विमलमत्कर्पिणी ज्ञाना क्रिया नित्या च बुद्धिदा ।  
 बहुला बहुलप्रभा सर्वपाहनपाहना ॥ ९ ॥  
 निवृत्तमग्न्यमहन्नी महिषस्तुरमर्दिनी ।

तसि ३१ धाम्मपी ( विजयिणी ) ३२ देवमाता ३३ पिन्ता ३४ धाम्म-  
 मिया ३५ सर्वविद्या ३६ दक्षकन्या ३७ दक्षयज्ञविनाशिनी ३८ मणनार्थी  
 ( कलसाके कर्म फलेषु मी न जानेवाली ) ३९ अनेपविक्कमा ( अनेप-  
 रोगीवाली ) ४० पाटला ( कल रंगवाली ) ४१ पाटलावती ( दुष्कलके  
 पूरु या लाल पूरु वारण करनेवाली ) ४२ पद्माम्बरपरीधाना ( लेखनी  
 वस्त्रधरनेवाली ) ४३ कलमञ्जरीरञ्जिनी ( मञ्जुर ज्वलि करनेवाली यज्ञरिक्तो  
 वारण करके प्रणत रहनेवाली ) ४४ अनेपविक्कमा ( अतीत पराक्रमवाली )  
 ४५ कृता ( देवोके प्रीति कटोर ) ४६ सुन्दरी ४७ सुरसुन्दरी  
 ४८ वनदुर्गा ४९ मातङ्गी ५० मन्मथमुनिपूजिता ५१ माद्यी ५२ मादे-  
 यरी ५३ चैन्द्री ५४ कौमारी ५५ देव्यपी ५६ चामुण्डा ५७ वाराही  
 ५८ सक्की ५९ पुण्याह्विताः ६० विमलम् ६१ उत्कर्षिणी ६२ ज्ञानदा  
 ६३ क्रिया ६४ निष्ठा ६५ बुद्धिदा ६६ बहुला ६७ बहुलप्रभा  
 ६८ सर्वपाहनपाहना ६९ निवृत्तमग्न्यमहन्नी ७० महिषस्तुरमर्दिनी

मधुकैटमहन्त्री च षण्मुण्डविनाशिनी ॥१०॥  
 सर्वासुरविनाशा च सर्वदानवघातिनी ।  
 सर्वशास्त्रमयी सत्या सर्वास्त्रधारिणी तथा ॥११॥  
 अनेकशस्त्रहस्ता च अनेकास्त्रस्य धारिणी ।  
 कुमारी वैष्णव्या च कैशोरी युवती यतिः ॥१२॥  
 अप्रौढा चैव प्रौढा च बृहन्मता बलप्रदा ।  
 महोदरी मुक्तफली धाररूपा महाबला ॥१३॥  
 अग्निचाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी ।  
 नारायणी मद्रकाली विष्णुमाया कलादरी ॥१४॥  
 शिवहृती कराली च अनन्ता परमेश्वरी ।  
 कात्यायनी च सावित्री प्रत्यक्षा ब्रह्मवादिनी ॥१५॥  
 य इदं प्रपठन्नित्यं दुर्गानामक्षताष्टकम् ।  
 नासाध्यं विद्यते इति त्रिषु लोकेषु पार्वति ॥१६॥

०१ मधुकैटमहन्त्री ०२ षण्मुण्डविनाशिनी ०३ सर्वासुरविनाश ०४ सर्व  
 दानवघातिनी ०५ सर्वशास्त्रमयी ०६ सत्या ०७ सर्वास्त्रधारिणी ०८ अनेक  
 शस्त्रहस्ता ०९ अनेकास्त्रधारिणी ८ कुमारी ८१ एकव्या ८२ कैशोरी  
 ८३ युवती ८४ यतिः ८५ अप्रौढा ८६ प्रौढा ८७ बृहन्मता ८८ बलप्रदा  
 ८९ महोदरी ९० मुक्तफली ९१ धाररूपा ९२ महाबला ९३ अग्नि  
 चाला ९४ रौद्रमुखी ९५ कात्यायनी ९६ तपस्विनी ९७ मायययी ९८  
 मद्रकाली ९९ विष्णुमाया १ अम्बहरी १ १ शिवहृती १ २ कराली  
 १ ३ अनन्ता ( त्रिगुणहृता ) १ ४ परमेश्वरी १ ५ कात्यायनी  
 १ ६ सावित्री १ ७ प्रत्यक्षा १ ८ ब्रह्मवादिनी ॥ १२—१५ ॥

ऐसी पार्वती । जो प्रतिदिन दुर्गाजीके इस अष्टोत्तरशतनामका पाठ  
 करता है उसके द्विजे तीनो जातोंमें कुछ भी कष्टाध्य नहीं है ॥ १६ ॥

धनं धान्यं सुतं ज्ञायां ह्यं हस्तिनमेव च ।  
 चतुर्धनं तथा चान्ते लभेन्मुक्तिं च क्षाप्सीम् ॥१७॥  
 कुमारीं पूजयित्वा तु ध्यात्वा देवीं सुरेश्वरीम् ।  
 पूजयत् परया भक्त्या पठेन्नामघटाष्टकम् ॥१८॥  
 तस्य सिद्धिर्भवेद् देवि सर्वैः सुरेश्वरपि ।  
 राजानां दासतां चान्तिं रान्यभियम्नाप्नुयात् ॥१९॥  
 गोरोचनालक्ष्मणकुमेन

सिन्दूरकूर्ममधुप्रयेण ।

विठ्ठलस्य मन्त्रं विधिना विविद्धो

भवेत् सदा धारयते पुरारिः ॥२०॥

मौमाहास्यानिष्ठाग्र्ये चन्द्रे छतमिषां गते ।

विठ्ठलस्य ग्रपठेत् स्तार्त्रं स भवेत् संपदां वदम् ॥२१॥

इति श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रे गुणाक्षोत्तरखण्डनाम्नोऽयं समाप्तः

यह वन नाम्य पुत्र ली मीठा हाथी धर्म अग्नि चार पुत्रधर्म तथा  
 अन्तर्गतात्तु मुक्ति भी प्राप्त कर लेता है ॥ १७ ॥ कुम्भीका पूजन और देवी  
 सुरेश्वरीका ध्यान करके परमार्थिक लाभ उभका पूजन करे फिर अष्टोत्तरशत-  
 नामका पाठ आरम्भ करे ॥ १८ ॥ देवि । ओ देवा करया दे उते तव भेद  
 देवताभेदे श्री विठ्ठल प्राप्त होगी है । राजा उसके दास हो जाते हैं । वह  
 राजाकर्मसीधो प्राप्त कर लेता है ॥ १९ ॥ गीरीजन लक्ष्मी, कुङ्कुम सिन्दूर,  
 कपूर पी ( अथवा धूप ), चीनी और मनु-इन वस्तुओंसे एकत्र करके  
 इनसे विधिपूर्वक कर्म कियाकर ओ विविध पुत्रप तथा उक्त कर्मको धारण  
 करता है वह धारण करके ( योद्धव्य ) हो जाता है ॥ २० ॥ मौमरती अथ-  
 वा कल्याणी भाषी गद्यमे वर अथवा शाल्मलिक जलधर ही उक्त समय इन  
 लोचनी कियाकर ओ इतका पाठ करता है वह सम्यगिष्टानी होता है ॥ २१ ॥

**पाठविधिः\***

चायक ज्ञान करके पवित्र हो आसन-छादिकी विधि ध्याना करके  
 छद्म आसनपर बैठे। तायमे छद्म जल, पूजन-समग्री और श्रीगुरुवांछाप्रतीक  
 पुस्तक रखे। पुस्तकको अपने सामने काष्ठ आदिके छद्म आसनपर विराज-  
 मान करे। छद्मटोपी अपनी रसिके अनुसार भस्म चन्दन अथवा रोमी  
 कया छे, शिखा बाँध छे। फिर पूर्वामुमुख होकर तत्त्व छद्मिके द्विये स्मर  
 बार आचमन करे। उक्त समय निम्नाखिल बार मन्त्रोंको क्रमशः पढ़े—

[illegible]

- ॐ वे आत्मतर्पणे शोचयामि नमः स्वाहा ।  
 ॐ श्री विद्यातर्पणे शोचयामि नमः स्वाहा ॥  
 ॐ इति शिवतर्पणे शोचयामि नमः स्वाहा ।  
 ॐ वे श्री ह्रीं कर्णतर्पणे शोचयामि नमः स्वाहा ॥

तत्पश्चात् प्राप्तायाम करके विशेष ध्यान देकराभी एवं गुरुजीको प्रणाम करे। फिर व्यक्ति को वैष्णवी इत्यादि मन्त्रों को पुनः पढ़नी आवश्यक करके हाथों का एक छूक, अक्षत और एक केसर विष्णुस्मृत कपड़े संकलन को—

[illegible]

इस प्रकार प्रतिष्ठा (संक्षेप) करके देवीका ज्ञान करते हुए पञ्चोपचारकी विधिसे पुष्टाककी पूजा करे, योनिपुष्पाका प्रदर्शन करके मंगलशुभको प्रथम करे, फिर मूक नवार्ण मन्त्रसे पीठ आदिमें आभारशक्तिकी स्थापना करके ठठके ऊपर पुष्टाकको विराजमान करे । ● इसके बाद शायो-  
झरती करन्य चाहिये । इसके अनेक प्रकार हैं । ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं  
वन्दिक्रमेभ्यै स्थापनायानुमार्हं कुर्वतु स्वप्ना इति मन्त्रका आदि और

१—पुष्टाक-पूजाका मन्त्र—

ॐ नमो देवीं व्यारेभ्यै शिवायै लला नमः ।

नमो मङ्गलै न्यायै विपद्या जगत्या नमः ॥

( वराहोत्थित तथा विदम्बरसंहिता )

व्याख्या देवी वराहपूजां कृत्वा योग्या नमस्य नः ।

व्यापारं स्वप्नं मूक्यं स्वप्नवेद्यं पुष्टाकरं ॥

स्तोत्राणी-मूर्तिकाके उपासना-क्रममें पहले शायोझर करके घरमें वराह-  
स्तोत्र पाठ करकेका निर्गम किया गया है, अन्तः कथन आदि पाठके रहते ही शायो-  
झर कर लेन्य चाहिये । वराहाकली-स्तोत्रमें स्वप्नकार तथा जगदोत्थन और ही  
प्रकार वक्तव्य गया है—अन्ताकाशं हि गन्धर्विण्यन्त्रैर्विपरीतम् । अन्तोऽन्त्र इति  
स्तोत्रं शायोझरे नमः, अन्तः ॥ अन्तीकले वरिषाणां प्रत्यक्षमिति नमः ।  
अन्तर् वराहकीके अन्तापोका ठेराह—रक्त, शरह—ही शरह—वीर दान—वाह, नौ-  
शाय तथा अन्तः—छन्दे अन्तमें पाठ करके अन्तमें अन्तमें अन्तमें वा वर हो ।  
यह शायोझर है । और पहले अन्तमें वरिषाणां किर प्रथम वरिषाणां अन्तम्  
उत्तरवरिषाणां पाठ करना कर्तव्य है । कुछ लोगोंने अपने अन्तमें वरने  
अनुसार वरानि प्रणिशुद्धि-के विषयमें इच्छाशक्तों अथवा वा चतुरंगी द्विविधि  
देवीको नववर्ण मूर्तिका करके अन्ताका शायो अन्तमें प्रसारकान्ते अन्तमें वस्तुको  
अन्तमें अन्त ही शायोझर और कर्तव्य है । कोई कहे दे—उः अन्तवेद्य  
पाठ करना ही शायोझर है । अन्तः अन्त वा अन्त है । कुछ विद्वानोंके अपने





[illegible]

इत्येवं हि महामन्त्राद् वक्षित्वा परमेश्वरः ।

अष्टमीपर्व दिवा रात्री दुर्गादेव न मंगलः ४१ ■

अहं यन्मर्त्तं न ज्ञानानि पञ्चदीपादं करोमि यः ।

आमार्थ सैव दातारं क्षीयं कुर्यान्मममाया ॥ ९ ॥

इस प्रकार शरीरधार करनेके अनन्तर अन्तर्मातृका-बहिर्मातृका और  
 स्वात करे, फिर श्रीबीजा ध्यान करके रहस्यमें बताये अनुसार नौ कोशोंमें  
 कर्ममें महाकस्त्री आदिका पूजन करे, इसके बाद का अङ्गीकृतियुग्मात्मरासी  
 का पाठ बारम्बार किया जाता है। कवन अर्गाका, कीकक और तीनों रहस्य—  
 ये ही तत्तल्लीके का बाह्य माने गये हैं। इनके कर्ममें भी मत्तेद है।  
 चिरम्बरल्लियामें पहले अर्गाका फिर कीकक तथा अन्तमें कवन फन्देका विधान  
 है। ० किन्तु योगरक्षकनीमें पाठका क्रम इसलिये किया है। उसमें कवनको बीच  
 अर्गाकाको बाहिर् तथा कीककको कीकक तथा ही मयी है। किन्तु प्रकार तब  
 मन्त्रोंमें पहले बीजका फिर बाह्यिका तथा अन्तमें कीककका उच्चारण होता  
 है उसी प्रकार यहाँ भी पहले कवनका बीजका फिर अर्गाकरना बाह्यिका तथा  
 अन्तमें कीककरूप कीककका कन्धाः पाठ होना चाहिये। † यहाँ इसी  
 कवनका अनुसरण किया गया है।

कर्म कर्म कर्म कर्म कर्म कर्म

अथ महाभारतं समाप्तं विदित्वायेन अभिषत् ।

† कनक श्रीमच्छिखराला प्रतिनिधित्वे ।

वीर्यं वीर्यं वा नमो नमो नमो॥

[illegible]

एत प्रकाश जनेन लोकोक्ति अनुसार सत्यज्ञाने वाच्यता कम जनेन प्रकाश  
उत्पन्न होइ छै ऐसी स्थिति जवने स्थिति वाच्यता से कम पूर्वप्रकाशमे प्रकाश  
छै प्रकाश उत्पन्न करता जवना छै

## अथ देव्या कवचम्

ॐ अथ श्रीचण्डीकवचम् इत्यादि, अथुपुष्पम्, चामुण्डा देवता  
ब्रह्मण्यसौक्यमाप्तये श्रीगुरु, दिव्यम्भदेवतास्तत्त्वत्, श्रीगुरुभ्यामीत्यर्थे  
सहस्रतीक्ष्णवत्त्वेन जपे विविधयोगः ।

ॐ नमःशण्डिकार्यै ॥

मार्कण्डेय उवाच

ॐ यदुक्तं परमं लोक सर्वरक्षाकरं नृणां ।  
यन्न कस्यचिदास्यात् तन्मे प्रहि पितामह ॥ १ ॥

महोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम् ।  
देव्यास्तु कवचं पुण्य तच्छृणुष्व महामुने ॥ २ ॥

✕ ॐ शण्डिका देवीको नमस्तार है ।

मार्कण्डेयजीने कहा—पितामह ! जो इस संसारमें परम गौरवीय तथा  
मनुष्योंको सब प्रकारसे रक्षा करनेवाला है और जो अवतक आग्ने कूतरे किन्ही-  
के शस्त्रने प्रकट नहीं किया हो ऐश्वर्य कोई तापन मुझे बताइये ॥ १ ॥

महाराजी बोले—ब्रह्म ! ऐसा तापन तो एक देवीका कवच ही है  
जो घोरनीचते भी वरम घोरनीच परित्र तथा तत्पुर्ण प्राप्तिपोंका उत्कार



नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः ।  
 उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥ ५ ॥  
 अधिना वक्ष्यमानस्तु क्षत्रुमण्ये गता रणे ।  
 विषम दुर्गमे चैव भयात्तां शरणं गताः ॥ ६ ॥  
 न तेषां जायत किञ्चिदशुभं रणसंघटे ।  
 नापदं तस्य पश्यामि श्लोकदुःस्वभयं न हि ॥ ७ ॥  
 यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां बुद्धिः प्रजायते ।  
 य त्वां सरन्ति दूषेष्टि रक्षसे तासु संशयः ॥ ८ ॥  
 प्रतसंन्या तु चामुण्डा वाराही महिपासना ।  
 ऐन्द्री गजममारुडा वण्णवी गरुडासना ॥ ९ ॥

नवीं दुर्गाका नाम सिद्धिदात्री है । ये सब नाम सर्वत्र मन्त्राद्या वेद मन्त्रान्तर्के  
 द्रष्टव्य ही प्रतिपादित हुए हैं ॥ ५-९ ॥ जो मनुष्य अग्निमें अन्न खा हो रण  
 भूमिमें शत्रुओंसे विर गया हो विषम शत्रुमें रोज गया हो तथा इस प्रकार  
 मयसे आतुर होकर जो मगनती दुर्गाकी शरणमें प्राप्त हुए ॥ उनका कभी  
 कोई असह्य नहीं होगा । युद्धके समय संघटमें पहनेर भी उनके ऊपर कोई  
 विपत्ति नहीं दिग्यामी देती । उन्हें शत्रु-बुद्ध्य और भयकी प्राप्ति नहीं  
 होती ॥ ६-७ ॥

अन्होंने अधिकपूर्वक देवीका स्मरण किया है उनका निश्चय ही  
 अभ्युदय होता है । देवधरि । जो तुम्हारा चिन्तन करते हैं उनकी तुम  
 निःशन्दह रक्षा करती हो ॥ ८ ॥ चामुण्डादेवी प्रेतघर आरुह होती हैं ।  
 वाराही भवेर गवाही करती हैं । ऐन्द्रीका बाहन ऐरावत दावी है । वण्णवी  
 तस्मद्दारा महात्मीयवर्ग प्राप्त किया था जन्म महापिपी कदाचि ।

१ सिद्धि अर्थात् देवता २ देवदात्री होनेसे अन्त्य नाम सिद्धिदात्री है ।

माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी क्षितिबाहना ।  
 लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया ॥१०॥  
 श्वेतरूपवरा देवी श्वरी वृषबाहना ।  
 ब्रह्मी हंससमारूढा सुवामरणमृषिता ॥११॥  
 इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः ।  
 नानाभरणसोभाढ्या नानारत्नापद्माभिः ॥१२॥  
 हृष्यन्ते रश्मिरूढा देव्यः काशसमारूढाः ।  
 स्रुतं चक्रं गदां शक्तिं हस्तं च मुसलायुधम् ॥१३॥  
 खेटकं तामरं चैव परशुं पाशमेव च ।  
 कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमयुधमुद्यमम् ॥१४॥  
 दंष्ट्रानां देहनासाय मूकनामभयाय च ।  
 धारयन्त्यायुधानीत्यं देवानां च दिव्या वै ॥१५॥

देवी गणेश्वर ही आत्मन कमाती है ॥ ॥ माहेश्वरी वृषभार आम्ह होती  
 है । कौमारीका वरुन मयूर है । समवागन्धिजुनी प्रियकर कस्मी देवी कमलके  
 आत्मनपर निरुजमान है और हाथोंमें कमल धारण करने हुए है ॥ १ ॥  
 श्वेतभर आरूढ श्वरी देवीनि श्वेत रूप धारण कर रक्ता है । ब्रह्मी देवी  
 हंसस रीति हुई है और लव प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित है ॥ ११ ॥ इस  
 प्रकार के सभी मातरों लव प्रकारकी योगशक्तियोंसे सम्पन्न हैं । इनके शिष्य  
 और भी उन्नत-नी दक्षिणों हैं जो अनेक प्रकारके आभूषणोंकी श्रेयसे युक्त  
 तथा नाना प्रकारके रत्नोंसे सुशोभित हैं ॥ १२ ॥ वे लक्ष्मीं देवियों शीघ्रों  
 मरी हुई हैं और मर्त्योंकी रक्षाके लिये रत्नपर बैठी दिव्यापी होती हैं । शङ्ख  
 चक्र पाश शक्ति हस्त और मुखा परशु और तोमर परशु तथा पाश  
 कुन्त और त्रिशूल एवं उत्तमशार्ङ्गयुध आदि अनेक वस्त्र अपने हाथोंमें धारण  
 करती हैं । दंष्ट्र नासिका तथा मूकोंको अभयदान देना और देव  
 तमोका वस्त्राण करना—यही उनके धर्म-धारणका उद्देश्य है ॥१३-१५॥

नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे ।  
 महाबले महोत्साहे महामयविनाशिनि ॥ १६ ॥  
 त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये क्षत्रूणां भयवर्द्धिनि ।  
 प्राच्यां रक्षतु मामेन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ॥ १७ ॥  
 दक्षिणेऽवतु घाराही नैऋत्यां स्वर्गधारिणी ।  
 प्रतीच्यां घारुणी रक्षेद् वायव्यां मृगवाहिनी ॥ १८ ॥  
 उदीच्यां पातु क्षमाती ऐशान्यां शूलधारिणी ।  
 ऊर्ध्वं अक्षाणि मे रक्षेदक्षस्तावु वैष्णवी तथा ॥ १९ ॥  
 एव दक्ष दिक्षा रक्षेद्यमुष्ठा क्षयवाहना ।  
 अया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठत ॥ २० ॥  
 अविता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ।  
 क्षिन्वामुषोकिनी रक्षेदुभा मूर्ध्नि ध्वजव्यिता ॥ २१ ॥

[ कवच आरम्भ करनेके पहले इत प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये— ] महान्, रौद्ररूप अत्यन्त घोर पराक्रम महान् बल और महान् उत्साहवाली देवी । तुम महान् मन्त्रों द्वारा करनेवाली हो । तुम्हें नमस्कार है ॥ १६ ॥ तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है । क्षत्रुओंका मय करनेवाली क्षयवर्द्धिनी । मेरी रक्षा करो ।

पूर्व दिक्षाम ऐन्द्री ( इन्द्राग्नि ) मेरी रक्षा करे । अग्निदेवता मेरी रक्षा करे । दक्षिण दिक्षामें घाराही तथा नैऋत्यक्षेत्रमें स्वर्गधारिणी मेरी रक्षा करे । पश्चिमदिक्षामें घारुणी और वायव्यक्षेत्रमें मृगार तथा कर देनेवाली देवी मेरी रक्षा करे ॥ १७-१८ ॥ उत्तर दिक्षाम क्षमाती और शूलधारिणी मेरी रक्षा करे । अक्षाणि । तुम ऊपरकी आग्ने मेरी रक्षा करो और वैष्णवी देवी नीचेकी आरसे मेरी रक्षा करे ॥ १९ ॥ दक्षि प्रक्रम शूलको अपना बाहन बनानेवाली अमुष्ठा देवी तथा दिक्षाभूमि मेरी रक्षा करे ।

अया क्षमसे और विजया पीछेकी ओरसे मेरी रक्षा करे ॥ २० ॥ वाम पार्श्वमें अविता और दक्षिण पार्श्वमें अपराजिता रक्षा करे । उषोकिनी शिखा की रक्षा करे । उभा भेदे मन्त्रकर नियन्त्रात्म होकर रक्षा करे ॥ २१ ॥



माताभर्ग ललाट च भ्रूवा रक्षतु यक्ष्मिनी ।  
 त्रिनत्रा च भ्रूवार्मप्य यमपण्डा च नासिक ॥ २२ ॥  
 शक्तिनी चक्षुषामध्ये भ्रात्रयाद्वारिवामिनी ।  
 कपालां कालिका रक्षत्कणमूल तु श्वाङ्गुरी ॥ २३ ॥  
 नासिकायां मुगन्धा च उत्तराण्ड च चण्डिका ।  
 अधर चामृतकण्ठा जिह्वायां च सरय्वती ॥ २४ ॥  
 दन्तान् रक्षतु कामारी कण्ठउग्र तु चण्डिका ।  
 चण्डिकां चित्रपण्डा च महामाया च तालुक ॥ २५ ॥  
 कामाक्षी चिबुकं रक्षेत् धातु मे सवमङ्गला ।  
 ग्रीवायां मङ्गलाक्षी च शृण्वक्षि चतुर्भरी ॥ २६ ॥  
 नीठग्रीवा बहिःकण्ठ नलिकां नलकृषरी ।  
 स्कन्धयाः स्वर्गिनी रक्षतु बाहू मे वज्रधारिणी ॥ २७ ॥

कण्ठमें मन्त्रकरी रक्षा कर और यक्ष्मिनी देखी में मीहीन संरक्षण करे ।  
 मीहीन मन्त्रमायमें त्रिनत्रा और त्र्युनीकी सम्बन्ध देखी रक्षा करे ॥ २२ ॥  
 शक्ति देखी मन्त्रमायमें शक्तिनी और वामोंमें द्वारवाहिनी रक्षा करे । कालिका  
 देखी कण्ठमें तथा सरय्वती श्वाङ्गुरीकामोंमें मूळमायकी रक्षा करे ॥ २३ ॥  
 नासिकामें मुगन्धा और ऊपरके ओठमें चण्डिका देखी रक्षा करे । नीचेके  
 ओठमें अमृतकण्ठ तथा जिह्वामें सरय्वती रक्षा करे ॥ २४ ॥ कामारी होंठोंकी  
 और चण्डिका कण्ठमें रक्षा करे । चित्रपण्डा गण्डेकी चोटीकी  
 और महामाया तालुमें रहकर रक्षा करे ॥ २५ ॥ कामाक्षी ठोड़ीकी  
 और सवमङ्गला मी बाजीकी रक्षा करे । मङ्गलाक्षी ग्रीवमें और चतुर्भरी  
 शृण्वक्षि ( मङ्गलक्ष ) में रहकर रक्षा करे ॥ २६ ॥ कण्ठके कटरी मयमें  
 नीठग्रीवा और कण्ठकी मझमें नलकृषरी रक्षा करे । दोनों कण्ठोंमें  
 स्वर्गिनी और मरी दोनों मुलासीकी वज्रधारिणी रक्षा करे ॥ २७ ॥

हस्तपादपिङ्गिणी रसेदम्बिका चाङ्गुलीषु च ।  
 नखाङ्गुलेष्परी रसेत्कुक्षौ रसेत्कुलेष्परी ॥ २८ ॥  
 स्तनौ रसेन्महादेवी मनः शोकविनाशिनी ।  
 हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी ॥ २९ ॥  
 नामौ च कामिनी रघव गुह्यं गुह्यं च तथा ।  
 पूतना कामिका मेढू गुहे महिषाहिनी ॥ ३० ॥  
 कक्षां भगवती रसेत्तानुनी विन्ध्यवासिनी ।  
 जङ्घे महाबला रसेत्सर्वकामप्रदायिनी ॥ ३१ ॥  
 गुल्फमार्गारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी ।  
 पादाङ्गुलीषु भी रघुत्पादावस्तलवासिनी ॥ ३२ ॥  
 नखान् दद्याकराक्षी च कङ्ठांश्चैवार्धकेशिनी ।  
 रोमकूपेषु कौशेरी त्वच वसतीश्वरी तथा ॥ ३३ ॥

दोनों हाथोंमें पिङ्गिनी और अङ्गुलिमें अम्बिका रखा करे । अङ्गुलीमें नखोंकी रखा करे । कुक्षेष्परी कुक्षि ( पेट ) में रखकर रखा करे ॥ २८ ॥

महादेवी दोनों स्तनोंकी और शोकविनाशिनी देवी मनकी रखा करे । ललिता देवी हृदयमें और शूलधारिणी उदरमें रखकर रखा करे ॥ २९ ॥  
 नामिनी कामिनी और गुह्यभागकी गुह्येष्परी रखा करे । पूतना और कामिका पिङ्गिणी और महिषाहिनी गुह्यकी रखा करे ॥ ३० ॥ भगवती कटिभागमें और विन्ध्यवासिनी तानुनोंकी रखा करे । सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाली महाबला देवी दोनों जङ्घाओंकी रखा करे ॥ ३१ ॥ नारसिंही दोनों पृष्ठोंकी और तैजसी देवी दोनों पदोंके पृष्ठभागकी रखा करे । भीदेवी पैरोंके अङ्गुलिमें और दद्याकराक्षी पैरोंके तानुओंमें रखकर रखा करे ॥ ३२ ॥ अपनी रङ्गोंके कारण भवकर दिखायी देनेवाली दद्याकराक्षी रङ्गी नखोंकी और ऊर्ध्वकेशिनी देवी कंधोंकी रखा करे । रोमावलिओंके द्वित्रोंमें कौशेरी और त्वचाकी

रक्तमञ्जवसामोसान्धमिमदांसि पार्वती ।  
 अन्त्याणि कालरात्रिषु पित्र च मुकुटेश्वरी ॥ ३४ ॥  
 पद्मावती पद्मकाशे कफे बृहन्मणिस्तथा ।  
 ज्वालामुखी जम्बज्वालाभमेघा सर्पसन्निधु ॥ ३५ ॥  
 शुकं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ।  
 महाकारं मनो बुद्धिं रक्षन्मे धर्मधारिणी ॥ ३६ ॥  
 प्राणायानां तथा ध्यानमुद्गारं च समानकम् ।  
 यज्ञहस्ता च मे रक्षस्त्रायं कल्याणदायिनी ॥ ३७ ॥  
 रसं रूपं च गन्धं च हृद्यं स्पर्शं च योगिनी ।  
 सर्वं रक्षन्तमदृश्यं रक्षधारिणी सदा ॥ ३८ ॥  
 आयुं रक्षतु भाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी ।

बालेश्वरी देवी रक्षा करे ॥ ३३ ॥ पार्वती देवी रक्त मञ्ज वसा मातृ ह्यु  
 और अन्त्याणी रक्षा करे । अन्त्याणी कालरात्रि और पिताजी मुकुटेश्वरी रक्षा  
 कर ॥ ३४ ॥ पद्मकाश अग्नि कफब्रह्मदेवी पद्मावती देवी और कर्म बृह  
 मणि देवी निम्न नीच रक्षा करे । जम्बक देवी जम्बज्वाली रक्षा करे । शिवका  
 शिनी जी भक्षण भक्षण नहीं हो सकना वह भिक्षा देती शरीरजी ममल  
 मन्त्रिणी रक्ष करे ॥ ३५ ॥

पद्माव ज्ञान मे शीर्षकी रक्षा करे । छत्रेश्वरी छायाजी तथा  
 शुकेश्वरी धर्म मे ब्रह्मकार मन और बुद्धिजी रक्षा करे ॥ ३६ ॥ हाथमे  
 यज्ञ धारण करनेवाली ब्रह्मदा देवी घर प्राण ज्ञान ध्यान लक्षण और  
 ममान वायुकी रक्षा कर । कल्याणमे सुखोक्ति देनेवाली भगवती  
 ज्वालाशुभना मर प्राणजी रक्षा करे ॥ ३७ ॥ रस रूप गन्ध शब्द  
 और स्पर्श—इन् विषयका जन्मपर करते समय योगिनी देवी रक्षा करे ।  
 तथा ममल मन्त्रिणी जी तमालेश्वरी रक्षा तथा आयुजी देवी करे  
 ॥ ३८ ॥ भाराही वायुकी रक्षा करे । वैष्णवी धर्मकी रक्षा करे तथा

यश्च कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ॥३९॥  
 गोप्रमिन्द्राणि म रक्षत्यशून्मे रक्ष चण्डिके ।  
 पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मीभार्या रक्षतु मैरपी ॥४०॥  
 पथानं सुपथा रक्षेन्मार्गं धेमकरी तथा ।  
 राजद्वारे महालक्ष्मीपिञ्जया सर्वत स्थिता ॥४१॥  
 रक्षादीनं तु यस्त्यानं वज्रितं कवचेन तु ।  
 तत्सर्वं रक्ष मे ढधि जयन्ती पापनाशिनी ॥४२॥  
 पदमकं न गच्छेत्तु यदीच्छच्छ्रममात्मनः ।  
 कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥४३॥  
 तत्र तत्रार्थलामश्च निजप सार्वकामिकं ।  
 य यं चिन्तयत कामं त तं प्राप्नोति निश्चितम् ।

चक्रिणी ( चक्र धारण करनेवाली ) देवी यद्य कीर्तिं लक्ष्मीं धनं तथा  
 विद्यां रक्षा करे ॥ ३९ ॥ इन्द्राणि । आर मे गोवरी रक्षा करे । चण्डिके ।  
 तुम मेरे पुत्रभार्या रक्षा करो । महालक्ष्मी पुत्रोद्दी रक्षा करे और मैरपी  
 पत्नी रक्षा करे ॥ ४० ॥ मेरे पथकी सुरक्षा तथा मार्गकी धेमकरी रक्षा  
 करे । राजद्वारे महालक्ष्मी रक्षा करे तथा सब जग व्याप्त रहनेवाली  
 पिञ्जया देवी नम्रुनं सर्वोनि मी रक्षा करे ॥ ४१ ॥

ढधि जो स्थान कवचयं नहीं कहा गया है अतएव रक्षाभ रक्षित है  
 वह सब दुष्टोंसे दारा सुरक्षित हो। क्योंकि तुम रिकार्याभिनी और पाप्माभिनी  
 हो ॥ ४२ ॥ यो भक्त शरीरका भक्त था ११ मनुष्य बिना कवचके कहीं  
 एक क्षण भी न जाय—कवचका पत्र कवच ही धारा करे । कवचक द्वारा  
 सब भोगोंमें सुख न मनुष्य उदात्त-पदा भी पाय है कदा-पदा उभय धन-जय  
 हाय है तथा मनुष्य पद्मनाभोकी शक्ति कर्मात्मी रिकारवी प्राप्त हाती है ।  
 वह शिव शिव धामीय मनुष्य चिन्तन करण है जग उमका निधन ही प्राप्त

परमैश्वर्यमनुत्तमं प्राप्स्यते भूतल पुमान् ॥४४॥  
 निर्मया जायत मर्त्य सग्रामेष्वपराजितः ।  
 प्रैलाक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनाङ्कितः पुमान् ॥४५॥  
 इदं तु दम्पाः कवचं केषानामपि दुर्लभम् ।  
 य पठत्यथवा नित्यं श्रितार्थं भङ्गयान्वितः ॥४६॥  
 देवी कला महेत्तस्य प्रैलाक्येष्वपराजितः ।  
 जीवेद्दुर्गपूज्यं सद्यः सद्यः सुखिनिर्जितः ॥४७॥  
 नश्यन्ति व्याधयः सर्वे सुखाविस्फोटकादयः ।  
 स्वाधरं जङ्गमं चैव कुत्रिमं चापि यद्विषम् ॥४८॥

कर केला है वह पुत्रपुत्र पुष्पीयर पुष्पनाथित मर्याद ऐश्वर्यका माली  
 होता है ॥ ४४-४५ ॥ कवचते सुखित मनुष्य निर्मय हा जाता है । पुष्पम  
 उत्तरी परकम नहीं होती तथा वह लीनी जीवित पुष्पीयर होता है ॥ ४५ ॥  
 देवीका वह कवच देवताओंके शिष्ये भी दुर्लभ है । जो प्रतिदिन  
 निरन्तरुर्ग लीनी लम्प्यमाके लम्प्य भद्राके लम्प्य इतक पठ करता है  
 उत देवी कवच प्राप्त होती है तथा वह लीनी जीवित नहीं भी पठित  
 नहीं होता । इतना ही नहीं वह वर्णमनुत्तमे खित हो लीने भी अधिक  
 वर्णमनुत्तमे रहता है ॥ ४६ ४७ ॥ मर्त्य जेवक और जेवक आदि  
 उत्तरी लम्प्य व्याधियों नष्ट हो जाती हैं । कनेर, मांग, कनीम, ब्यूरे  
 आदिना व्याधय रिय सोंग और विष्णु आदिके वादनेसे कहा हुआ जङ्गम  
 किताब आदिना और लम्प्य लम्प्य आदिके कनेरनाम कुत्रिम किम—ये सभी  
 प्रकारके रिय दूर हो जाते हैं उनका कोई भगर नहीं होता ॥ ४८ ॥

अतः सद्यः लम्प्य भद्रि यह विष्णु लम्प्य वर्ण आदिके होवेनाम  
 मनुष्ये वास्तव्य रहते हैं ।

अमिधाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले ।  
 भूचरा खेचराश्चैव जलजाभापदेक्षिका ॥४९॥  
 सङ्ख्या कुलजा माला डाकिनी धाकिनी तथा ।  
 अन्तरिक्षचरा घारा डाकिन्यश्च महाबला ॥ ५० ॥  
 ग्रहभूतपिशाचाश्च यथगन्धर्वराक्षसाः ।  
 ब्रह्मराक्षसवेतन्ताः कूष्माण्डा भैरवादय ॥ ५१ ॥  
 नश्यन्ति दर्शनायस्य कवचं हृदि सस्मिते ।  
 मानाभतिर्मवेव राष्ट्रस्तेषां हृदि करं परम् ॥ ५२ ॥  
 यश्च सा वर्द्धत सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले ।  
 जपत्सप्तशतीं षण्ठीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥ ५३ ॥

इस पृष्ठीय अक्षर-मोहन आदि अनेक आध्यात्मिक प्रयोग होते हैं तथा इन प्रकारके अनेक मन्त्र, यन्त्र होते हैं वे सब इस कवचको हृदयमें धारण कर मन्त्र मनुष्यको देवता ही नष्ट हो जाते हैं । ये ही महीं पृष्ठीय विष्णुनेश्वर आनन्दकृष्ण आचार्यचारी देवगिरीय अनेक तन्त्रान्तर्गत अनेक इनेश्वर गण उदयेश्वरान्ते निद्रा इनेश्वरान्ते निम्नश्रेष्ठिके देवता, अनेक अन्तर्गत नाभ प्रवृत्त इनेश्वर देवता कुलदेवता माध्य ( कण्ठमध्य आदि ), डाकिनी धाकिनी अन्तर्गच्छमे विष्णुनेश्वरी अक्षय्य बलवता भयानक शक्तिनिर्वाहक भूत पिशाच वरुण मन्त्रवर्ष पालन ब्रह्मराक्षस भैरव कूष्माण्ड और भैरव आदि अनिष्टकारक देवता भी हृदयमें कवच धारण किये गृहेश्वर उन मनुष्यको देवता ही मान्य होते हैं । कवचधारी पुरुषको धाम्ने लम्पान हृदि प्राप्त दायी दे । पर कवच मनुष्यके श्रेष्ठी हृदि करनेश्वर और उत्तम दे ॥ ४९-५२ ॥ कवचका पाठ करनेश्वर पुरुष भव्ती कीर्तिमे विभूजित भूतचर भवने भूतान्ते भाव-भाव वृत्ति। प्राप्त होता है । जो पदक कवचका पाठ कवच

यावद्भूमण्डलं षष्ठे सद्यैलवनकाननम् ।  
 तावत्पिष्टति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रिकी ॥ ५४ ॥  
 देहान्ते परमं म्यानं यत्सुररपि दुर्लभम् ।  
 प्राप्नोति पुरुषा नित्यं महामायाप्रसादतः ॥ ५५ ॥  
 लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ॥ ॐ ॥ ५६ ॥  
 इति देव्याः कथं सम्पूर्णम् ॥ १ ॥

अथार्गलास्तात्रम

ॐ कल श्रीमार्गकमलप्रमन्थन विष्णुर्वाणिः अनुकुप् कम्प  
श्रीमद्वाङ्मयीर्देवता श्रीमद्गुण्वाणीदेवताकलीबाबाकृतैव अरे निविद्योगः ॥

ॐ नमःशशिभ्यः ॥

**मार्कण्डेय उवाच**

ॐ वयन्ती मन्त्रा काली मन्त्राणी कपालिनी ।

उत्तरे बाहू उत्तराणी जगदीश पाठ करता है उत्तरी जनपद का पर्वत और जामनोत्तरित यह पृष्ठी दिशि जाती है उत्तरक यहाँ पुत्र-पौत्र जन्मि उत्तमनरमय बनी जाती है ॥ ५३ ५४ ॥ फिर देहका मन्त होकर यह पुत्र्य भयवती महाभाजके प्रशस्तते उत निज परम परमो प्रप्त होय है जो देवप्रभोके विषे भी दुर्लभ है ॥ ५५ ॥ यह शुम्भर विष्णु रूप धारण करता और कश्यपमय विष्णुके साथ जगन्महेश भायी होय है ॥ ५६ ॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

मार्कण्डेयजी कहते हैं—जबोती महुँका, दोती

कल्पति नलोत्पत्तेन कति हि। 'कल्पनी'—उत्पत्तेः अङ्गत्वं परं निश्चय-  
कल्पिणी। मन्त्र कनाममरणाधिक्यं उत्पन्नं कालानां कल्पि गृह्यति न्यस्यति वा तत्र मन्त्र-  
योगादया—यो नपते नलोत्पत्तेः कल्प मरणं न्याति संश्रयकल्पनात् कूरं करोतीति, कल योग-  
दायिनी मन्त्रकल्पनीतिर्वाता नाम 'मन्त्रकल्प' इति। ६ कल्पति मन्त्रकल्पि मन्त्रकल्पने उत्पन्नं हि।

दुर्गाक्षमा शिवा भात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

अयं त्वं देवि वामुण्डं अयं मृतार्तिहारिणि ।

अयं सर्वगते देवि काष्ठरात्रि नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

मधुकैमनिद्राविषिभासृवरदे नमः ।

रूपं दहि अयं दहि यशो देहि द्विपो जहि ॥ ३ ॥

मङ्गलार्थः, कर्गस्थिनीः, दुर्गा, कर्म, शिरो, वीर्यं स्वाहा और स्वधा—  
इन नामोंसे प्रसिद्ध काष्ठरात्रिके । तुम्हें मेरा नमस्कार हो । देवि वामुण्डे ।  
तुम्हारी कृपा हो । तम्पूबं प्राणियोंकी पीड़ा हरनेवाली देवि । तुम्हारी  
कृपा हो । तबमें व्यास खनेवाली देवि । तुम्हारी कृपा हो । काष्ठरात्रि । तुम्हें  
नमस्कार हो ॥ १-२ ॥ मधु और कैमको मारनेवाली तथा ब्रह्माक्षीको  
वरदान देनेवाली देवि । तुम्हें नमस्कार है । तूम मुझे कृपा ( व्यासस्वकृपा  
आन ) दो, अय ( मोहपर विजय ) हो कष्ट ( मोह-विजय तथा ज्ञान-प्राप्तिकृपा कष्ट )

काष्ठी—जो मन्त्रजालमें सम्पूर्ण शक्तियों का नाम माना गया है, वह 'काष्ठी' है ।

१ अयं मङ्गलं तुल्यं वा कर्मवति लीकरोति बलेन्यो दानुम् इति मङ्गलानी  
तुल्यमय—जो करने वालीको देनेके लिये हो मङ्गल, तुल्य मिला मङ्गल लीककर करती है, वह  
'मङ्गलानी' है । २ काम्ये कष्टक तथा वनेमें सुखाग्रयण पारण करनेवाली । ३ दुर्गेव  
काष्ठरात्रिकर्मोपलक्षणमेव कर्गस्थि नमस्ते मङ्गले वा स्य दुर्गे—जो काष्ठरात्रिके कर्म  
द्वयं कष्टकमङ्गलं दुर्गाय नमः मङ्गले मङ्गलं दानुम् इति, वे काष्ठरात्रिके 'दुर्गा' कहलाती  
है । ४ काम्ये सहते मङ्गलकर्म, काम्ये वा सर्वावपराबाधं कृततीति मङ्गलकर्म  
मङ्गलभावादिनि श्रुत्य—सम्पूर्ण कष्टकारी काम्यी होनेसे कष्टक कष्टकमङ्गल काम्य  
होनेके कारण जो मर्त्य काम्यी दुर्गते भा मारे कष्टक कष्ट करती है कष्टक  
मङ्गल 'काष्ठी' है । ५ तत्काल शिवा कर्गस्थि पारण करकेकाष्ठी कष्टकमङ्गले मङ्गल  
है । ६ सम्पूर्ण मङ्गलकी पारण करकेकाष्ठी कष्टक मङ्गल 'काष्ठी' है । ७ लङ्गा-  
कर्मसे ब्रह्मणा ग्रहण करके देवतामङ्गल पारण करनेवाली । ८ कष्टकमङ्गले मङ्गल  
और लङ्गामें लीककर करके पितरोंका पारण करनेवाली ।



मद्विपानुरनिणाशि भक्तानां मुक्तादे नम ।  
 रूपं देहि जयं देहि यथा देहि द्विपा अहि ॥ ४ ॥  
 रक्तपीञ्जवधे देवि कण्डमुण्डविनाशिनि ।  
 रूपं देहि जयं देहि यथा देहि द्विपा अहि ॥ ५ ॥  
 शुम्भस्यैव निशुम्भस्य भूमाक्षस्य च मर्दिनि ।  
 रूपं देहि जयं देहि यथा देहि द्विपा अहि ॥ ६ ॥  
 पन्दिताह्मिपुगे देवि सर्वसामाम्बदाशिनि ।  
 रूपं देहि जयं देहि यथा देहि द्विपो अहि ॥ ७ ॥  
 अचिन्त्यरूपपरिते सर्वशत्रुविनाशिनि ।  
 रूपं देहि जयं देहि यथा देहि द्विपा अहि ॥ ८ ॥  
 नतैर्म्य सर्वदा मक्त्वा यच्छिक्त दुरितापहे ।

हो और काम-बोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ ४ ॥ मदीयानुरक्त मन्त्र  
 करनेवाली तथा भक्तोंकी वृत्त देनेवाली देवि । तुम्हें नमस्कार है । तुम कम  
 हो जब हो क्या हो और काम-बोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ ४ ॥  
 रक्तपीङ्गला जब और कण्ड-मुण्डका विनाश करनेवाली देवि । तुम कम हो  
 जब हो क्या हो और काम-बोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ ५ ॥ शुम्भ  
 और निशुम्भ तथा भूमाक्षोपनश मर्दिन करनेवाली देवि । तुम कम हो जब हो  
 क्या हो और काम-बोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ ६ ॥ लम्बे हाथ  
 शक्तियुक्त पुराण करणोंवाली तथा समूर्ण जैमात्य प्रदान करनेवाली देवि ।  
 तुम कम हो जब हो क्या हो और काम-बोध आदि शत्रुओंका नाश  
 करो ॥ ७ ॥ देवि तुम्हारे कम और परित्र अफिन्त्य हैं । तुम  
 समस्त गजजघा नाश करनेवाली हो । कम हो जब हो क्या हो और  
 काम-बोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ ८ ॥ पार्थिवो दूर करनेवाली  
 शक्तिदे अ नान्यकथ तुम्हारे करणोंमें सर्वदा यच्छिक्त कृपाये हैं

रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विपा जहि ॥ ९ ॥  
 स्तुक्कम्पा मक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि ।  
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विपो जहि ॥ १० ॥  
 चण्डिके सततं ये त्वामचमन्तीह भक्तितः ।  
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विपो जहि ॥ ११ ॥  
 देहि मां माग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् ।  
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विपो जहि ॥ १२ ॥  
 विवेहि द्विपतां नाशं विवेहि षष्ठमुष्कः ।  
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विपो जहि ॥ १३ ॥  
 विवेहि देवि कल्याणं विवेहि परमां भियम् ।  
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विपा जहि ॥ १४ ॥  
 सुरासुरशिरोरत्ननिपुष्टचरणेऽम्बिके ।

उन्हें रूप दो जय हो यश हो और उनके काम-शेष आदि धनुर्मोक्ष नाश  
 करो ॥ ९ ॥ रोषोक्तनाश करनेवाली चण्डिके । जो मक्तिपूर्वक तुम्हारी स्तुति  
 करते हैं उन्हें रूप दो, जय हो यश हो और उनके काम-शेष आदि धनुर्मोक्ष  
 नाश करो ॥ १० ॥ चण्डिके । इस मंत्रमें जो मक्तिपूर्वक तुम्हारी पूजा करते  
 हैं उन्हें रूप दो जय हो यश हो और उनके काम-शेष आदि धनुर्मोक्ष  
 नाश करो ॥ ११ ॥ मुझे शोभाय और भाग्य हो । परम सुख हो काम  
 हो, जय हो यश हो और मेरे काम-शेष आदि धनुर्मोक्ष नाश  
 करो ॥ १२ ॥ जो मुझसे द्वेष रखते हैं उनका नाश और मेरे वन्द्यी बुद्धि  
 कर । रूप दो जय हो यश हो और मेरे काम-शेष आदि धनुर्मोक्ष नाश  
 करो ॥ १३ ॥ देवि ! मेरा कल्याण करो । मुझे उत्तम सम्पत्ति प्रदान करो ।  
 रूप दो जय हो यश हो और काम-शेष आदि धनुर्मोक्ष नाश करो ॥ १४ ॥

अम्बिके । देवता और असुर दोनों ही अपने मापेके  
 मुकुटकी मणिबीबी तुम्हारे चरणोंपर पिनते रहते हैं ।

रूपं देहि अयं देहि यशो देहि द्विपा जहि ॥१५॥  
 विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जर्न कुरु ।  
 रूपं देहि अयं देहि यशो देहि द्विपो जहि ॥१६॥  
 प्रपण्डितस्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे ।  
 रूपं देहि अयं देहि यशो देहि द्विपा जहि ॥१७॥  
 चतुर्भुजे चतुर्बलसंस्तुते परमेश्वरि ।  
 रूपं देहि अयं देहि यशो देहि द्विपो जहि ॥१८॥  
 कृष्णेन संस्तुते देवि लम्पटकस्या सदाशिवे ।  
 रूपं देहि अयं देहि यशो देहि द्विपा जहि ॥१९॥  
 हिमाचलसुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि ।  
 रूपं देहि अयं देहि यशो देहि द्विपा जहि ॥२०॥  
 इन्द्राग्नीपतिसद्भाष्यभिते परमेश्वरि ।

तुम रूप हो अयं हो यश हो और काम-क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ १५ ॥ अग्नि मरुत्तको विहाय, चण्डी और लक्ष्मी-  
 वाद बनाओ तथा रूप हो अयं हो यश हो और उनके काम-  
 क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ १६ ॥ प्रपण्डितोंके दर्पना दहन  
 करनेवाली चण्डिके ! मुक्त शरणागतको रूप हो अयं हो यश हो और  
 मेरे काम क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ १७ ॥ चतुर्भुज ब्रह्माग्नि-  
 द्वारा प्रसन्नित तार मुखाधारिणी परमेश्वरि ! रूप हो अयं हो यश हो और  
 काम क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ १८ ॥ देवि अम्बिके ! मय्यान्  
 विष्णु नित्य निरन्तर भक्तिपूर्वक पुण्यारी स्तुति करते रहते हैं । तुम रूप हो  
 अयं हो यश हो और काम-क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ १९ ॥  
 हिमाचल-कन्या पार्वतीके पति महादेवजीके द्वारा प्रसन्नित होनेवाली परमेश्वरि !  
 तुम रूप हो अयं हो यश हो और काम-क्रोध आदि शत्रुओंका नाश  
 करो ॥ २० ॥ राक्षसीपति इन्द्रके द्वारा मत्ताने पुष्पि होनेवाली परमेश्वरि !

रूपं देहि ज्यं देहि यज्ञो देहि द्विपो जहि ॥२१॥

देवि प्रवण्डदोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनि ।

रूपं देहि ज्यं देहि यज्ञो देहि द्विपो जहि ॥२२॥

देवि मक्तवनोदामदधानन्दोदयऽम्बिके ।

रूपं देहि ज्यं देहि यज्ञो देहि द्विपो जहि ॥२३॥

पत्नी मनोरमा देहि मनोहृत्तानुसारिणीम् ।

वारिणी दुर्गसंसारसागरस्य कुलान्द्रुषाम् ॥२४॥

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः ।

स तु सप्तशतीसंख्यानरमामोति सम्पदाम् ॥२५॥

इति देव्या अर्गसप्तोपनिषद् सम्पूर्णम् ।

तुम रूप हो, ज्य हो यज्ञ हो और काम-क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ २१ ॥ प्रवण्ड सुबहवाले देवीका समण्ड चूर करनेवाली देवि । तुम रूप हो ज्य हो यज्ञ हो और काम-क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ २२ ॥ देवि अम्बिके । तुम अग्ने मक्तवनोको लक्ष्मी मानन्द प्रधान करती रहती हो । तुम रूप हो ज्य हो यज्ञ हो और मेरे काम क्रोध आदि शत्रुओंका नाश करो ॥ २३ ॥ मनकी हृत्काके अनुसृत पत्नीराणी मनोहर पत्नी प्रधान करो जो दुर्गम संसारसागरसे छाननेवाली तथा उच्चम कुम्भी उत्तम गृह हो ॥ २४ ॥ ओ मनुष्य इत स्तोत्रका पाठ करके सप्तशतीकरी महास्तोत्रका पाठ करता है वह सप्तशतीकी अक्ष-संख्यासे मित्रनेवाले भोऽ कृष्णको प्राप्त होता है । साथ ही वह प्रभुर सम्पत्ति भी प्राप्त कर सेवा है ॥ २५ ॥

## अथ कीलकम्

ॐ अथ कीलकप्रमाणस्य शिव शक्तिः अनुष्ठानं कृत्वा श्री महासरस्वती देवता कीलकादम्भातीत्यर्थं सप्तशतीपाठादित्येव उपेक्षितयोगः ।

ॐ नमश्चिदायै ॥

मार्कण्डेय उवाच

ॐ विश्वद्वयानन्देभ्यः त्रिवेदीदिभ्यश्चक्षुषे ।

भेयः प्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे ॥ १ ॥

सर्वमेतद्विज्ञानीयान्मन्त्राणाममिकीलकम् ।

सोऽपि क्षममवाप्नोति सततं आप्यतत्परः ॥ २ ॥

सिद्धयन्त्युवाटनादीनि वस्तुनि सकलान्यपि ।

एतेन स्तुक्ता देवी स्तोत्रमात्रेण सिद्धयति ॥ ३ ॥

ॐ चण्डिकादेवीको नमस्कार है ।

मार्कण्डेयजी कहत हैं—विष्णु वन ही जिनका शरीर है वीनों केर ही जिनके तीन दिग्ग नेत्र हैं वो कल्याण प्राप्ति के हेतु हैं तथा अपने मन्त्ररूप अर्धचन्द्रका मुकुट धारण करते हैं उन महाशक्ति के नमस्कार है ॥ १ ॥ मन्त्रोंका जो अमिकीलक है अर्थात् मन्त्रोंकी सिद्धिमें किन उपस्थित करनेवाले शायस्त्री कीलकका जो निगारण करनेवाला है उक्त सप्तशतीस्तोत्रको सम्पूर्णक्रमसे जानना चाहिये ( और जानकर उक्तकी उपासन करनी चाहिये ) क्योंकि सप्तशतीके अतिरिक्त अन्य मन्त्रोंके जगमें भी जो निरुत्तर कथ्य रहता है वह भी कल्याणकर मांगी होता है ॥ २ ॥ उक्तकी उपादन यदि कर्म सिद्ध होते हैं तथा उक्त भी समस्त दुर्कर्म बलुर्भीकी प्राप्ति हो जाती है। तथापि जो अन्य मन्त्रोंका जप न करके केवल इस सप्तशती नामक स्तोत्रसे ही देवीकी स्तुति करते हैं उन्हें स्तुतिमात्रसे ही लब्धिरानन्दस्वरूपिणी देवी सिद्ध हो जाती

न मन्त्रो नौषध तत्र न किञ्चिदपि विद्यते ।  
 विना आप्येन सिद्धयेत सर्वसुखाटनादिकम् ॥ ४ ॥  
 समग्राप्यपि सिद्धयन्ति लोकशङ्कामिमां हरः ।  
 कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं क्षुमम् ॥ ५ ॥  
 स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः ।  
 समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथावभियन्त्रयाम् ॥ ६ ॥  
 सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न संशयः ।  
 कृप्यात्मा वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहित ॥ ७ ॥

है ॥ १ ॥ उन्हें अपने कार्यकी सिद्धिके लिये मन्त्र बीजवि तथा मन्त्र किन्ती  
 साधनके उपयोगकी आवश्यकता नहीं रहती । विना आपके ही उनके उपादन  
 आदि अमर्याद व्याप्तिकारिक कर्म सिद्ध हो जाते हैं ॥ ४ ॥ इतना ही नहीं उनकी  
 सम्पूर्ण अमीश बस्तुएँ भी सिद्ध होती हैं । लोगोंके मनमें यह शङ्का थी कि  
 जब केवल सप्तशतीकी उपाधनासे भगवा सप्तशतीकी छैदकर अन्य मन्त्रोंकी  
 उपाधनासे भी समान रूपसे सब कार्य सिद्ध होते हैं तब इनमें भेद कौन-सा  
 लक्ष्य है ? लोगोंकी इस शङ्काको समझे रखकर महाबाहू शङ्करने अपने ध्यान  
 भावे हुए विश्वसुभोंको समझाया कि यह सप्तशतीनामक सम्पूर्ण स्तोत्र ही  
 सर्वभेद एवं कल्याणमय है ॥ ५ ॥

तदनन्तर भगवती चण्डिकाके सप्तशतीनामक स्तोत्रको महादेवजीने  
 गुप्त कर दिया । सप्तशतीके पाठसे जो पुण्यप्राप्त होता है उसकी कभी समाप्ति  
 नहीं होती । किन्तु अन्य मन्त्रोंके बराबर पुण्यकी समाप्ति हो जाती है । अतः  
 महाबाहू पिछले अन्य मन्त्रोंकी अपेक्षा जो सप्तशतीकी ही श्रेष्ठताका निषेध  
 किया उसे बर्णन ही धनमा चाहिये ॥ ६ ॥ अन्य मन्त्रोंका व्यव करनेवाला  
 पुरुष भी यदि सप्तशतीके स्तोत्र और जपका अनुष्ठान कर ले तो वह भी  
 पूर्णरूपसे ही कल्याणका भागी होता है इसमें तनिक भी संशय नहीं है । जो  
 साधक कृप्य पक्षकी चतुर्दशी अथवा अष्टमीको एकाग्रचित्त होकर भगवती

ददाति प्रतिपृच्छति नान्यथैषा प्रसीदति ।  
 इत्थंरूपेण कीर्त्तेन महादेवेन कीर्त्तितम् ॥ ८ ॥  
 यो निष्कीलां विषायेनां नित्यं अपति संस्पृष्टम् ।  
 स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥ ९ ॥  
 न च्छाप्यतस्तस्य मयं कापीह जायते ।  
 नापमृस्युर्ध्वं याति मृता माधमपान्नुयात् ॥ १० ॥

कीर्त्तनामें अपना सर्वस्व समर्पित कर देता है और फिर उसे प्रत्यक्षरूपसे ग्रहण करता है। उसीपर मन्त्रादी प्रकट होती हैं। अन्यथा उनकी प्रकटता नहीं प्राप्त होती। ● इस प्रकार निम्नलिखित प्रतिबन्धकर्म कीर्त्तने द्वारा महादेवजीने इस लोकको कीर्त्तित कर रक्खा है ॥ ८-८॥ जो पूर्वोक्त छंदोंसे निम्नलिखित करके इस छंदवाली कोमला प्रतिबिम्ब स्पष्ट उच्चारणपूर्वक पाठ करता है वह मनुष्य सिद्ध हो जाता है। वही देवीका पारंग होता है और वही गन्धर्व भी होता है ॥ ९ ॥ सर्वत्र निचरते रहनेपर भी इस गन्धर्वमें उसे कहीं भी मय नहीं होता। वह अपमृत्युके कारण नहीं पड़ता तथा वह स्वर्गानेके अन्तर में स्थित

वह निम्नलिखित अथवा छंदोच्चारण ही निम्नलिखित प्रकार है। अन्यथा वह प्रकट नभुंछ निम्नलिखित देवीकी छंदमें उपलब्ध हो अन्यथा छंदोच्चारण वह वह क्षीत करने हुए वह प्रकटनिष्ठों प्रार्थना करे—जगत् । अन्तर्ध्वं वह सदा वह सदा अपने अन्तर्ध्वी में निम्नलिखित छंदमें प्रार्थना कर निम्नलिखित । अन्तर में तो तत्त्व नहीं रहता । फिर मन्त्रादी प्रकट करते हुए वह मन्त्रादी प्रकट कर रही है—  
 नमः । समस्त जगत्के निम्नलिखित तू मेरा वह प्रत्यक्षरूप वगैरहण कर । इस प्रकार देवीकी प्रकट छंदोच्चारण करके वह मन्त्रोच्चारण-वृत्तिसे प्रकट कर और सर्वज्ञको प्रकट करके मन्त्रादी प्रकट करते हुए वह देवीकी ही मन्त्रादी प्रकट रहे । वह मन्त्रादी-प्रकट-प्रकट प्रकट है । अन्तर्ध्वं मन्त्रादी प्रकट देवीकी प्रकट प्रकट होती है ।





इसके अनन्तर रात्रिगृह का पाठ करना उचित है। पाठके आरम्भमें रात्रिगृह और अन्तमें देवीगृहके पाठकी प्रिति है। मयौचकम्पका वचन है—

रात्रिगृहं पठेद्वाही मन्त्रे सप्तछतीम्बम् ।  
प्राप्ते तु पञ्चमीं द्वे देवीगृहमिति कथा ॥

रात्रिगृहके बाद त्रिभिषोय म्यात्र और स्नानपूर्वक नवार्चमन्त्रका जो करके सप्तछतीका पाठ आरम्भ करना चाहिये। पाठके अन्तमें पुनः त्रिभिषोय नवार्चमन्त्रका जो करके देवीगृहका तथा तीनों एहस्योय पाठ करना उचित है। कोरे-कोरे नवार्चमन्त्रके बाद रात्रिगृहका पाठ कछमसे है तथा अन्तमें भी देवीगृहके बाद नवार्चमन्त्रका औचित्य प्रतिपादन कछे है। किन्तु यह ठीक नहीं है। चिरम्बरसंहितामें कहा है—प्राप्ते नवार्चपुष्टि कृत्वा सोमं सप्तम्येत् । अर्थात् सप्तछतीका पाठ बीचमें हो और आदि-अन्तमें नवार्च मन्त्रे उक्तको सम्पुष्टि कर दिया जाय। कामन्दन्यमें यह बात अधिक स्पष्ट कर दी गयी है—

सप्तम्यौ सप्तं प्राप्ते त्रयेण्यन्त्रं नवार्चमन्त्र ।  
नवार्चं सप्तछतीं मन्त्रे सम्पुष्टीम्बपुराणतः ॥

अर्थात् अग्नि और अन्तमें ती-ती बार नवार्च-मन्त्रका जो करे और मध्यमें सप्तछती पुष्पका पाठ करे। यह सम्पुष्ट कहा गया है। यदि अग्नि अन्तमें रात्रिगृह और देवीगृहका पाठ हो और उसके पहले एक अन्तमें नवार्च-मन्त्र हो तो वह पाठ नवार्च-सम्पुष्टि नहीं कहा जा सकता। क्योंकि त्रिभिषोयपुष्ट हो उसके मध्यमें अन्य प्रकारके मन्त्रका प्रवेश नहीं होना चाहिये। यदि बीचमें रात्रिगृह और देवीगृह रहेंगे तो वह पाठ उचित है सम्पुष्टि कहा जायगा। ऐसी रचनामें कामन्दन्य आदिके वचनोंमें तथ्य ही प्रिय होय। अतः पहले रात्रिगृह फिर नवार्च-मन्त्र फिर म्यात्रपूर्वक सप्तछती पाठ फिर त्रिभिषोय नवार्च मन्त्र फिर नवार्च देवीगृह एक एहस्योयका पाठ—यही क्रम ठीक है। रात्रिगृह भी दो प्रकारके हैं—वैदिक और छान्दिक। वैदिक रात्रिगृह आग्नेयकी आठ आचार्य हैं और छान्दिक तो शुर्गासप्तछतीके प्रथमान्वाक्यमें ही है। वहाँ दोनों दिने आते हैं। रात्रिके बादके प्रतिपादक मूलको रात्रिगृह कहते हैं। वह रात्रिदेवी को प्रणम्य है—एक सौवर्ग और वृष्टी ईश्वरपति। जीवरात्रि यही है जिसमें प्रतिदिन अन्तके साधारण और्ध्वम ध्वजस्त छत्र हीना है। वृष्टी ईश्वरपति वह है जिसमें नवार्च

अल्प व्यवहारका होय होता है; उगीको काष्ठरात्रि या महाप्रलम्भरात्रि कहते हैं। तब समय केवल बड़ा और उनही मावाद्यक्ति जिनमें अम्बुक्त प्रकृति रहते हैं, होय रहती है। 'सत्री अधिशात्री दधी मुबनेश्वरी' हैं। अत्रात्रिसूक्तसे उर्दीका स्थान होता है।

### अथ वेदार्क रात्रिसूक्तम् †

ॐ रात्री व्यस्यदायती पुरुषा देव्यक्षमिः । विश्वा अविभियाऽधित ॥ १ ॥

ओर्यप्रा अमर्त्या निवता दप्युद्धतः । ज्यातिषा याधते तमः ॥ २ ॥  
निठ स्वसारमस्कृतापसं दप्यायती । अपदु हासते तम ॥ ३ ॥  
सा नो अथ यस्या वयं नि से यामभविष्महि । वृधे न वसति वय ॥ ४ ॥

महत्त्वमदिरूप व्यापक इन्द्रियोंमें सब देखीमें तमस्त बस्तुभीकों प्रकाशित करनेवाली ये रात्रिकरा देखी अग्ने उत्तरक्ष किये हुए अस्तुके जीवोंके शुभाशुभ कर्मोंको विचारकरने करती है और उनके अनुरूप फलकी व्यवस्था करनेके लिये समस्त विभूतिवीकों धारण करती हैं ॥ १ ॥

ये देखी समस्त हैं और मगूर्ध्व दिशको नीचे पैम्बेरासी कृता आत्रिकों तथा ऊपर रहनेवाले वृष्टोंको भी व्याप्त करके स्थित हैं। इतना ही नहीं ये ज्ञानमयी ज्योतिमें जीवोंके अज्ञानान्धकारका नाश कर देती हैं ॥ २ ॥

परा निष्कलितरात्रिकदेखी आहार भानी बहिन अक्षयिदायकी तथा देखीको प्रकट करती हैं जिनमें अविद्यामय अन्धकार स्थित मरणा जाता है ॥ ३ ॥

ये रात्रिकदेखी हम समय मुक्तार प्रणम हो जिनके अन्तेर दयान्त अग्ने परोमें गुप्तमें मोठे हैं—टीक वेने ही जेन रात्रिके समय पधी वृष्टोंपर बनाये हुए भग्ने पौनलोमें गुप्तपुर्दक स्थान करते हैं ॥ ४ ॥

मदवाक्यमिध रात्रिः करेत्तन्मयीमयाः रात्रिवाग्देवी मुमुबनेयीमयि नमः

( देखीगंगा )

नि ग्रामात्सा अधिष्ठत नि पद्मन्ता नि पक्षिणः । नि श्वेना-  
सम्पिद्विनिः ॥ ५ ॥

यावया वृक्ष्यं वृक्षं यवय स्तेनमूर्ध्मे । अथा नः सुतरा मव । ६ ।  
उप मा पपिष्ठतमः कृष्णं ध्यक्तममित । उप शृणव यावया ७ ।  
उप ते गा इवाकरं वृषीप्य इदितर्विषः । रात्रि स्ताम न  
जिम्पुष ॥ ८ ॥

अथ तन्त्रार्क रात्रिस्तुम्

३० बिन्द्वेयरी जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ।

निद्रां मगधतीं बिष्णोस्तुलां तमसः प्रभुः ॥ १ ॥

उक्त कथनात्मनी रात्रिदेवीके अङ्क में सम्पूर्ण ब्रह्मात्मनी अनुप्य पेरीसे बलने-  
वाले नाम बोदे जादि फल पकसि उदयनवाले पत्नी एवं पतङ्ग आदि बिम्बी  
प्रत्येकनसे ब्रह्मा करनेवाले पक्षि और वाय आदि भी सुगपूर्वक मोते हैं ॥ ५ ॥

हे रात्रिमयी निष्कलित ! तुम वृष्य करके ब्रह्मात्मनी वृक्षी तथा पतमय  
वृक्षो हमने जल्य करो । नाम जादि उत्कर-नमुखाकमे भी बूर हटाओ ।  
उदयनतर हमने बिबे सुगपूर्वक करने योग्य हो बाधो—मोटरात्रिनी एवं  
कस्तूर्यकारिणी बन जाओ ॥ ६ ॥

६ उप्य ! ६ रात्रिकी अधिष्ठानी देवी । नव ओर पैछ हुवा वह  
अस्त्रमय काला अन्धकार मेरे निकट आ पकस्य है । तुम ऐसे शृङ्गरी मूर्ति  
बूर करो—जैसे बन देवर अपने भर्त्ताके शृङ्ग बूरकछी हो उभी प्रकार  
रान देकर इत मगधनो भी हटा हो ॥ ७ ॥

हे रात्रिदेवी ! तुम वृष्य देनेवाली गौके समान हो । मैं तुम्हारे गभीर  
आवर स्तुति जादिसे तुम्हें अपने अनुकूल करता हूँ । परम ध्याम्यरूप  
परमाध्यक्षी डनी । तुम्हारी वृष्यसे मैं काम जादि अनुभोको भीत पुनः हूँ  
तुम भोजकी मूर्ति मेरे इत हविष्यको भी ग्रहण करो ॥ ८ ॥

इत्यादि अर्थ आत्मनीके जयन कथनात् (इह ७ से देवर ६ तक) में देखिये ।

महोवाच

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वपदकारः स्वरात्मिका ।  
 सुधा त्वमश्चरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ २ ॥  
 अर्धमात्रास्थिता निस्था यानुधार्या विक्षेपतः ।  
 त्वमेव सप्त्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥ ३ ॥  
 त्वयैतद्वार्यते विश्वं त्वयैतत्सुन्यते जगत् ।  
 त्वयैतत्पात्यते देवि त्वमस्मन्तं च सर्वदा ॥ ४ ॥  
 विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ।  
 तथा संहतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ५ ॥  
 महाविद्या महामाया महामेधा महास्पृतिः ।  
 महामोहा च भवती महादेषी महामुरी ॥ ६ ॥  
 प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ।  
 कालगत्रिर्महारात्रिमोहरात्रिश्च ढारुणा ॥ ७ ॥  
 त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं द्वीस्त्व बुद्धिर्बोधलक्षणा ।  
 लला पुष्टितथा तुष्टिस्त्वं शान्तिं शान्तिरेव च ॥ ८ ॥  
 स्वप्तिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।  
 क्षुप्तिनी चापिनी बाणशृङ्गुष्ठी परिधायुधा ॥ ९ ॥  
 सौम्या सौम्यतराक्षेपसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ।  
 परापरान्तां परमा त्वमेव परमेष्ठी ॥ १० ॥  
 यद्य किञ्चित् कचिद्वस्तु सप्तमदास्मिन्नात्मिकम् ।  
 तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥ ११ ॥  
 यथा त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यपि या जगत् ।  
 माऽपि निद्रावशं नीत कस्यां स्नातुमिद्वेश्वरः ॥ १२ ॥  
 विष्णु धरीग्रहणमदभीमान एव च ।

कारितास्तं यथाऽतस्त्वां कः स्तुतुं शक्तिमान्मवेत् ॥१३॥

सा त्वमिदं प्रमादः स्वरुदारदेवि सस्तुता ।

माहयैतां दुराधपावसुरा मधुकैमा ॥१४॥

प्रबोधं च अगत्यामी नीमतामभ्युता लघु ।

वाचध क्रियतामस्य हन्तुमेतां महासुरा ॥१५॥

इति शक्तिप्रणमः

श्रीदध्यधर्षधीर्षम्

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्युः कासि त्वं महादेवीति ॥१॥

साम्रवीत्—अहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं  
जगत् । शून्यं चाशून्यं च ॥ २ ॥

अहमानन्दानानन्दी । अहं विज्ञानाविज्ञाने । अहं ब्रह्माब्रह्मणी  
वेदितव्य । अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि । अहमस्मिन् जगत् ॥३॥

ॐ उमी देवता देवीके उमीय गये और नानाते पूजने  
क्ये—दे भगदेवि । तुम जैन हो ॥ १ ॥

उत्तमे कहा—मैं ब्रह्मस्वरूप हूँ । मुझने प्रकृतिपुरुषात्मक स्वरूप और  
अस्वरूप जगत् उत्पन्न हुआ है ॥ २ ॥

मैं मानन्द और अनानन्दरूपा हूँ । मैं विज्ञान और अविज्ञानरूपा  
हूँ । जगत्स्य ज्ञाननेयोग्य ब्रह्म और अज्ञान भी मैं ही हूँ । पञ्चीकृत और  
अपञ्चीकृत महाभूत भी मैं ही हूँ । यह जगत् सब जगत् मैं ही हूँ ॥ ३ ॥

जब वही कर्माविधि देवकर्मधीर्षं भिन्न जगत् है । कर्मविधिमें सम्पत्ति नहीं  
पहिल जगत्ही नहीं है । हमने जगत्में देवीकी कुछ चीज प्राप्त होती है । कर्म  
प्राप्तकी कर्मता अहं जगत्पर सम्पत्ति जगत्स्य वही जगत्ही नहीं हुआ है, जगत्ही वही  
जगत्हीजगत् जगत्स्य काकोने पूर्ण सम्पत्ति प्राप्त कर भिन्न जगत् तो बहुत बस जगत्  
ही सम्पत्ति है । जगत् कर्मकर्ममें हम जगत्हीजगत्के जगत् सम्पत्ति जगत्हीजगत् करने दे । जगत्  
है जगत्हीजगत्के जगत्स्य जगत्ही जगत्ही जगत्ही ।

वेदोऽहमवेदाऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अब्राहमनञ्चा  
हम् । अपमोर्षं च तिर्यक्चाहम् ॥ ४ ॥

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि । अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः । अहं  
मित्रावरुणाधुमौ बिभर्मि । अहमिन्द्रापी अहमग्निनाबुभौ ॥ ५ ॥

अहं सारं स्वष्टारं पूषर्षं भर्गं दधामि । अहं विष्णुमुरुक्रम  
प्रद्याणमुत प्रजापतिं दधामि ॥ ६ ॥

अह दधामि ब्रह्मिणं हविष्मते सुग्राभ्ये यजमानाय सुन्वत ।  
अह राष्ट्री सङ्गमनी बहूनां त्रिकितुपी प्रथमा यज्ञिमानाम् ।  
अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम यानिरप्स्वन्तः समुद्रे । य एव  
वेद । स देवी सम्पदमाप्नाति ॥ ७ ॥

वेद और अवेद मैं हूँ । विद्या और अविद्या भी मैं, ब्रह्म और अन्नञ्च  
(प्रकृति और तनते मित्र) भी मैं नीचे ऊपर अमर-बाल भी मैं ही हूँ ॥

मैं रुद्रों और वसुओंके रूपमें लंघार करती हूँ । मैं आदित्यों और  
विश्वदेवोंके रूपमें फिर करती हूँ । मैं मित्र और बरुण दोनोंका इन्द्र एवं  
अग्नि और दोनों अग्निनाबुभौका अरुण-वर्ण करती हूँ ॥ ५ ॥

मैं नाम तथा पूषा और भर्गको धारण करती हूँ । वेत्सेवबद्ध  
आग्रस्त करनेके लिये विष्णुके पाहलेय करनेवाले विष्णु प्रजापति और  
प्रजापतिसे मैं ही धारण करती हूँ ॥ ६ ॥

इसको इक्ष्म हविर्षानेयक और गोमरम निधमनेयके ब्रह्मपान-  
के लिये इन्द्रिभ्यो मुक्त धन धारण करती हूँ । मैं गन्धर्वों की ईश्वरी  
उत्तमकीको धन देनेवाली प्रद्यम्न और बगहमि (पञ्चन करने योग्य  
देवोंमें) मुख्य हूँ । मैं आग्रमन्त्रकार आवाणादि निर्मात्र करती हूँ । मेरा  
स्वप्न अग्रमन्त्रकारों धारण करनेवाली बुद्धिहविर्ष दे । अब दन प्रद्यार  
अनञ्च दे व देवी नन्दति नम करणा दे ॥ ७ ॥

त देवा अक्षुषन्—नमा देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं  
नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै निमताः प्रयताः स ताम् ॥ ८ ॥

तामभिधर्णा तपसा कृतन्ती  
वैरागिनी कर्मफलपु शुभाम् ।

दुर्गा वशी धरण प्रपद्य-  
महसुराभाक्षयि- ये ते नमः ॥ ९ ॥

वशी वाचमजनयन्ता देवा-  
स्तां विश्वरूपाः पद्मसो वदन्ति ।

सा न मन्त्रेपमूर्धं दुहाना  
धेनुर्बागसालुप सृष्टुतेत ॥ १० ॥

कालरात्री प्रहस्तुता वैष्णवी स्कन्दमातरम् ।

सुरस्वतीमदिति दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् ॥ ११ ॥

कम उत देवीने कहा देवीनी नमस्कार है । वह-वहोको अपने-अपने  
कर्तव्यों प्रवृत्त करनेवाली कल्याणकारीको तथा नमस्कार है । शुचलम्प-  
बलाकरिणी महाम्मावी देवीको नमस्कार है । निम्नकुल होकर हम उन्हें  
प्रणाम करते हैं ॥ ८ ॥

उन जामिने-ते सर्ववाणी ज्ञानसे सम्माननेवाली शीतिमयी कर्मफल-  
प्रसिद्धि हेतु भक्ति की अनेकवाली सुमहेश्वरी हम धारणमें हैं । अमुरोंका मन्त्र  
करनेवाली देवि ! तुम्हें नमस्कार है ॥ ९ ॥

मात्राध्य देवीने जिन प्रजाधामन वैष्णवी वाणीको उत्पन्न किया, उसको  
अनेक प्रकारके प्राणी जीवते हैं । वह नामधेनुमुख बालम्बराजकी और भद्र  
तथा बल देनेवाली वाग्मपिणी समक्षी उत्तम सुतिते सर्वेश्वरी होकर हमारे  
जनीन भाषे ॥ १० ॥

कामना भी प्राप्त करनेवाली वैशीष्णवा लाल हुई विष्णुपति  
स्कन्दमता ( शिवपति ) नरम्माटी ( महापति ) वैष्णवा अरिषि और





एषाऽऽत्मशक्तिः । एषा विश्वमाहिनी । पादाङ्गुष्ठयनु  
बाणधरा । एषा भीमहाविधा । य एव वेद स शार्ङ्ग  
तरति ॥ १५ ॥

नमस्ते अस्तु मगपति मातरसान् पाहि सवंतः ॥ १६ ॥

सैपार्थी वसवः । सैर्पक्षादक्ष रुद्राः । सैपा इन्द्रा-  
दित्याः । सैपा विश्वेदेवाः सामपा असोमपाव । सैपा मातृबाना  
असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षाः सिद्धाः । सैपा सत्त्वरजस्तमांसि ।  
सैपा अश्वपिप्पुल्लरूपिणी । सैपा प्रजापतीन्द्रमन्त्राः । सैपा  
ग्रहनक्षत्रन्योतीपि । कलाकाष्ठादिकासरूपिणी । तामहं प्रणमि  
नित्मम् ॥

‘नित्यज्योतिषिकार्थे’ प्रथमं कथ्यते यत्तु है । इसी प्रकार ‘नित्यस्मरण’  
आदि प्रयोगों में इनके और भी अनेक अर्थ दिए गये हैं । अन्तिम भी वे अनेक  
प्रकारों से अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में  
हैं और कहीं कहीं प्रत्यक्ष-प्रत्यक्ष अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में  
अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में  
हैं । इससे यह अर्थ होना कि ये अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में अनेक अर्थों में  
और महत्त्वपूर्ण हैं । ]

ये परमात्मशक्ति हैं । ये विश्वमाहिनी हैं । पादा अङ्गुष्ठ यनु और  
बाण धारण करनेवाली हैं । ये भीमहाविधा हैं । जो देता अनेक दे  
हों को प्राप्त कर कर जाता है ॥ १५ ॥

ममज्योतिर्मयं नमस्कृतम् । माता तु मगपति इमां रक्षा करो ॥ १६ ॥

( मगपति शक्ति करते हैं— ) यही ये माता यनु हैं । यही ये एकात्म  
शक्ति हैं । यही ये शार्ङ्ग आदि हैं । यही ये योगदान करनेवाले और न करने  
वाले विश्वेदेव हैं । यही ये मातृबान ( एक प्रकारके राजा ) असुर  
राक्षस पिशाच यक्ष और सिद्ध हैं । यही ये सत्त्व-रज-तम हैं । यही ये अश्व  
पिप्पुल्लरूपिणी हैं । यही ये प्रजापति इन्द्र मन्त्र हैं । यही ये ग्रह नक्षत्र और

पापापहारिणीं देवीं मुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम् ।  
 अनन्तां विजयां श्रद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ॥ १७ ॥  
 वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् ।  
 अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ॥ १८ ॥  
 एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतयः श्रद्धयेतसः ।  
 ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्भुराक्षय ॥ १९ ॥  
 वाङ्माया ब्रह्मसूक्तमात् पृष्ठं वक्त्रसमन्वितम् ।  
 सूर्योऽवामधोऽग्निं नुसंयुक्तं पृथ्वीयकः ।  
 नारायणेन संमिता वायुश्चाधरयुक् ततः ।

छाते हैं। वही कर्म काट्यादि काट्यपिणी ॥ पाप नाश करनेवाली मोक्ष मोक्ष  
 देनेवाली अन्तरहित मित्र्यादिश्री, निर्दोष शरण देने वाली कल्याण-  
 दात्री और महाकल्पिणी उन देवीको हम सदा प्रणाम करते हैं ॥ १७ ॥

विस्तार—आराध ( १ ) तथा ईं कारते युक्त वीतिहोत्र—अग्नि  
 ( २ ) उचित अर्धचन्द्र ( ३ ) से अलङ्कृत जो देवीका बीज है वह लज्जा  
 मनोरम पूर्ण करनेवाला है। इस प्रकार इस एकाक्षर ब्रह्म ( ४ ) का ऐसे  
 यदि ध्यान करते हैं किन्तु चित्त शुद्ध है जो निरुच्छिन्नानन्दपूर्ण है और  
 जो स्मरण के लक्षण है। ( यह मन्त्र देवीप्रणव मान्य जाता है। ईश्वरके  
 समान ही यह प्रणव भी व्यापक अर्थसे मर्यादित है। उपेक्ष्यते इत्यत्र  
 अर्थ इच्छा-क्षण किया जाय। अर्धेन्द्र-अर्धचन्द्र गणितानन्द समरसीयुक्त विज  
 योक्तिस्वरूप है। ) ॥ १८ १९ ॥

वाणी ( १ ) माया ( २ ) ब्रह्म—काम ( ३ ) इसके आगे  
 कृता स्पष्टन अर्थात् य वही ब्रह्म अर्थात् आकाशसे युक्त ( ४ ) सूर्य  
 ( ५ ) अवामधो—दक्षिण वक्त्र ( ६ ) और नुसंयुक्त अनुभवासे  
 युक्त ( ७ ) द्वात्रिंशत् तीवरा ४ वही नारायण अर्थात् 'आ' से मिल  
 ( ८ ) वायु ( ९ ) वही अक्षर अर्थात् 'ये' से युक्त ( १० ) और

विष्णे नमार्णकाऽर्घ्यः स्वान्महदानन्ददायकः ॥ २० ॥

हरपुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसम्प्रभाम् ।

पाशाङ्कुशवरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् ।

त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुषां मजे ॥ २१ ॥

नमामि त्वां महादधीं महामयविनाशिनीम् ।

महातुर्गप्रद्युम्नीं महाकाठम्बकपिणीम् ॥ २२ ॥

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादया न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया ।

यस्या अन्ता न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता । यस्या कर्म नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या । यस्या खननं नोपलभ्यते

‘विष्णो’ यहनगार्गम्य तवात्मकीये मानन्द और ब्रह्माणुन्द देनेवाला है ॥ २० ॥

[ इन मन्त्रका अर्थ—हे शिवस्वमिणी महाहरत्वती । हे लक्ष्मी महाकम्बी । हे मानन्दकपिणी महाकाशी । अक्षयिणी पत्नेके जिनके हम उन कर्म तुम्हारा ज्ञान करते हैं । हे महाकम्बी महाकम्बी—महाहरत्वतीत्वकीये अक्षयि । तुम्हें ममत्कार है । अविष्यक्त रङ्गुनी इह इति को सोचकर मुझे डर करो । ]

इहमन्त्रके मन्त्रमें रहनेवाली प्रातःकाशीन सूर्यके समान प्रभावाली प्रातः और अद्भुतवाण करनेवाली मनीहर कम्बुवाली वरद और भयमकपुत्रा वरद जिनके ४० हाथवाली तीन नेत्रोंसे युक्त रक्तवस्त्र परिधान करनेवाली और रामधनन मयन मणिके मनोरम पूर्ण करनेवाली देवीको मैं भजता हूँ ॥ २१ ॥

महामयना नाथ हरत्रैवाली महामण्डकी शान्त करत्रैवाली औरमान् ब्रह्मवारी आभाय मणि कम महादेवीको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ २२ ॥

जिनका अक्षय ब्रह्मादिक नहीं जानते—इतकिये जिते अज्ञेया कहते हैं जिनका ज्ञान नहीं सकता—इतकिये जिते अमन्ता कहते हैं जिनका कर्म देग नहीं पड़ता इतकिये जिते अलक्ष्या कहते हैं जिनका ज्ञान लभ्यमें

तस्मादुच्यते अत्र । एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते  
एकः । एकैव विष्णुरूपिणी तस्मादुच्यते नैका । अत एवोच्यते  
अधोपानन्तालस्यात्रैका नैकेति ॥ २३ ॥

मन्त्राणां मातृका दधी शुद्धानां ज्ञानरूपिणी ।

ज्ञानानां चिन्मयासीताः शुन्यानां शून्यसाक्षिणी ।

यस्याः परतरं नास्ति संपा दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ २४ ॥

तां दुर्गां दुर्गमां दधीं दुराचारविधातिनीम् ।

नमामि मन्मथीसोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ॥ २५ ॥

इदमथर्वशीपं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमाप्नोति । इद-  
मथर्वशीर्षमप्राप्त्वा याऽर्चा स्थापयति—शतलक्षं प्रजप्त्वापि साऽ-  
र्चासिद्धिं न विन्दति । शतमष्टाक्षरं चास्य पुराणविधिः स्मृतः ।

मही मातृ—इत्यविरेजिते अत्र करते हैं जो मन्मथी ही तर्पत्र है—इत्यविरे-  
जिते अत्र करते हैं जो मन्मथी ही विष्णुर्षभे लगी हुई है—इत्यविरेजिते वैद्य  
करते हैं वह इत्यविरे अरेया अन्त्या अन्त्या अत्र उद्य और नैक  
कराती है ॥ २३ ॥

मन्त्राणां मातृका—मन्त्राणां मातृका इत्येवमिह शब्दोऽर्थः (अर्थ)  
करने करनेवाली इत्येवमिह विष्णुसाक्षिणी इत्येवमिह शून्यसाक्षिणी तथा चिन्ते  
और कुछ भी भेद नहीं है के दुर्गा नमो नमो है ॥ २४ ॥

उन दुर्गिन्त्रय दुर्गाकरनालक और मन्त्राणां मातृका इत्येवमिह शब्दोऽर्थः (अर्थ)  
देवीका । मन्मथी दया दुर्गा मन्मथी करती है ॥ २५ ॥

इत अधोपानं देवा आ अध्वर्यु परमा दे उने पाथो अधोपानं दे  
करता वन दान होन है । इत अधोपानं पा न करनार आ अधोपानन  
करता है वह देवी लगी अत्र करन भी अधोपान नही दान करता ।  
अधोपानन ( १ ६ कर ) का ( इत्य ६ ) इत्येव पुराणार्थः है ।

नैकलक्षणां ही १६ कर है १७ कर देव ही करन देव है ।

दशवारं पठन् यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते ।

महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः ॥ २६ ॥

सायमभीमाना दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरभीमाना रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रमुञ्जाना अपापो भवति । निशीमे तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्स्मिद्धिर्भवति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा उवतासाभिष्यं भवति । प्रातः प्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राधानां प्रतिष्ठा भवति । मौमाभिष्यां महादेवीमभिष्यां जप्त्वा महासृष्ट्युं तरति । स महासृष्ट्युं तरति । एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥

जो इतना इन बार पठ करछ है वह उली जप पापोंसे मुक्त हो जाता है और महादेवीके प्रसादसे बड़े दुर्गार तैकरीसे पार कर जाता है ॥ २६ ॥

इतना आर्चनाकी अभ्यसन करनेवाला दिनमें किये हुए पापोंका नाश करता है । प्रातःकालमें अभ्यसन करनेवाला रात्रिमें किये हुए पापोंका नाश करता है । दोनों समय अभ्यसन करनेवाला निष्पाप होता है । मन्त्रकी तुरीय० मन्त्राके समय जब करनेसे वाक्स्मिद्धि प्राप्त होती है । नवी प्रतिमा जब करनेसे वैष्णवाभिष्य प्राप्त होता है । प्राणप्रतिष्ठाके समय जब करनेसे प्राण की प्रतिष्ठा होती है । मौमाभिष्या ( जपुत्सिद्धि ) योगमें महादेवीकी तर्पि जब करनेसे प्रणामूलमे गर जाता है । जो इन प्रकार जपता है वह सृष्ट्युं तर जाता है । इस प्रकार यह अभिधानपद्धिनी अत्यविद्य है ।

दीपिकाके अष्टावलीके किये बार उल्लेखों आवश्यक हैं । एकमें तुरीय ल मन्त्राभिषि होती है

## अथ नवार्णविधि

इत प्रथम रात्रिपूर्व और देव्यपर्वशीर्षका पाठ करनेके पश्चात् निम्नाङ्कितरूपसे नवार्णमन्त्रके विनियोग न्यास और ध्यान आदि करे ।

श्रीगणेशसिंहपति । ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य महाविष्णुराज आचम्य साधुपुष्पिणमुद्रुमरुद्रमामि श्रीमहाकाश्रीमहाकश्यपीमहासरस्वती देवता, दे० श्रीगन्, हीं शक्तिः ह्रीं कीलकम्, श्रीमहाकाश्रीमहाकश्यपीमहासरस्वती श्रीलक्ष्म्ये कदे विनियोगः ।

इते पदंकर कथं सिद्धये ।

नीचे लिखे न्यासवाक्योंमेंसे एक-एकना उच्चारण करके दाहिने हाथकी अँगुलियोंसे क्रमशः शिरः, मुख, हृदय, गुण, दोनों करण और नाभि—इन अङ्गोंका स्पर्श करे ।

### श्रुत्यादिन्यासः

महाविष्णुराजविम्बो नमः शिरसि । राघवपुष्पिणमुद्रुमरुद्रोम्बो नमः मुखे । महाकाश्रीमहाकश्यपीमहासरस्वतीदेवताम्बो नमः, हृदि । दे० श्रीगन् नमः, गुह्ये । हीं शक्तये नमः पाश्र्वाः । ह्रीं कीलकाय नमः, वाय्वी ।

ॐ दे० हीं ह्रीं चामुण्डाये नित्ये—इत मूढमन्त्रसे हाथोंकी छुट्टि करके करन्यास करे ।

### करन्यासः

करन्यासमें हाथकी विभिन्न अँगुलियों हथेलियों और हाथके पृष्ठभागमें मन्त्रोंका न्यास ( न्यासन ) किया जाता है । इसी प्रकार मङ्गलान्तर्गत् हरबादि बाह्योमें मन्त्रोंकी स्थापना होती है । मन्त्रोंको पेटन और मूर्तिमान् मनकर उन-उन अङ्गोंका नाम लेकर उन मन्त्रमय देवताओंका ही स्पर्श और स्मरण किया जाता है ऐसा करनेसे पाठ वाचन करनेवाला स्वयं मानस्य होकर मन्त्र देवताओंका स्पर्श वा मुचलित हो जाता है । उनके बाहर-भीतरकी छुट्टि होती है दिव्य बल प्राप्त होता है और गायना निर्घिहतापूर्वक पूर्ण तथा परम कामदायक होती है ।

दक्षवारं पठेत् यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते ।

महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः ॥ २६ ॥

सायमभीषानादिबसकृतं पापं नाशयति । प्रातरभीषानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रमुञ्चानो अपापो भवति । निधीये सुरीयसंख्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति । मूत्रनायां प्रतिमायां जप्त्वा वस्तास्ताभिर्घ्नं भवति । प्राण-प्रविष्टायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति । मौमाश्विन्यां महा-देवीसन्निधौ जप्त्वा महासुखं तरति । स महासुखं तरति न एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥

जो इतका इन बार पाठ करता है वह उन्हीं सब पापोंसे मुक्त हो जाता है और महादेवीके प्रसादसे बड़े दुःख सेकड़ोंमें पार कर जाता है ॥ २६ ॥

इतका सर्वरात्रमें अभ्यसन करनेवाला दिनमें क्रिये हुए पापोंका नाश करता है । प्रातःकालमें अभ्यसन करनेवाला रात्रिमें क्रिये हुए पापोंका नाश करता है । रात्री समय अभ्यसन करनेवाला निष्पाप होता है । मन्त्रादिमें सुरीय ६ लम्बाके समय मन करनेसे वाक्सिद्धि प्राप्त होती है । नवी प्रतिष्ठाकर कर करनेसे वस्तुनाशिव्य प्राप्त होता है । प्राणप्रविष्टाके समय मन करनेसे प्राणोंकी प्रतिष्ठा होती है । मौमाश्विनी ( अश्विनी ) योगमें महादेवीकी उक्तिमें मन करनेसे महासुखमें तर जाता है । जो इन प्रकार ब्रह्मण है वह महासुखमें तर जाता है । इस प्रकार यह परिचानाश्विनी अश्विनी है ।

नीतिवाके उपासकीके दिन बार लम्बाई अवसक है । इसमें सुरीय लम्बा मन्त्रादि होती है ।

### अक्षरम्यासः

निम्नादिष्ट शब्दोंकी एकत्र क्रमशः शिला आदिका दष्टिने शपथी  
अंगुष्ठिर्गते स्थित करे ।

ॐ ऐ नमः, शिखायाम् । ॐ ह्रीं नमः, दक्षिणनेत्रे । ॐ ह्रीं नमः,  
वामनेत्रे । ॐ श्रीं नमः, दक्षिणकर्णे । ॐ ह्रूं नमः, वामकर्णे । ॐ वां नमः,  
दक्षिणनासागुदे । ॐ वैं नमः, वामनासागुदे । ॐ विं नमः, मुखे । ॐ र्वं  
नमः, गुह्ये ।

इस प्रकार म्यान करके मूकमन्त्रसे जाठ बार स्थावर (दोना हाथोंका)  
तिरसे डेकर पैरतकके एक अङ्गुली स्थित ) करे फिर प्रत्येक दिशामें बुझकी  
बजाते हुए म्यास करे—

### त्रिकम्यासः

ॐ ऐ प्राची नमः । ॐ ऐ आग्नेय्ये नमः । ॐ ह्रीं दक्षिण्ये नमः ।  
ॐ ह्रीं वैश्वदेवे नमः । ॐ ह्रीं प्रतीच्ये नमः । ॐ ह्रीं वायव्ये नमः । ॐ  
वामुन्नायै उदीच्यै नमः । ॐ वामुन्नायै ऐसाय्यै नमः । ॐ ऐ ह्रीं ह्रीं  
वामुन्नायै दिक्ष्यै कर्ण्यै नमः । ॐ ऐ ह्रीं ह्रीं वामुन्नायै विष्वे भूम्यै नमः ॥

### ध्यातव्यम्

अहं चन्द्रविपुलापपरिबाम्भूर्ध्वं भुवःपती तिरः  
राहं सर्ववर्ती करेक्षिबलवी सार्वभूषावृत्तम् ।  
नीलकण्ठपुतिमालाशङ्खसङ्घो सेवे महाज्जलिन्को  
वामस्तौल्लसिते हस्तं कमलजो हस्तं सर्व ईदमय ॥ १ ॥

● वही प्रबलिन परम्पराके अनुसार ध्यानविधि स्थिति ही पयी है । जो  
मित्रादि करके चाहें वे कल्पसे सारस्वत्यस्य सारस्वत्यस्य सारस्वत्यस्य सारस्वत्यस्य  
महादिन्यास, महाध्वजविन्यास दीवकन्यास विमेषीकन्यास मन्त्रमन्त्रिण्यन  
आदि अन्य प्रकारके म्यास भी कर सकते हैं ।

† इत्यहं सर्वं सार्वभूतं प्रथम कण्ठदेहे व्यासम् ( १३ ६ ) में है ।



ॐ ऐं बहुलाभ्यां वसा ( दोनों हाथोंकी तर्जनी अंगुलियोंसे दोनों अँगूठोंका स्पर्श ) ।

ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां वसा ( दोनों हाथोंके अँगूठोंसे दोनों तर्जनी अंगुलियोंका स्पर्श ) ।

ॐ ह्रीं मध्यमाभ्यां वसा ( अँगूठोंसे मध्यमा अंगुलियोंका स्पर्श ) ।

ॐ चामुण्डायै जनमिकाभ्यां वसा ( जनमिका अंगुलियोंका स्पर्श ) ।

ॐ त्रिंशे कनिष्ठिकाभ्यां वसा ( कनिष्ठिका अंगुलियोंका स्पर्श ) ।

ॐ ऐं ह्रीं चामुण्डायै त्रिंशे करतलप्रसृष्टाभ्यां वसा ( हथेलियों और उनके प्रसृष्टांगोंका परस्पर स्पर्श ) ।

### हृत्पादिसंस्थाः

इसमें दाहिने हाथकी पाँचों अंगुलियोंसे हृत्पाद अथवा अङ्गुलीका स्पर्श किया जाता है ।

ॐ ऐं हृत्पाद वसा ( दाहिने हाथकी पाँचों अंगुलियोंसे हृत्पाद स्पर्श ) ।

ॐ हा तिरसे न्याहा ( तिरका स्पर्श ) ।

ॐ ह्रीं त्रिपादै उपर ( त्रिपादाका स्पर्श ) ।

ॐ चामुण्डायै क्लृपाय हृम् ( दाहिने हाथकी अंगुलियोंसे बाएँ कनिष्ठा और बाएँ हाथकी अंगुलिमासे दाहिने त्रिंशेका स्पर्श ही मन्त्र ) ।

ॐ त्रिंशे नेत्रत्रयाय ओषध ( दाहिने हाथकी अंगुलियोंसे अग्रमार्गसे दोनों नेत्रों और छत्राङ्गके मध्यमाग्ररा स्पर्श ) ।

ॐ ऐं ह्रीं चामुण्डायै त्रिंशे क्लृपाय कम् ( वह वाक्य पढ़कर दाहिने हाथको तिरके ऊपरसे बाएँ ओरसे पीछेकी ओर से पकड़ दाहिनी ओरसे आगेकी ओर से आगे और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियोंसे बाएँ हाथकी हथेलीपर तापी बनाने ) ।

## सप्तशतीन्यास

तदन्तर तत्तर्थाङ्गि विनियोग म्यात और ध्यान करने चाहिये ।  
म्यातकी प्रथाकी पूर्णकर है—

प्रथममन्त्रमोत्तरचरित्राणां ब्रह्मविष्णुकाया रूपयः श्रीमहाकर्मवी  
महाकर्मवीमहासरस्वतीदेवताः, गायत्र्युष्णिगबुधुमरुद्व्यासि नमः।  
श्रीमीमाः। श्रुतः, एकस्मिन्कायुगौमामर्षो बीमणि भद्रिषासुसुर्षा  
कायप्रति हृत्पद्ममामवेष्टा ध्यानाणि सकलकामवासिहृये श्रीमहाकर्मवी  
महाकर्मवीमहासरस्वतीदेवताप्रतीत्यर्थे अये विनियोगः ।

ॐ अङ्गिनी इक्षिणी घोरा गङ्गिणी अङ्गिणी तथा ।  
सप्तशती वापिनी वायुमुष्णिग्वीपरीकापुर्वा ॥ अङ्गुष्ठाम्नी नमः ।  
ॐ इक्ष्वेक पाहि नो देवि पाहि इक्ष्वेक वाग्मिदे ।  
वायुवाग्मिदे नः पाहि वायुवाग्मिवाग्मिदे नः ॥ सर्वशरीराम्नी नमः ।  
ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च अग्निदे रक्ष दक्षिणे ।  
अमवेष्टामङ्गुष्ठक उत्तराम्नी तथेष्टरि ॥ मन्त्रमाम्नी नमः ।  
ॐ साम्यानि वाग्मि रुपाणि श्रीछेदये विचरन्ति ते ।  
वाग्मि वात्सर्षधोराणि तै रक्षाणांकाया सुचम् ॥ अनामिकायाम्नी नमः ।  
ॐ अङ्गुष्ठकगङ्गादीनि वाग्मि वाग्मि तैःप्रियम् ।  
करपद्मनदीनि तैरक्षान् रक्ष सर्वतः ॥ अङ्गुष्ठिकायाम्नी नमः ।  
ॐ सर्वसङ्कर मर्षेते सर्वप्रतिष्ठमम्बिते ।  
अपेम्बप्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोस्तु ते ॥ करतककरङ्गाम्नी नमः ।

अङ्गिनी इक्षिणी घोरा—इष्टाय नमः ।

इक्ष्वेक पाहि नो देवि—क्षिरसे स्वाहा ।

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च—शिवाय नमः ।

साम्यानि वाग्मि रुपाणि—कराय नमः ।

अङ्गुष्ठकगङ्गादीनि—विचरन्ति ते ।

सर्वसङ्करे मर्षेते—अपेम्बप्राहि ।

१ इत्यन्तर्गत् ७१ मंत्रे । २ इत्यन्तर्गत् ७२ मंत्रे । ३ इत्यन्तर्गत् ७३ मंत्रे । ४ इत्यन्तर्गत् ७४ मंत्रे । ५ इत्यन्तर्गत् ७५ मंत्रे । ६ इत्यन्तर्गत् ७६ मंत्रे । ७ इत्यन्तर्गत् ७७ मंत्रे । ८ इत्यन्तर्गत् ७८ मंत्रे । ९ इत्यन्तर्गत् ७९ मंत्रे । १० इत्यन्तर्गत् ८० मंत्रे । ११ इत्यन्तर्गत् ८१ मंत्रे । १२ इत्यन्तर्गत् ८२ मंत्रे । १३ इत्यन्तर्गत् ८३ मंत्रे । १४ इत्यन्तर्गत् ८४ मंत्रे । १५ इत्यन्तर्गत् ८५ मंत्रे । १६ इत्यन्तर्गत् ८६ मंत्रे । १७ इत्यन्तर्गत् ८७ मंत्रे । १८ इत्यन्तर्गत् ८८ मंत्रे । १९ इत्यन्तर्गत् ८९ मंत्रे । २० इत्यन्तर्गत् ९० मंत्रे । २१ इत्यन्तर्गत् ९१ मंत्रे । २२ इत्यन्तर्गत् ९२ मंत्रे । २३ इत्यन्तर्गत् ९३ मंत्रे । २४ इत्यन्तर्गत् ९४ मंत्रे । २५ इत्यन्तर्गत् ९५ मंत्रे । २६ इत्यन्तर्गत् ९६ मंत्रे । २७ इत्यन्तर्गत् ९७ मंत्रे । २८ इत्यन्तर्गत् ९८ मंत्रे । २९ इत्यन्तर्गत् ९९ मंत्रे । ३० इत्यन्तर्गत् १०० मंत्रे ।

३ इत्यन्तर्गत् ७३ मंत्रे । ४ इत्यन्तर्गत् ७४ मंत्रे । ५ इत्यन्तर्गत् ७५ मंत्रे । ६ इत्यन्तर्गत् ७६ मंत्रे । ७ इत्यन्तर्गत् ७७ मंत्रे । ८ इत्यन्तर्गत् ७८ मंत्रे । ९ इत्यन्तर्गत् ७९ मंत्रे । १० इत्यन्तर्गत् ८० मंत्रे । ११ इत्यन्तर्गत् ८१ मंत्रे । १२ इत्यन्तर्गत् ८२ मंत्रे । १३ इत्यन्तर्गत् ८३ मंत्रे । १४ इत्यन्तर्गत् ८४ मंत्रे । १५ इत्यन्तर्गत् ८५ मंत्रे । १६ इत्यन्तर्गत् ८६ मंत्रे । १७ इत्यन्तर्गत् ८७ मंत्रे । १८ इत्यन्तर्गत् ८८ मंत्रे । १९ इत्यन्तर्गत् ८९ मंत्रे । २० इत्यन्तर्गत् ९० मंत्रे । २१ इत्यन्तर्गत् ९१ मंत्रे । २२ इत्यन्तर्गत् ९२ मंत्रे । २३ इत्यन्तर्गत् ९३ मंत्रे । २४ इत्यन्तर्गत् ९४ मंत्रे । २५ इत्यन्तर्गत् ९५ मंत्रे । २६ इत्यन्तर्गत् ९६ मंत्रे । २७ इत्यन्तर्गत् ९७ मंत्रे । २८ इत्यन्तर्गत् ९८ मंत्रे । २९ इत्यन्तर्गत् ९९ मंत्रे । ३० इत्यन्तर्गत् १०० मंत्रे ।

ब्रह्मजन्मपरार्हं गवैशुपुत्रिणं पत्नं बभूवुः पुत्रिणम्  
 दण्डं धत्तिमसि च चर्मं जलम् चपटं सुताग्रजम् ।  
 मूलं पादमुत्पद्ये च वपुषीं हस्तीः प्रसन्नावनां  
 देव सैरिममर्दिनीमिह महाप्रदसी सरोजलिताम् ॥ १ ॥  
 चपटप्रदहनायि सङ्गमुसले चर्मं बभूवुः साकल्यं  
 हस्तं त्रैवर्ण्यं चणान्तमिहसङ्गीतांस्तुल्यप्रभाम् ।  
 गर्भरीशेहसमुज्ज्वलं भिज्यताम्राभारपूतां मद्रा  
 पूर्यमानं सन्वतीमनुभवैः सुम्यमर्दिनीपार्दिनीम् ॥ २ ॥

फिराएँ ही ब्रह्मसंस्थितस्य कामा' इति मन्त्रसे सम्पन्नता पूजा करके  
प्रार्थना करे—

ॐ मां माते मङ्गमाये सर्वसिद्धयश्चरिणी ।  
 कतु रत्नार्चनं न्यस्तुतुष्ट्यान्मये सिद्धिरा मय ॥  
 ॐ अविर्णं ब्रह्म माते ॐ शुद्धमि दक्षिणे करे ।  
 उपस्थले च निरुद्धं प्रसीद मम सिद्धये ॥

ॐ ब्रह्मसाधनविग्रहे नमः । इति इति सर्वसामर्थ्यसामर्थ्ये साधन  
साधन सर्वसिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे कदाह ।

इसके बाद १०० में ही श्री जामुण्डाजी विधो इल मन्त्रका १८  
बार कर कर भो—

गुणातिगुणयोगेष्ठी तं गृह्यत्यवहर्तुं काम् ।  
मिश्रिर्भक्तु मे ऐति त्वत्तत्मागुण्यदेवरी ॥

इन शहरों का पहला देवी का नाम इसमें का निर्धारण करो।

—यह वर्ष गणराज्यीय दिनीय सम्पन्न है (पृष्ठ ७५) में है।

† सम्बन्ध २२५ आसपास के पौधों के आसपास के व्यंजन (हृत् १ ८ १ ९) में है।

सप्तशतीन्यास

तन्मन्तर ध्यातव्यं किं नियोग म्यास और ध्यान करने चाहिये ।  
म्यासही प्रजापति पूजका है—

प्रथममध्यमोत्तरचरित्राणां प्रत्यविष्णुरश्मिः प्रपद्यते, श्रीमहाकाशी  
महाकश्यपीमहामरस्वती देवताः गायत्र्युधिगन्तुमरुतमदीप्ति नमोऽस्तु  
स्मरामीमाः शान्तिः, रत्नमूर्तिः कदुर्गाग्रामयोः श्रीमहाकाशी, अग्निमयमुखा  
अपराणि चक्षुःपुत्रासमवेश्यन्तानि सङ्कष्टमनामिहैव श्रीमहाकाशी  
महाकश्यपीमहामरस्वतीदेवतापीठयोः अरे विनियोगः ।

❖ **શરદિયી દરિયી ધોરા ગરુડી જાડળી તથા :**

सद्भिर्नो जायिषी वाचमुमुक्षुसीपरीषापुरा ॥ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ धूमेव पाहि ना देति कादि लङ्गम अस्मिह ।

पण्डितान्नेह नः पादौ चागुपादिगम्येन च ॥ तर्जनीम्प्रां वयः ।

ॐ प्राण्यां रक्ष प्रशीण्यां च जनिदके रक्ष हस्तिने ।

आमनवांसमुक्तस उतास्यो नमश्चरि ॥ मत्पुत्रास्यो नमः ।

ॐ साम्यानि ज्ञानि ज्ञानानि श्रीमद्भगवदे विनम्रम् ।

यानि चान्तर्यवाराणि च तद्वाक्यान्त्या मुदह ॥ जगामिदमन्यां वमा ।

ॐ महाप्रज्ञासाधूनि यानि वाचाणि तस्मिन्नेव ।

कारपुतरमङ्गीनि तैश्चान् राम पश्यतः ॥ कश्चिद्दिशम्भो वसः ।

❖ सर्वस्वम् सर्वतो सर्वशक्तिमन्भवे ।

भद्रम्बद्यादि लो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते<sup>१</sup> ॥ वरानन्दरुद्राभ्यां वसः ।

सद्विनी दृष्टिनी धीरा — हृदयवत् नमः ।

एकेन पदि नो दि — तिरमे वारा ।

मास्को रूस मनीष्यां च—शिखायै वन्दे ।

मागधनि क्षानि क्वामि०—कृष्णाय इय ।

महामनुष्यवर्णीनि — वैद्यप्रकाश ३१८ ।

सप्तमः सर्गः      अष्टमः सर्गः      नवमः सर्गः

॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

# अथ श्रीदुर्गासप्तशती

## प्रथमोऽध्यायः

मेघा श्रुषिका राजा सुरथ और समाधिको  
भगवतीकी महिमा बताते हुए मधु-कैटभ-  
वधका प्रसङ्ग सुनाता

### विनियोगः

ॐ प्रथमपरिच्छदः महाकाली देवता यावन्ती छन्दः नम्रा शक्तिः रक्तवर्णित्वा बीजम् अष्टिस्तम्बम् आम्बेदः अक्षमम् अस्मिन्महाकालीप्रोक्तम् प्रथमपरिच्छदो विनियोगः ।

### ध्यानम्

स्तब्धं चक्रगद्गदेषुचापपरिषाम्भूलं सुशुष्कीं क्षिरः  
स्रष्टुं संदधती करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूपावृताम् ।

प्रथम परिच्छदके राजा मधु महाकाली देवता यावन्ती छन्द नम्रा शक्ति रक्तवर्णित्वा बीज अष्टिस्तम्ब और आम्बेद स्वरूप है । श्रीमहाकाली देवताकी प्रसंगताके लिये प्रथम परिच्छदके अर्धमें विनियोग किया गया है ।

महाबन्धिष्णुके लोअनेर मधु और कैटभकी मारनेके लिये कमलजम्भा राजाजीने त्रिनयना स्तम्भ निभा था उस महाकाली देवीकामें ऐकन करता हूँ । वे अपने दस हाथोंमें कलश चक्र गदा बाण वज्र परिय ध्वज मुष्टि मस्तक और शङ्ख धारण करती हैं । उनके तीन नेत्र हैं । वे समस्त अङ्गोंमें



॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

# अथ श्रीदुर्गासप्तशती

## प्रथमोऽध्यायः

मेघा ऋषिका राजा सुरथ और समाधिके  
भगवतीकी महिमा बताते हुए मधु-कैटभ  
वधका प्रसङ्ग सुनाना

—\*—\*—\*—

विनियोगः

ॐ प्रथमचरित्रके आद्या श्रुति, महाकाव्यी देवता धारणी छन्द, मन्त्रा छति रक्तहस्तिका बीज, अग्नि तार और शूरेण स्वरूप है। श्रीमहाकाव्यी देवताकी प्रकृताके सिद्धे प्रथम चरित्रके अन्तमें विनियोग किया गया है।

ध्यानम्

सदृशं चक्रगद्गदपुष्पापपरिषाम्भूतं हृद्युषीं द्विः  
शङ्ख मंदपतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गमूपावृताम् ।

प्रथम चरित्रके आद्या श्रुति महाकाव्यी देवता धारणी छन्द, मन्त्रा छति रक्तहस्तिका बीज अग्नि तार और शूरेण स्वरूप है। श्रीमहाकाव्यी देवताकी प्रकृताके सिद्धे प्रथम चरित्रके अन्तमें विनियोग किया गया है।

मन्त्राङ्गिण्डुके छे अनेपरमधु और कैटभकी भारनेके सिद्धे कमलकण्ठा महाश्रीने त्रिनयन छिया वा उम महाकाव्यी देवीका र्म सेवन करण हैं। वे अपने दस हाथोंमें शङ्ख चक्र, गदा वज्र वज्रप परिष शङ्ख मुष्टिका मस्तक और शङ्ख धारण करती हैं। उनके तीन नेत्र हैं। वे समस्त अङ्गोंमें

नीलाश्वत्थमिमांसायाददक्षकां सेवे महाश्वलिङ्गां  
यामस्तौत्स्वपित् हरौ कमलबो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥

ॐ नमःशिवायै ॥

ॐ ऐं मातृण्येव उपायः ॥ १ ॥

सत्त्वर्णिः सूर्यस्तनया यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।  
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम ॥ २ ॥  
महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः ।  
स वसूष महाभागः सावर्णिस्तनया रवेः ॥ ३ ॥  
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः ।  
सुरयो नाम रात्राभूत्समस्तं क्षितिमण्डले ॥ ४ ॥  
तस्य पालयतः सम्यक् प्रजा पुत्रानिवौरसान् ।  
वसूषुः सत्रयो भूपाः कोलाविष्यसिनस्तदा ॥ ५ ॥

दिग्ग आभूयन्ति विमृष्ट हैं । उनके शरीरकी कल्पित नीलमयिके समान है  
तथा वे इत मुक्त और इत वेरेंगे मुक्त हैं ।

मातृण्येयजी बोले—॥ १ ॥ सूर्यके पुत्र सार्वर्णि जो आठवें मनु  
कहे जाते हैं उनकी उत्पत्तिकी कथा स्थितपूर्वक कहला हूँ सुनो ॥ २ ॥  
सूर्यकुमार महामाया सावर्णि मगवती महामायाके समुग्रहसे त्रिष प्रक्रम मन्वन्तरके  
स्वामी हुए वही प्रगट्ट सुनाय हूँ ॥ ३ ॥ पूर्वकाकडी बात है स्वरोचिष  
मन्वन्तरमें सुरध नामके एक राजा थे जो पञ्चवर्षमें उत्पद्य हुए थे । उनका  
कमल भूमण्डलपर अधिकार था ॥ ४ ॥ वे प्रजाका अपने औरत पुत्रोंकी  
मूर्ति धर्मपूर्वक पावन करते थे । तो भी तब समय कोलाविष्यती नामके

१ ॐ मातृण्येयजी मन्वन्तर है ।

२ 'कोलाविष्यती' वह किमी विद्येय पुत्रके क्षत्रियोंकी संज्ञा है । इक्ष्वाकु  
कोला मन्त्री प्रसिद्ध है वह प्राचीन कल्पमें राजधानी थी । किन्तु क्षत्रियोंने कमर  
बद्धता करते कमल विजय किया वे 'कोलाविष्यती' कहलाये ।





इतश्चेतश्च विपरस्तापिन्मुनिवराधमे ॥ ११ ॥  
 सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनं ।  
 मत्पूर्वः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ॥ १२ ॥  
 मद्भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा ।  
 न जाने स प्रधानो मे शूरहस्ती सदा मदः ॥ १३ ॥  
 मम वैरिवधं यातः कान् मोगानुपलप्सते ।  
 ये ममानुगता नित्यं प्रसादधनमोजनैः ॥ १४ ॥  
 अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कूर्चन्त्यन्यमहीमृताम् ।  
 असम्यग्यमप्रीतेस्तैः कूर्चद्भिः सततं व्ययम् ॥ १५ ॥  
 संचितः सोऽतिदुःखेन क्षयं कश्चो गमिष्यति ।  
 एतन्नान्यथ सततं चिन्तयामास पार्थिवः ॥ १६ ॥  
 तत्र विप्राभमाम्पाद्ये वैश्यमर्कं ददर्श सः ।  
 स पृष्टस्तेन कस्त्वं गो हेतुभागमनेऽत्र कः ॥ १७ ॥

इधर उधर विपरते हुए कुछ कामठक रहे ॥ ११ ॥ फिर ममत्वसे  
 आह्वयित होकर वहाँ इत प्रकर चिन्ता करने लगे—पूर्वका कर्मों  
 मेरे पूर्वजोंने जिसका पालन किया था वही अगर आज मुझसे रहित है ।  
 पता नहीं मेरे कुछपायी सत्कर्मों उगली कर्मपूर्वक रक्ता करते हैं या नहीं ।  
 ओ लदा मदही क्यों करनेकास और शूरवीर था वह मया प्रयत्न हाथी  
 मय अनुग्रहों के ज्वलन होकर न जाने किन मोगयों में भागला होगा ? ओ खेला  
 मेरी हारा कन और मोहन पानेने क्या मेरे पीछे-पीछे चकते थे वे निश्चय  
 ही मय हुनो रात्राभोगा अनुतरण करते होंगे । उन काव्यपरी खोगों के हारा  
 लदा लखे हात रहनेके कारण अत्यन्त चकले लमा किया हुआ मेरा वह  
 काशना लायी ही मायगा । ये तथा और यी कई क्यों रात्रा मुख निरन्तर  
 सोचते रहते थे । एक दिन उन्हेंने कहा जिसपर मयाके आत्ममके निरुद्ध  
 एक वैश्यको देना और उगमे पूछा— भाइ ! तुम बीन ही ? क्यों तुम्हारे

तस्य तैरगणवु युद्धमतिप्रबलदण्डिना ।  
 नूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिमिर्वितः ॥ ६ ॥  
 ततः स्वपुरमायातो निबद्धेष्टाभिषोऽभवत् ।  
 आक्रान्तः स महामागस्तैस्तदा प्रवतारिभिः ॥ ७ ॥  
 अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः ।  
 कोशा बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः ॥ ८ ॥  
 ततो मृगयात्म्यान्नेन हतस्त्रात्म्यः स भूपतिः ।  
 एक्यकी इवमात्म्यं अगाम ग्रहन वनम् ॥ ९ ॥  
 स तत्राभममप्राप्तीव द्विस्वर्ग्यस्य मेघसः ।  
 प्रशान्तश्चापठाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम् ॥ १० ॥  
 तस्मै कश्चिन्सु कालं च मुनिना तेन सञ्जितः ।

अर्धव्रतनके धनु ही गये ॥ ५ ॥ राजा सुरजकी इच्छयति वही प्रवक्त जी ।  
 उनका छन्दसि वाच सीमा दृष्टा । मरुति कोलाविध्वंसी संकल्पये कम वे,  
 यो भी राजा सुरज बुद्धिमी उनसे परछा हो गये ॥ ६ ॥ तब व बुद्धिगुणिते  
 अपने नगरको लौह कावे और केवल अपने देहके राजा होकर रहने लगे  
 ( तमूची दृष्टिसे अब उनका अधिकार जाता रहा ) किन्तु वहाँ यो उन प्रवक्त  
 धनुर्गति उन समय महामाग राजा सुरजपर आक्रमण कर दिया ॥ ७ ॥

राजाका बल क्षीण हो गया था; इत्युक्त्ये तमके कुछ बलवान् एवं  
 दुरात्म मरुतिवर्गे महा उनकी राजधानीम भी राजकीय पैना और लक्ष्मणको  
 बहोते इधिका किया ॥ ॥ सुरजका ममत्व नष्ट हो चुका था इत्युक्त्ये वे  
 शिखर पेल्लेक बहने लीहपर लवार हो बहोते अकेल ही एक पने कमजोरी  
 कर गये ॥ ॥ वहाँ उन्नीन विप्रकर मेवा मुनिका आश्रय देता वहाँ निठने  
 ही हितव जीव [ अपनी आध्यात्मिक शिक्षावृत्ति छोड़कर ] परम शास्त्रमन्त्रो  
 रहत य । मुनिक बहुत से शिष्य उन वनकी शोभा बहा रहे थे ॥ १ ॥  
 का अन्तिमर मुनिने तमका लक्षण किया और वे उन मुनिभेदके अन्तर्मन

इतश्चेतव्यं विचरंस्तस्मिन्मुनिवराधमे ॥ ११ ॥  
 सोऽपिन्तयत्तदा तत्र ममस्वाकृष्टचेतनं ।  
 मत्पूर्वं पालितं पूर्वं मया हीनं पुर हि तत् ॥ १२ ॥  
 मद्भृत्यैस्तेरसवृष्टैर्धर्मतः पाल्यते न वा ।  
 न जाने स प्रधानो मं शूरहस्ती सदाभ्युद ॥ १३ ॥  
 मम वैरिषश्च यातः कान् मोगालुपलप्सते ।  
 ये ममानुगता नित्यं प्रसादघनमोजनैः ॥ १४ ॥  
 अलुङ्घ्यते ह्येष तेऽथ कूर्बन्त्यन्यमहीमृतम् ।  
 असम्यग्भ्यपद्मीलैस्तैः कूर्बन्ति सततं भ्ययम् ॥ १५ ॥  
 संक्षिप्तं साऽपिदु खेन क्षयं कोक्षो गमिष्यति ।  
 एतद्यान्मद्यं सततं चिन्तयामास पार्थिव ॥ १६ ॥  
 तत्र विप्राभ्रमाम्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः ।  
 स पृष्ट्वेन कम्बुं मा इतुष्यागमनेऽत्र का ॥ १७ ॥

इधर उधर विचरते हुए कुछ बाल्यक रहे ॥ ११ ॥ फिर ममपले  
 आह्वयविष होकर वहाँ इस प्रकार चिन्ता करने लगे—पूर्वकालीन  
 मेरे पूर्वजोंने त्रिगुण पाप्मन किया था वही मय्यर व्याज मुझसे रहित है ।  
 पता नहीं मेरे कुण्डलटी मायकाय ठनकी धर्मपूर्वक रक्षा करते हैं या नहीं ।  
 जो तथा मरवी कर्मा करनेपात्रा और शूरवीर या वह मया प्रधान हापी  
 अत्र शत्रुओंके जर्भिन होकर न जाने किन मायाको मायना हागा । जो मेरा  
 मरी शत्रु । फिर और भोजन पानेमे लता मेरे पीऽनीउे पकते य ये निश्चय  
 ही मय्यर हूमे एकाधोका मनुमरय करते हीन । उन अरण्यानी सेमोंके हागा  
 तदा तस्य हीने शून्येके कायन अगम्य बहने मया विद्या कुत्र मेरा यह  
 लज्जता लानी हो मरणा । ये तथा और भी कई बाँने शत्रु सुख निरम्भर  
 लावते रहते य । एक दिन उर्दिनि कहा विप्रार मेपाक आभयके निष्कट  
 एक वैरवका हेगा और उनमे पूजा—भाइ । तुम हीन हो । यों शूरारे

सद्याह इव कसार्थं दुर्मना इव लक्ष्यसे ।  
 इत्याकण्ये वक्षस्तस्य मूपतेः प्रणयोदितम् ॥ १८ ॥  
 प्रत्युपाच स तं वैश्यः प्रभयावनता नृपम् ॥ १९ ॥

वैश्य उवाच ॥ २ ॥

समाधिनाम वैश्याऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ॥ २१ ॥  
 पुत्रदारैर्निरस्तश्च धनलोमादसाधुभिः ।  
 विहीनश्च धनेदारैः पुत्रीरादाय मे धनम् ॥ २२ ॥  
 धनमभ्यागता दुस्त्री निरस्तप्राप्तबन्धुभिः ।  
 साऽहं न वधि पुत्राणां कृष्णकृष्णसारिमकाम् ॥ २३ ॥  
 प्रवृत्तिं स्वजनानां च दाराणां चात्र संस्थितः ।  
 किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम् ॥ २४ ॥  
 कथं त किं नु सवृद्धा दुर्धृताः किं नु मे सुताः ॥ २५ ॥

अनेका मया रागण है गुम क्या होकर प्रस्त और अनमने से दिलायी है तो हो । रागण कुरवरा यह प्रत्युपाच कहा तथा वक्षन सुनकर वैश्यने प्रीति भावने उक्त प्रणाम करके कहा—॥ १८-१९ ॥

वैश्य बाबा—॥ २ ॥ राजन मैं धनियाले दुर्लभ ठहरे एक बन्धु हूँ । मरा नाम समाधि ॥ ॥ मरे बुढ़ की पुत्रीनि बने के क्षेमसे मरे परमे राज्य निराद विद्या । मैं इस समय धन की और पुत्रीसे रहित हूँ । ये विधवाणीक बन्धु जान मरा ही उन केकर मुझे दूर कर दिया । मैंने ही नीकर मैं अनम धन पाया हूँ । क्यों यहकर मैं इस बातको नग्य जानता कि मैं पुगरी कीही और स्वर्गनीकी कुलक दे वा नहीं । इस समय परम उ कुशलम रहते । अबजा उक्त कोण कहा है ॥ १८—१९ ॥  
 वयं पुत्र २ मे क्या उपायाचारी । अबजा बुग्याचारी हो गये हैं ॥ २५ ॥

राजोपाय ॥ २६ ॥

यैर्निरस्ता भवोन्स्तुष्वै पुत्रदारादिभिर्धनै ॥ २७ ॥

तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम् ॥ २८ ॥

वैश्य उपाय ॥ २९ ॥

एवमेतद्यथा ग्राह भवानसहस्रत वचः ॥ ३० ॥

किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मन ।

वैः सत्पुत्र्य पिष्टस्नेहं घनलुब्धैर्निराकृतः ॥ ३१ ॥

पतिस्त्वयनहादं च हार्दिं तेष्वेव मे मनः ।

किमेतन्नामिद्वानामि खानक्षपि महामते ॥ ३२ ॥

मत्प्रमप्रवर्णं वित्तं विगुणेष्वपि बहुषु ।

तथां कृते मे निःश्वासा दौर्मनस्य च जायते ॥ ३३ ॥

करोमि किं यत्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ॥ ३४ ॥

राज्याने पूछा—॥ २६ ॥ किन लोमी ली-पुत्र आदिने घनके कारण पुत्र परते निरास्त दिया उनके प्रति तुम्हारे चित्तमें इतना स्नेह अन्वयन क्यों है ? ॥ २७-२८ ॥

वैश्य बोला—॥ २९ ॥ आप मेरे वियर्षम बैली बात कहते हैं, यह सब ठीक है ॥ ३० ॥ किंतु क्या करें मेरा मन निष्ठुरता नहीं धारण करवा। किन्हींने घनके लोभमें पड़कर पिताके प्रति स्नेह पतिके प्रति प्रेम तथा आत्मीयताके प्रति अनुरागको तिरछाकरि वे मुझे परते निरास्त दिया है, उन्हींके प्रति मेरे हृदयमें इतना स्नेह है। महामते। गुणहीन कन्धुभेदि प्रति भी जो मेरा वित्त इन प्रकार प्रेममग्न हो रहा है वह क्या है—इत बातों में जानकर भी नहीं खान पाता। उनके किये मैं लंबी लोंसे के रहा हूँ और मेरा हृदय अत्यन्त पुत्रगिरत हो रहा है ॥ ३१—३३ ॥ उन लोगोंमें प्रेमका सर्वथा अभाव है। तो भी उनके प्रति जो मेरा मन निष्ठुर नहीं हो पाया इसके किये क्या करें ? ॥ ३४ ॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ ३५ ॥

ततस्तौ सहिता विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ ॥ ३६ ॥

समाधिनाम वैश्याऽसौ स च पार्थिवसत्तमः ।

कृत्वा तु तौ यथान्यार्थं यथाहं तेन सविदम् ॥ ३७ ॥

उपविष्टौ कथाः कायिष्यत्तुर्बैश्यापार्थिवौ ॥ ३८ ॥

राजोवाच ॥ ३९ ॥

मगर्भस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ॥ ४० ॥

दुःखाय यन्मे मनसः स्मृतितापघतां विना ।

ममत्वं गतरान्यस्य रान्याङ्गेष्वस्मिन्नेष्वपि ॥ ४१ ॥

मानताऽपि यथाऽस्मत् किमेतन्मुनिसत्तम ।

अयं च निकृष्टः पुत्रैर्दरिर्मुत्प्लेक्षपोन्वितः ॥ ४२ ॥

स्वधनेन च संत्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति ।

मार्कण्डेयजी कहते हैं—॥ ३५ ॥ ब्रह्मन् । तदनन्तर राजाभीमें  
श्रेष्ठ सुरथ और वह कथावि नामक षष्ठ्य होनी तब-नाथ मन्त्र मुनिजी के सम  
उपस्थित हुए और उनके साथ कथायोग्य व्याख्यानार्थ किन्तु पूर्ण वर्तमान करके  
बैठे । तब-आत् वैश्य और राजाजी कुछ वर्तमान अरम्भ किया ॥ ३६-३८ ॥

राजानी कहा—॥ ३९ ॥ भगवन् । मैं आपसे एक बात पूछना  
चाहता हूँ उसे बताइये ॥ ४० ॥ मेरा विप्र अपने अधीन न होनेके कारण  
वह बात मेरे मनको बहुत दुःख देती है । जो राजा मेरे हाथसे प्राप्त गया  
है उसमें त्रीन उनके सम्पूर्ण अङ्गोंमें मेरी ममता बनी हुई है ॥ ४१ ॥  
मनित्रेष्ठ यह जानते हुए भी कि वह मेरा मेरा नहीं है अस्मदीकी मूर्ति  
मझे उनके लिये दुःख होता है यह क्या है । इधर वह वेद न भी करते  
अपमानित होकर आया है । इनके पुत्र भी और मूर्ख हैं इतनी क्रोध दिया  
है ॥ ४२ ॥ स्वधनेन भी ममता परित्याग कर दिया है तो भी वह उनके

एवमेव तथाहं च द्वावप्यत्यन्तदुःखितौ ॥ ४३ ॥

एष्टदापेऽपि विषये समत्वाकृष्टमानसौ ।

तत्किमेतन्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनारपि ॥ ४४ ॥

ममास्य च मवत्येपा विवेकान्वस्य मुदता ॥ ४५ ॥

अपिस्मात् ॥ ४६ ॥

ज्ञानमस्ति समस्तस्य अन्तर्विषयगोचरे ॥ ४७ ॥

विषयंश्च महामागं याति' नैव पृथक् पृथक् ।

दिवन्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावचास्तवसरे ॥ ४८ ॥

केचिदिवा तथा राज्ञौ प्राभिनस्तुम्यष्टयः ।

शानिना मनुजाः सत्यं किं तु तं न हि केवलम् ॥ ४९ ॥

यथा हि ज्ञानिनः सर्वे पशूपक्षिमृगादयः ।

ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां सुगपक्षिणाम् ॥ ५० ॥

प्रति मात्स्य हार्दिक श्रेय रत्न है। इस प्रकार यह तथा मैं दोनों ही बहुत दुखी हैं ॥ ४३ ॥ भिनमें प्रत्यक्ष दीप देखा गया है उस विषयके विषे मैं हमारे मनमें समताजनित आनन्दपूर्ण प्रेमा ही रहा है। महामाया। हम दोनों समस्तकार हैं। तो भी हममें जो मोह प्रेमा हुआ है, वह क्या है। विवेकपूर्ण प्रत्यक्षी भक्ति प्रसन्न और इसमें मैं यह मृदुता प्रत्यक्ष दिलायी होती है ॥ ४४-४५ ॥

श्रुति बोधे—॥ ४६ ॥ महाभाग । त्रिपमार्गका ज्ञान तब जीवोंको  
 है ॥ ४७ ॥ इसी प्रकार विषय भी उनके लिये अज्ञा अज्ञा हैं कुछ प्राणी  
 दिनमें नहीं देखते और रातमें ही नहीं देखते ॥ ४८ ॥ तथा कुछ जीव  
 ऐसे हैं जो दिन और रातमें भी बराबर ही देखते हैं । यह ठीक है कि मनुष्य  
 समस्तदा होता है; किन्तु केषक के ही ऐसे नहीं होते ॥ ४९ ॥ पशु पक्षी और  
 मृग आदि सभी प्राणी समस्तदा होते हैं । मनुष्योंकी समस्तदा भी वैसी ही होती



मनुष्याणां च यत्तथां तुल्यमन्यत्तथामयाः ।  
 ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान् पतङ्गाश्चावचम्बुषु ॥ ५१ ॥  
 कर्ममाधाच्छान्माहात्पीड्यमानानपि शुभा ।  
 मानुषा मनुजभ्याम् सामिलापाः सुतान् प्रति ॥ ५२ ॥  
 लामास्त्रत्युपकाराय नन्वेतान् किं न पश्यति ।  
 तथापि ममतावर्ते माहर्ते निपातिताः ॥ ५३ ॥  
 महामायाप्रभाषेण संसारमितिकारिणो ।  
 तन्मात्र विज्ञायः कार्यो यागनिद्रा जगत्पतेः ॥ ५४ ॥  
 महामाया इरेष्ट्वैषी तथा संमप्रसूत जगत् ।  
 ज्ञानिनामपि चेतांसि इषी मगवती हि सा ॥ ५५ ॥  
 बलादाकृष्य माहाय महामाया प्रपच्छति ।  
 तथा विसृज्यत विष्य जगदतत्पराधरम् ॥ ५६ ॥

हे ज्ञानी तब मूग और पक्षियोंकी होती है ॥ ५१ ॥ तथा जैसी मनुष्योंकी होती है वे १ ही तब मूग पक्षी जगद्विनी होती है । वह तथा कर्म करते भी प्रायः दोनोंय समान ही हैं । समस्त होनेपर भी इन पक्षियोंको तो देखो वे स्वयं भगवते दीक्षित होते हुए भी योहवश बलोंकी शक्तियों किन्तुने पावते जन्मरु हाने इत्ये ॥ ५२ ॥ मन्त्रेण 'कदा तुम अभी देखतेकि ये मनुष्य समस्तहम होते हुए भी लोभशय जन्म किन्तुने हुए उपकारका बहका पानेके सिन्हे पुत्रोंकी काँ लया करते ॥ ५३ ॥ जगत् उन मनुष्य ममताकी कमी नहीं है तन्मात्र के लतागता स्थिति ( कर्म मणकी परम्परा ) बनाये रखनेवाले मागरी पदापराध मन्त्राद्वारा मन्त्रामय भैरवसे मुक्त मोहके गहरे गर्तमें गिराये गये हैं । इत्यादि इत्ये आश्चर्य नष्ट करना चाहिये । जगदीश्वर महाबन् विष्णुभी योनिनिद्राया आ मगवती महामाया हैं उन्हींसे वह कर्म मोहित हो रहा है । २ गाना मगवती श्री जगन्नाथ भी विषयों सम्पूर्ण लोभकर मोहम हाने करती हैं । ३ ॥ इन मनुष्य जगत् जगत्की सृष्टि करती हैं तथा

सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ।  
 सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुमृता सनातनी ॥ ५७ ॥  
 संसारबन्धहेतुष्व सैष सर्वेश्वरेश्वरी ॥ ५८ ॥

राजीवाय ॥ ५९ ॥

मगवन् का हि सा देवी महामायेति यां मयान् ॥ ६० ॥  
 ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मस्थाय किं द्विज ।  
 यत्प्रमादो यः सा देवी यत्स्वरूपा यदुद्भवा ॥ ६१ ॥  
 तत्सर्वं आतुमिच्छामि त्वत्तां ब्रह्मविदां वर ॥ ६२ ॥

कपिलाय ॥ ६३ ॥

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ॥ ६४ ॥  
 तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा भूयतां मम ।

ये ही प्रसन्न होनेर मनुष्योंकी मुक्तिके लिये वरदान देती हैं । ये ही परा  
 विद्या संसार-बन्धन और मोहकी हेतुमृता सनातनी देवी तथा सम्पूर्ण ईश्वरोंकी  
 मी अजीश्वरी हैं ॥ ५९—६८ ॥

राजाने पूछा—॥ ५९ ॥ मगवन् ! भिन्ने आप महामाया कहत हैं ये  
 देवी कौन हैं ? ब्रह्मन् ! उनका आधिभ्यास कैसे हुआ ? तथा उनके चरित्र  
 कौन-कौन हैं ? ब्रह्मदेवताओंमें वेष्ठ महर्षे ! उन देवीका कैसा प्रभाव हो वेष्ट  
 स्वरूप हो और किस प्रकार प्राप्तिर्मात्र हुआ हो वह जब मैं आपके मुखसे  
 सुनना चाहता हूँ ॥ ६०—६२ ॥

श्रुति बोले—॥ ६३ ॥ राजन् ! वास्तवमें तो ये देवी नित्यव्यक्त ही  
 हैं । सम्पूर्ण जगत् उन्हींका रूप है तथा उन्होंने समस्त विश्वको व्यस्त कर  
 रक्खा है तथापि उनका प्रकटन अनेक प्रकारसे होता है । वह मुझसे सुनो ।

दधानां कार्यसिद्धयर्थमाधिर्मगति सा यदा ॥ ६५ ॥  
 उत्पन्नेति यदा लाके सा नित्याप्यभिधीयते ।  
 यागनिद्रां तदा बिष्णुर्जगत्प्रकार्णवीकृते ॥ ६६ ॥  
 आम्तीर्य क्षेपममज्जत्कल्पान्त भगवान् प्रभु ।  
 तदा द्वावसुरा पारां बिस्पाता मधुकेटमौ ॥ ६७ ॥  
 बिष्णुर्धर्ममलान्मृतौ हन्तुं प्रह्लादमुपतां ।  
 स नामिकमले बिष्णाः स्थिता प्रह्ला प्रजापतिः ॥ ६८ ॥  
 द्वाव तावसुरा बाधौ प्रसुप्त च वनार्दनम् ।  
 तुष्टान् यागनिद्रां तामेकाग्रहृदयस्थितः ॥ ६९ ॥  
 विशाधनार्थाय हरेर्हस्तिनेत्रकृतस्त्रयाम् ।  
 विश्वेश्वरीं जगतां श्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ॥ ७० ॥  
 निद्रां भगवतीं बिष्णोरतुलां तेजस प्रभुः ॥ ७१ ॥

वरुण के निच और जम्मा है तर्थात् जब देवताओं का कार्य ठीक करनेके  
 लिये प्रसूत होती है उस समय जोकमें उत्पन्न हुई करवाती है । कल्पके  
 अन्तमें जब अर्धपूर्व जगत् एकार्णवमें निमग्न हो रहा था और उसके प्रभु  
 भगवान् बिष्णु योगनिद्रा में शय्या बिठाकर योगनिद्रा का अभ्यास के सो रहे थे  
 उस समय उनके कर्माधी बैठते हो मयूर असुर उत्पन्न हुए, ओ मधु और  
 कैटभ नामके बिष्णात थे । वे दोनों ब्रह्माजीका वध करनेको तैयार हो गये ।  
 भगवान् बिष्णुके माधिमयज्यमें विराजमान प्रजापति ब्रह्माजीने जब उन दोनों  
 मयानक भगवान् अपने पाग माया और भगवान् सेवा हुआ देखा जब  
 एकप्रकारित नेत्र उन्हे भगवान् बिष्णु की जगनेके लिये उनके नेत्रोंमें  
 निक्षेप करनेवाली योगनिद्राका लक्षण आरम्भ किया । जो इस बिम्बकी  
 कधीपरी भगवान् पारण करनेवाली सत्तात्प्राप्त्यन्त और तद्वा करनेवाली  
 तथा तेजस्वरूप भगवान् बिष्णु की जगनेय शक्ति है उन्ही मयाकरी निद्रा-

वि वि० प्रसिद्धि वरुण के वर ही भगवान् है जब निद्रा जगती

महोवाच ॥ ७२ ॥

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि षपट्कारः स्वरात्मिका ॥ ७३ ॥  
 सुधा त्वमधरे नित्यं त्रिधा मात्रात्मिका म्रिता ।  
 अर्धमात्राम्रिता नित्या यानुशाया विक्षेपतः ॥ ७४ ॥  
 स्वमेव स्रज्या सावित्री त्वं हयि जननी परा ।  
 त्वयैतद्वार्यते विध्वं त्वरेतस्सुन्यते जगत् ॥ ७५ ॥  
 त्वयैतत्पान्यत हयि स्वमत्स्यन्ते च सर्गदा ।  
 विसृष्टी सृष्टिरुपा त्वं म्यतिरूपा च पाठने ॥ ७६ ॥  
 तथा महतिरूपान्ते खगताऽस्य जगन्मय ।  
 महाविद्या महामाया महामेषा महास्मृतिः ॥ ७७ ॥

इतीं श्री मायान् ब्रह्मा स्तुति करने लगे ॥ ६४—७१ ॥

प्रवृत्ताङ्गीने कहा—॥ ७२ ॥ देवि । तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं स्वधा और  
 तुम्हीं षपट्कार हो । स्वर भी तुम्हारे ही स्वरूप हैं । तुम्हीं जीवनदायिनी तुपा  
 हो । निच अघर स्रज्याम अघर उघर मार—इन तीन मात्राओं के रूपमें  
 तुम्हीं मिल ॥ । तथा इन तीन मात्राओं के अतिरिक्त जो विन्दुवत्ता निच  
 अघर है अतिरिक्त विन्दु रूपसे उघर नही दिया जा सकत है ही  
 तुम्हीं हो । देवि । तुम्हीं नित्य नविनी तथा परम जननी हो । देवि । तुम्हीं  
 इन त्रिधा ब्रह्मावस्था धारण करती हो । तुम्हारे ही इस जगत् की सृष्टि होयी  
 है । तुम्हारे ही इसका पालन होजा है और तदा तुम्हीं ब्रह्मा के अन्तर्मे सबको  
 भस्म कर देती हो । जगत्परी देवि । इन जगत् की उत्पत्ति के समय  
 तुम्हें सृष्टि हो । पालन-कारिणी सृष्टि हो तथा ब्रह्मा के समय महारूप  
 च च करनेवाली हो । तुम्हीं महारूप माया महामय मायामृति

१ । २ । धरि स्थाने—१ । २ । धरि स्थाने स्थित होकर ॥ ३ । धरि है ।

महामाहा ॥ भवती महाद्वी महासुरी ।  
 प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥ ७८ ॥  
 अलरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ।  
 त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं हीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥ ७९ ॥  
 लजा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्व सान्तिः सान्तिरयं च ।  
 त्वद्गिनी शूलिनी धारा गदिनी चक्रिणी तथा ॥ ८० ॥  
 शङ्खिनी चापिनी बाणद्विशुष्पीपरिषा युधा ।  
 सौम्या सौम्यतराक्षेपसौम्यम्यस्त्वतिसुन्दरी ॥ ८१ ॥  
 परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ।  
 यच्च किञ्चित्स्त्वचिद्वस्तु सदसद्वास्तिलारिमक ॥ ८२ ॥  
 तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्त्वयसं तदौ ।  
 यया त्वया अगत्सष्टा अगत्पात्परि या अगत् ॥ ८३ ॥  
 साऽपि निद्रावर्धनीत कस्त्वां स्तातुमिहभारः ।

महामाहा ॥ महाद्वी श्री महासुरी ॥ । तुम्ही तीनी गुणोरो उत्सव करनेवासी  
 नवनी प्रकृति हो । मयकर वाक्पति महापति श्री मोहरति मी तुम्ही हो ।  
 तुम्ही श्री तुम्हां ईश्वरी तुम्ही ही श्री तुम्ही बीचम्यका बुद्धि हो । लजा  
 पुष्टि, तुष्टि, शान्ति श्री लजा श्री तुम्ही हो । तुम पराक्षारिणी एवचारिणी  
 पारम्परा तथा गदा चक्र शङ्ख और बाण धारण करनेवासी हो । बाण  
 मुण्डली और परिष-ये श्री तुम्हारे जगत् है । तुम लोम्य और लोम्यर हो—  
 इत्यन्त ही नहीं श्रितने श्री लोम्य एव तुम्हारे परार्थ है उन नवनी अयेहा  
 तुम अपचक्र तुन्दरी हो । पर श्री अरर—नवने पर रहनेवासी परमेश्वरी  
 तुम्ही ॥ । सर्वम्ये देवि । कर्मा मी नन्-मन्मन्म श्री कुछ बलुर्दे है और  
 उन नवनी रो शक्ति है च तुम्ही हो । ऐसी अवस्थामें तुम्हारी शक्ति कदा  
 हो नवनी दे । आ इम जगत् श्री बुद्धि शान्त और महार करते है उन  
 महापति श्री श्री तुम्हें निद्राके अधीन कर दिया है तब नवनी शक्ति

विष्णुः शरीरग्रहणमहमीक्षान एव च ॥८४॥  
 कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् मयेत् ।  
 सा त्वमित्थं प्रमावैः स्वैरुदारैर्देवि सन्तुता ॥८५॥  
 माहपैतौ दुराधयावसुरौ मधुकैटभौ ।  
 प्रबाध च अगत्सामी नीयतामप्सुतो लघु ॥८६॥  
 बोधय क्रियतामसु हन्तुमेतौ महासुरौ ॥८७॥  
 शक्तिरुवाच ॥ ८८ ॥

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेषसा ॥८९॥  
 विष्णाः प्रषाधनार्थाय निहर्तुं मधुकैटभौ ।  
 नेत्रास्थनासिकाबाहुद्वयस्यस्तथोरस ॥९०॥  
 निर्गम्य दर्शने तस्यौ प्रक्षणाऽप्यक्तज्वलनः ।  
 उत्तम्यौ च जगत्पापस्तया मुक्ता अनार्जव ॥९१॥  
 एकवर्षवैऽहिंशयनात्ततः स दह्ये च तौ ।

कहेमें यहाँ तीन तमर्ष हो गये हैं । मुखको मगवान् बाहुको लघु  
 मगवान् विष्णुको भी तुम्हें ॥ शरीर बाध करवा है; अतः तुम्हारी शक्ति  
 करनेकी शक्ति किती है । देवि । तुम लो अने इन उदार प्रमावैसे ही  
 प्रशंसित हो । ये दोनों कुर्बप अमुर मधु और कैटभ हैं इनको मोहमें  
 डाल दो और अगदीधर मगवान् विष्णुसे भीष ही क्या हो । ताव ही  
 इनके मीतर इन दोनों महान् आसुरीको मार डालनेकी बुद्धि उत्पन्न  
 कर दो ॥ ८४—८७ ॥

शुचि कहने हैं—॥ ८८ ॥ राम । अब ब्रह्माग्नि यहाँ मधु और  
 कैटभको मारनेके उद्देश्यसे मगवान् विष्णुको बगानेके लिये तमोगुणारी  
 मरिचिका देवी योगनिद्राकी इस प्रकार स्तुति की तब वे मगवान् के नेत्र  
 मुख नासिका बाहु; द्वादश और वक्त्र; स्वस्त्यैः निःकमलर आम्बुजकम्पाज्ज्यामीकी  
 दृष्टिके समग्र राही ही गयी । योगनिद्रासे मुक्त होनेपर अन्तर्के स्वामी मगवान्  
 अन्तरं उत एकवर्षके अन्तर्मे दोषघातकी शक्त्याये आय उठे । निर उन्हेने

मधुकैर्मो दुरात्मानापतिवीर्यपराक्रमौ ॥९२॥  
 म्माघरस्तेष्वर्णवर्चं ब्रह्माणं जनिताघमौ ।  
 समुत्थाय सतस्ताम्या युयुधे मगधान् हरि ॥९३॥  
 पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो विभुः ।  
 तावप्यतिबलान्मर्त्तौ महामायाविमादितौ ॥९४॥  
 उक्तवन्तौ पराञ्जनां त्रियतामिति कथ्यम् ॥९५॥  
 श्रीमगधानुवाच ॥ ९६ ॥  
 मवेतामघ मे तुष्टी मम वप्याबुमावपि ॥९७॥  
 किमन्यन वरणाग्र एतावदि हतं ममे ॥९८॥

श्रुतिस्वाच ॥ ९९ ॥

ब्रह्मिताम्यामिति तदा सर्वमायामयं जगत् ॥ १०० ॥  
 निलाक्य ताम्यां गदिता मगधान् कमलेर्षणः ।

उन दोनों मनुष्यों के देखा । वे दृष्टव्य मनु और वेदम अत्यन्त बलवान्  
 तथा प्रयत्नमी वे और जोबले म्माघ और मोने किसे ब्रह्माणो या जानेके किसे  
 उद्योग कर रहे थे । तब मगधान् बीररिने उठकर उन दोनोंके साथ पौरुष  
 हथार बर्षोत्तम केन्द्र बाहुबुद्ध किया । वे दोनों मी अत्यन्त बलके कारण  
 उन्मत्त हो रहे थे । इधर महामावाने मी उन्हें म्मेहमें हलक रक्तावा; इतन्निने  
 वे मगधान् निष्कुले करने कहे—वह तुम्हारी बीर्यवले वस्तु है । तुम  
 हमसमर्थोंके जोर पर मोगा ॥ ८९-९५ ॥

श्रीमगधान् बोले—॥ ९६ ॥ यदि तुम दोनों सुखार प्रयत्न हो तो  
 जब मेरे हाथने मेरे कर्मों । वध हतनावा ही मीने कर मोग्य है । क्यों तुम्हारे  
 प्रिती वरते क्या मैना है ॥ ९८ ॥

श्रुति कहते हैं—॥ ९९ ॥ इत प्रकर बोलेमें मा-करीपर जब उन्होंने  
 सम्पूर्ण मातृमे कल-ही-जग देखा तब कमलजनपद मगधान्ले कहा—

१ वा — मी हनु । २ वा — मग । ३ मर्दनेकुरात्मनी का  
 श्रीमामे मर्द मीनी लक्ष्य हुयेम वल्लभवर्ष वृष्टुतावले १ वम्य मन्त्रि वाट है ।

आवां वहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ॥१०१॥

अपिल्लाच ॥ १०२ ॥

तपेन्युक्त्वा मगवता सहस्रभक्रगदामृता ।  
कृत्वा धकेण वै प्लिङ्ग्ने जपने धिरसी तथा ॥१०३॥  
एवमेवा समुत्पन्ना अक्षणा संस्तुता स्वयम् ।  
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि त ॥१०४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे मार्कण्डेय मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये  
मनुकैटभकथो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

उवाच १४ अक्षसोकाः २४, स्तोत्राः ॥ ६६ ॥

प्रवर्णितः ॥ १०४ ॥

यहाँ पूर्यो कर्मों द्वारा हुए न हो—यहाँ लज्जा काल हो यहाँ हमारा बच  
करो । ॥ १ १ १ ॥

अपि कहते हैं—॥ १ २ ॥ तब भक्त्यालु कहकर सब एक और  
गद्य धारण करने लगे मगधानुने उन दोनोंके मस्तक अपनी ओपर रखकर  
कमठे काट डाले । इस प्रकार वे देवी महामाया त्रिधात्रीकी स्तुति करनेपर  
स्वयं प्रकट हुए थीं । अब पुनः हमसे उनके प्रभावका वर्णन करता हूँ  
सुनो ॥ १ १-१ ४ ॥

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराणमें मार्कण्डेय मन्वन्तरको कहकर मन्वन्तरे  
देवीमाहात्म्यके 'मनु-कैटभ-कथ' नामक पक्षर कथ्यकर पूरा हुआ ॥ १ ॥



# द्वितीयोऽध्यायः

देवताओंके तेजसे देवीका प्रादुर्भाव और  
महिषासुरकी सेनाका वध

## विनियोगः

ॐ मन्त्रमन्त्रिणः विष्णुर्वायुर्महादेवमीश्वरतातपिह् इन्द्रः शक्रश्च  
छक्तिः भुवर्गं वीर्यं वायुज्यैषं यद्वर्षेण स्वर्गं श्रीमहादेवमीश्वरतातपिह् मन्त्रमन्त्रिणः  
मन्त्रिणः विनियोगः ।

## ध्यानम्

ॐ अक्षय्यरूपं गदेष्टुष्टिर्षं पञ्च भुवःपञ्चिकां  
दण्डं छक्तिमसि च चर्म वल्लवं वपुः सुरामाघनम् ।  
शूलं पाशमुदधने च दधती इमैः प्रसन्नाननो  
सेने सैरिममर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरावस्थिताम् ॥

ॐ ह्रीं त्र्यम्बक्यै नमः ॥ १ ॥

देवासुरममूचुर्ध्वं पूर्णमब्धमृतं पुरा ।

ॐ मन्त्रमन्त्रिणः विष्णुश्च वि महालक्ष्मी देवता तपिह् इन्द्रः  
छक्तिः भुवर्गं वीर्यं वायुज्यैषं यद्वर्षेण स्वर्गं श्रीमहादेवमीश्वरतातपिह् मन्त्रमन्त्रिणः  
मन्त्रिणः विनियोगः ।

मैं तमको आलनस बैठी हूँ प्रसन्न मुखवाली मन्त्रिणसुरमर्दिनी  
महालक्ष्मीका मन्त्र करती हूँ और अपने हाथोंमें महामहा पञ्चक,  
शूल पाश वल्ल पञ्च भुवः कुण्डिका दण्ड छक्ति लङ्का दण्ड, दण्ड,  
दण्ड मनुवाज दण्ड, पाश और चक्र धारण करती हूँ ।

शुभि कहने हैं—॥ १ ॥ पूर्वप्रसन्न देवताओं और मन्त्रोंमें पूरे से

महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥ २ ॥  
 तत्रासुरैर्महास्त्रीर्यैर्वैद्यसैन्यं परामितम् ।  
 जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥ ३ ॥  
 ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम् ।  
 पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेश्वगरुद्रध्वजौ ॥ ४ ॥  
 यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरेष्वेष्टितम् ।  
 त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिमववित्तरम् ॥ ५ ॥  
 धर्मो द्रान्न्यनिलेन्दुना यमस्य वरुणस्य च ।  
 अन्येषां नाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति ॥ ६ ॥  
 स्वर्गाभिराकृताः सर्वे तेन देवगणा मुवि ।  
 विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥ ७ ॥  
 एतद्वः कथितं सर्वममरारिष्वेष्टितम् ।  
 क्षरणं वः प्रपन्ना सो वभस्तस्य निषिन्त्यताम् ॥ ८ ॥

यद्येक धोर संग्राम हुआ था । उसमें असुरीश्वर स्वाधी महिषासुर था और  
 देवताओंके नायक इन्द्र थे । उस युद्धमें देवताओंकी सेना म्हाबली असुरोंसे  
 परास्त हो गयी । तन्मुख देवताओंको जीतकर महिषासुर इन्द्र वन बैठा ॥ २ ॥  
 तब पराजित देवता प्रजापति ब्रह्माधीश्वर आगे करके उस स्थानपर गये जहाँ  
 मंगवन् रुद्र और विष्णु निराश्रयान् थे ॥ ४ ॥ देवताओंने महिषासुरके  
 पराक्रम तथा अमनी पराजयका यथार्थ वृत्तान्त उन दोनों देवेश्वरोंसे मिलकर  
 पूर्वक कह सुनाया ॥ ५ ॥ वे बोले—‘मंगवन्’ महिषासुर स्व, इन्द्र अधि-  
 षातु कन्दमय यम वरुण तथा अन्य देवताओंके भी अधिकार छीनकर  
 स्वयं ही तन्त्रय अधिपता बना बैठा है ॥ ६ ॥ उस दुरात्मा महिषेने नमस्त  
 देवताओंको स्वर्गसे निष्काश दिया है । अब वे मनुष्यों की मूर्ति पृथ्वीपर  
 विचरते हैं ॥ ७ ॥ देवताजी यह नापी करतूत हमने आरम्भोपाते कह सुनायी ।  
 अब हम मारकी ही क्षरणमें आये हैं । उसके वधका कोई  
 उपाय सोचिये ॥ ८ ॥

इत्थं निष्कम्प्य देवानां वक्तांसि मधुसूदनः ।  
 वक्ष्ये केषां क्षम्यन्मम भङ्गीकृष्टिष्ठाननौ ॥ ९ ॥  
 ततोऽविकापपूर्वस्य पक्रियो वदनाद्यत ।  
 निष्काम महर्त्तवो ब्रह्मणः क्षत्रस्य च ॥ १० ॥  
 मन्त्रेषां वैष देवानां शक्रादीनां क्षरीरतः ।  
 निर्गतं सुमहत्तेजस्तत्त्वैक्यं समगच्छत ॥ ११ ॥  
 अतीव तेजसः कूर्तं ज्वलन्तमिव पर्वतम् ।  
 ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाभ्यासदिगन्तरम् ॥ १२ ॥  
 अतुलं तत्र तपेनः सर्वदेवक्षरीरजम् ।  
 एकस्थं तदभूभारी व्यासलोकज्यं स्थिरा ॥ १३ ॥  
 मदमूढात्मनः तेजस्तेनाग्रस्यत तप्तसम् ।  
 याम्येन यामयम् केशा बाहयो विष्णुनेत्रता ॥ १४ ॥

इस प्रकरण हेक्तामीक वचन सुन्दर मयवान् विष्णु और शिवने  
 हेतुकेनर बड़ा मोक्ष दिया । उनकी मीहिं उन गयी और देह देखा हो  
 गया ॥ ॥ तत्र अत्यन्त बोरमे मेरे रूप वक्ष्यामि श्रीविष्णुके मुखसे एक मयान्  
 तेज प्रकट हुआ । इसी प्रकार ब्रह्मा वायु तपस्व इन्द्र आदि अन्त्या  
 हेक्तामीक क्षरीरमे मी बड़ा मयी तेज निकल । वह तत्र भिन्नकर एक हो  
 गया ॥ ॥ मयान् तपसा वह पक्ष आग्रस्यमान पर्वत-का आन  
 पड़ा । उरता-ने बड़ा उड़ उनकी जाणा सम्पूर्ण दिशाभीमे व्याप्त  
 हो रही थी ॥ । मयान् उरतामीक क्षरीरमे प्रकट हुए उन तेजकी  
 बड़ी तु ना नग था । स्थित होकर वह एक नागिनि रूपमे परिवर्तन हो  
 गया । अतः प्रकाशने तीन आकाशे जात जान पड़ा ॥ ३ ॥ मयवान्  
 वाङ्मया मे तेन था उनमे उन गीता नृप प्रकट हुआ । यमराजके तेज-  
 ने ॥ । म यत्र निराल था । श्रीविष्णु-यावान् तेजस उनकी  
 मयान् ॥ । ॥ ॥ अत्यन्त तपसा ब्रह्मा वायु तपस्व इन्द्र आदि अन्त्या

सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मर्ष्यं चैन्द्रेण चाभवत् ।  
 वाक्येन च अङ्गोरु नितम्बस्तेजसा श्रवः ॥१५॥  
 प्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योऽर्कतेजसा ।  
 वज्रनां च करान्गुल्यः कर्मावरणं च नासिका ॥१६॥  
 तस्यास्तु दन्ताः सम्मृताः प्राजापत्येन तेजसा ।  
 नयनविवर्धं स्रग्मे तथा पाषाणतेजसा ॥१७॥  
 अश्वी च संप्रयोस्तेजः श्वणावनिष्ठस्य च ।  
 अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥१८॥  
 ततः समस्तदेवानां तज्जाराशिसमुद्भवाम् ।  
 तां विलास्य युद्धं प्रापुरमरा महिषादिताः ॥१९॥  
 शूलं शूलादिनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकशूक ।

मण्यमाना ( कटिप्रदेश ) का शङ्खुमौल हुआ । शङ्खके तेजसे जह्वा और  
 मिडकी तथा पूर्यकि तेजसे नितम्बमाग प्रकट हुआ ॥ १५ ॥ ब्रह्माके तेजसे  
 दोनों करण और शर्पके तेजसे उनकी अङ्गुलियाँ हुई । वज्रमौके तेजसे हाथोंकी  
 अङ्गुलियाँ और कुबेरके तेजसे नासिका प्रकट हुई ॥ १६ ॥ उस देवीके सौत  
 प्रह्मण्डलके तेजसे और तीर्थी नेत्र मणिके तेजसे प्रकट हुए थे ॥ १७ ॥  
 उसकी मीहे संप्रयोके और श्वान वायुके तेजसे उत्पन्न हुए थे । इनमें प्रह्मर  
 अन्येषां देवताओंके तेजसे भी उस कस्याग्रमरी देवीका आविर्भाव हुआ ॥ १८ ॥

तदन्तर समस्त देवताओंके तैज्यापुञ्जने प्रकट हुए देवीको देवकर  
 महिषमुरके मार्ये हुए देखा बहुत प्रसन्न हुए ॥ १९ ॥ पिनाकपाटी भगवान्  
 छड़ाने आने शुरूके एक शूक निष्कापकर उन्हें दिया । फिर भगवान् शिष्यने

१. अरे प्रतीतिसे उनके चर शरीर देख बहुतसरे लक्ष्मि लक्ष्म्यापुञ्जने  
 २. बहुतसरे शूकबीजकर्मों ने प्रतीति: ३. शृंग पाठ अधिक है

पद्मं च दत्तवान् कृष्य समुत्पाद्य स्वपत्न्यः ॥२॥  
 शङ्खं च धरुणः शक्तिं ददां तस्यै हुताशनः ।  
 मारुता दत्तवांश्यापं वायुपूर्णं तवेष्टुधी ॥२१॥  
 बलमिन्द्रः समुत्पाद्ये कृत्तिशादमराधिपः ।  
 ददां तस्यै सहस्राक्षा घण्टामैरावतावृ गङ्गात् ॥२२॥  
 कालदण्डाधमा दण्डं पार्श्वं वाम्मुपतिर्ददौ ।  
 प्रजापतिश्चाधमालां ददां ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥२३॥  
 समन्तरामरूपं निजरम्भीन् दिवाकरः ।  
 कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्यार्धैर्म च निर्मलम् ॥२४॥  
 क्षीरादधामलं हारमक्षरे च तथाम्वरे ।  
 चूडामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कण्ठ्यानि च ॥२५॥  
 मर्धपन्त्रं तथा शुभ्रं कपूरान् सर्वबाहुषु ।

श्री भक्त चक्र उक्त करके मगस्योको मर्धपन्त्रा ॥ १ ॥ बलमिन्द्र  
 श्री शङ्ख मेट किया बलमिन्द्र उक्त शक्ति ही और वायुने वरुण तथा काल  
 मेरे हुण ही काल प्रदान किए ॥ २१ ॥ मरुत नैरोजावे देवराज इन्द्रने  
 भजन बलम उक्त उक्त करके दिया और एराज हाथीसे उक्तकर एक  
 घण्टा श्री प्रदान किया ॥ २ ॥ बलमिन्द्र काकरण्डसे दण्ड बलमिन्द्र पाया  
 प्रदान तन स्वनिवावनी माया तथा ब्रह्माक्षीने कमण्डलु मेट किया ॥ २३ ॥  
 रूपने देवीक लमल रोम वृगम भजनी किरणारा वेव मर दिया । बलमिन्द्र  
 उक्त नमस्त्री हुण तन और तनजार दी ॥ २४ ॥ क्षीरमुद्रने उक्तकर  
 हार तथा मग मणि ने गनेराक बोदिय बलम मेट किए । ताव ही बलमिन्द्र  
 दि य चूडामणि दा हु हु उक्त उक्त मगकन्य तन बाहुमोकि मिने

नृपुंगुं शिखरं वज्रं प्रवेयकमनुसमम् ॥२६॥  
 अद्भुतीयरुमानि ममन्ताम्वहुतीषु च ।  
 शिखरमा ददा तस्य परं चातिनिर्मलम् ॥२७॥  
 अद्भुतवनरुपाणि तथाभेदं च दर्शनम् ।  
 अम्बानरुजां मार्गं शिखरसि चापगम् ॥२८॥  
 अद्भुतवनपिम्बस्यै पद्भुजं चातिशोभनम् ।  
 शिखरं चाहनं सिद्धं गमानि शिखरानि च ॥२९॥  
 ददापुण्यं गुण्या पानस्यै धनाधिरः ।  
 नेत्रं गर्भनागना मक्षमणिबिम्बितम् ॥३०॥  
 नागद्वारं ददा तस्य धनं यः पृथिवीमिमाम् ।  
 अथैव गुरोर्दीप्यमानं मृदुलपुष्पम् ॥३१॥  
 ममन्ताम्वनादास्यै मादुरामं सुदुर्मदम् ।  
 तस्या नादन पावनं हृद्यमाचरितं नमः ॥३२॥

हेतुं शायं वाप्येव विरचितं भूतं गच्छी भूतं ईश्वरी भूतं नर  
 भूतं शायं वाप्येव विरचितं भूतं गच्छी भूतं ईश्वरी भूतं नर  
 भूतं शायं वाप्येव विरचितं भूतं गच्छी भूतं ईश्वरी भूतं नर

अमायतातिमहता प्रतिशब्दा महानमूत ।  
 पुषुषुः सकला लाकाः समुद्राय चकम्पिरे ॥३३॥  
 चषाल वसुधा चेतुः सकलाय महीधराः ।  
 वपति दवाय मुदा समूषुः सिंहबाहिनीम् ॥३४॥  
 तुन्दुर्बुर्बुनवश्वेना मक्तिनम्रात्ममूर्तयः ।  
 हृष्ट समस्तं संसृष्टं त्रैलोक्यममराय ॥३५॥  
 संनद्धास्तिलसैन्यास्ते समुपस्थुरुद्धासुधाः ।  
 आः किमवदिति क्वाधादामाप्य महिषासुरः ॥३६॥  
 अन्यथावत तं ह्यम्बमर्षपरसुरैर्वृतः ।  
 स ददर्श तदा देवीं व्यासलक्ष्मणां त्विषा ॥३७॥

नाकसे नमूषुर्बुनवश्वेना मक्तिनम्रात्ममूर्तयः ॥३३॥ देवीका यह अत्यन्त उच्चर  
 के बिना हुमा सिंहवार कही लम्ब न लक्ष आकाश उन्के सामने कपु प्रवीत  
 हान क्या । उनसे बड़े ओरही प्रतिगति हुई भिन्ने लम्बुर्बुन विश्वमें हलचल  
 मय गयी और लम्बुर्बुन वरि उडे ॥३४॥ वृष्टी होलने लगी और समस्त पर्वत  
 दिक्ने लगे । उन समय देवताओंने आनन्द प्रगटवाडे वाय सिंहबाहिनी  
 भगवतीने कहा—‘देवि ! तुमही क्या हो’ ॥३५॥ वाय ही मूर्तिविनि मूर्ति-  
 का ने स्निग्ध हाथर उनका लासन किया ।

लम्बुर्बुन विनासीका ओमप्रमद देव देवताय आनी लम्बुर्बुन केनाकी  
 करन आदिने गुर्गासन कर हाथोंमें दधिधार से लहना उठकर पड़े हो  
 । उन समय महिषासुरन बड़े ओरही आकर कहा—‘आ ! यह क्या  
 है ?’ किन्तु लम्बुर्बुन जगुगीने फिरर उनसिंहवारकी ओर लक्ष करके  
 लौट ओर भाग पनचकर उन्ने देवीका देखा का आनी प्रकटि तीनों

पादाक्रान्त्या नतमुर्धं किरीटोत्थिसिंताम्बराम् ।  
 धोमिताशेषपातालां घनुर्न्यानिःस्वनेन ताम् ॥३८॥  
 दिक्षो मुखसहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संसिताम् ।  
 ततः प्रमृष्टे युद्धं तथा देव्या सुरद्रिपाम् ॥३९॥  
 अस्त्रास्त्रैर्वहुधा मुक्तैरादीपितदिगन्तरम् ।  
 महिषासुरसेनानीभिर्भुराख्या महासुरः ॥४०॥  
 पुपुषे चामरधान्यैश्चतुरङ्गबलान्वित ।  
 रथानामयुतैः पद्मिस्तद्ग्राग्यो महासुरः ॥४१॥  
 अयुष्यतस्युतानां च सहस्रेण महाइन्दु ।  
 पञ्चाशद्भूमिषु निपुतैरसितामा महासुरः ॥४२॥  
 अयुतानां शतैः पद्मिर्वाष्कलो पुपुषे रण ।

जोसँको प्रक्षरित कर रही थी ॥ ३८-३९ ॥ उनके चरणोंके मारते  
 हुन्नी रही आ रही थी । माथेके मुटुटले आकाशमें रस्ता-नी निक रही थी  
 तथा वे मरने चतुरङ्गी टङ्कलने वाली पल्लवोंको घुम्न किये देती थी  
 ॥ ३८ ॥ देवी अम्नी हथौड़ी मुखाभोंसे सम्पूर्ण दिशाओंका आच्छादित  
 करके लड़ी थी । तदनन्तर उनके साथ देवियोंका युद्ध छिड़ गया ॥ ३९ ॥  
 नाना प्रकारके अस्त्र वायोंके प्रहारसे सम्पूर्ण दिशाएँ उद्भ्रमित होने लगी ।  
 विशुर नामक महान् अशुर महिषाशुरका सेनानायक था ॥ ४० ॥ वह देवीके  
 साथ युद्ध करने लगा । अम्ब देवियोंकी चतुरङ्गीकी सेना नाथ लेकर चामर  
 भी लहने लगा । गाड़ हवाएँ रथियोंके नाथ आकर उदर नामक महारैत्यने  
 बोहा किता ॥ ४१ ॥ एक करोड़ रथियोंको साथ लेकर महाइन्दु नामक देव  
 युद्ध करने लगा । जिनके पीछे तनयारक समान तीव्र व वह अमृत्येमा  
 नामका महारैत्य पात्र करोड़ रथी सैनिकोंके साथ युद्धमें आ गया ॥ ४२ ॥  
 गाड़ आग रथियोंने पिट हुआ बाधित नामक देव भी उन युद्धभूमिमें



गन्धर्वाजिसहस्रांश्चैरनेकैः' परिचारितः ॥४३॥  
 इवा रथानां कोट्या च युद्धे तक्षिममुष्मत् ।  
 विहाताम्याऽयुतानां च पञ्चाशदुमिरथायुतैः ॥४४॥  
 युयुधे संपुगे तत्र रथानां परिचारितः ।  
 अन्ये च तत्रायुतशो रथनाम्नाहमैर्वृताः ॥४५॥  
 युयुधु संपुगे देव्या सह तत्र महन्तुराः ।  
 अत्रिहसिहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥४६॥  
 हयानां च इतो युद्धे तत्रामून्महिषास्तुर ।  
 तामरर्मिन्दिपास्तैश्च शक्तिभिर्धूमलैस्तथा ॥४७॥  
 युयुधुः संपुगे देव्या स्वर्गैः परद्रुपट्टिभैः ।  
 केचिच्च विक्षिप्तः शक्तीः केचित्पाशास्तथापरे ॥४८॥  
 देवी स्वर्गप्रहरिस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्ष्मुः ।  
 सापि देवी ततस्तानि शस्त्राप्यस्त्राणि चण्डिका ॥४९॥

कहने लगा । परिवर्तित नामक शब्द हाथीकार और पुद्गलकारोंके  
मनक शब्दों तथा एक कठोद एषिचोरी सेना केकर बुद्ध करने लगा । निम्न  
नामक देव गैव अरव एषिचोरी विरकर बोहा केने लगा । इनके अतिरिक्त  
और भी इन्होंने महादेव एवं हाथी और घोड़ोंकी सेना लख केकर बर्ती  
देवकी साथ बुद्ध करने लगे । लख महिमानुर तन एवंमूमिमें कोटि-कोटि  
गहस एवं हाथी और घोड़ोंकी सेनामें सिध हुआ लहा था । वे देव देवोंके  
साथ लोमर भिन्दिगाव, शक्ति मूलक, लख परछ और पक्षि आदि भक्त-  
शक्तोंका प्रहार करते हुए बुद्ध कर रहे थे । बुद्ध देवोंने उनकर शक्तिक  
प्रहार किया कुछ नागोंने पाछ केके ॥४६-४८॥ तथा कुछ बृहते देवोंने  
लख प्रहार करके बीतीहा मम दान्तेका उपयोग किया । देवोंने भी गोपमें

४ । प्रथम शिष्टी शिष्टी प्रतिष्ठे एतेषां च नृणां धर्मैः  
एवम् — यथाशक्त्यनुसारेण नृणां सर्वेषु च व्यवहारे परिवारिकः ॥ अन्तर्गतः  
अर्थो वा

छीलयेव प्रचिच्छेद निबधस्तास्रवर्षिणी ।  
 अनायस्तानना दधी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ॥५०॥  
 सुमोषासुरदेहेषु क्षत्राण्यस्त्राणि येधरी ।  
 साऽपि हृद्दो धुतसटा देव्या वाहनकेधरी ॥५१॥  
 अचारासुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः ।  
 निःश्वस्रान् सुमुषे यांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका ॥५२॥  
 स एव सद्य सम्भूता गणा क्षतसहस्रम् ।  
 युयुधुस्ते परशुमिर्मिन्दिपालासिपट्टिभैः ॥५३॥  
 नाशयन्तोऽसुरगणान् देवीक्षक्त्सुपवृदिता ।  
 अवादयन्त पटङ्गान् गणाः क्षङ्क्षांस्तथापरे ॥५४॥  
 मृदङ्गाश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्धमहोत्सवे ।  
 ततो दधी त्रिशूलान् गदया शक्तिं हृष्टिभिः ॥५५॥

मरकर लेख-रोल्में ही मरने अन्न शब्दोंकी बर्ण करके देवोंके से समस्त  
 अन्न-शब्द काट हाते । उनके सुगन्ध परीधम या पकारटका रंचमात्र मी  
 पिक नहीं या देवता और ऋषि उनको स्तुति करते थे और वे मगधकी  
 परमेश्वरी देवोंके शरीरोंपर अन्न-शब्दोंकी बर्ण करती थीं ।

देवीका वाहन सिंह मी मोक्षमें मरकर मर्दनके वातोंको दिस्रता हुआ  
 अशुरोंकी सेनामें इस प्रकार विचरते लगा । मानो कहींमें राक्षसका पैदा रहा  
 हो । एतद्भूमिमें देवोंके साथ युद्ध करती हुई अम्बिकादेवीने कितने निश्चल  
 छोड़े थे सभी लष्कार लेकहों-हजारों गजोंके समूहमें प्रकट हो गये और परा  
 मिन्दिपाल गह्व तथा पट्टि आदि अन्नोद्धार अशुरोंका लम्पना करने  
 लगे ॥ ५१-५३ ॥ देवीकी शक्तिने बड़े हुए वे सब अशुरोंका मार्य करते  
 हुए मगादा और शङ्ख आदि बाजे बजाने लगे ॥ ५४ ॥ उस लष्कार-महोत्सवमें  
 कितने ॥ एक मरहा बन्ध रहे थे । तदनन्तर देवीने विष्णुके गदसे,

सहगादिभिश्च क्षतश्चा निजधान महासुरान् ।  
 पतयामास चैवान्यान् घण्टास्त्रविमोहितान् ॥५६॥  
 असुरान् युधि पाशेन बधूष्या चान्यानकर्षयत् ।  
 केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः सहगपासैस्तथापर ॥५७॥  
 विपादिता निपातेन गदया युधि क्षेरते ।  
 वेमुद्य कचिदुपरि मुसलन मुष्टं हता ॥५८॥  
 केचिन्निपतिता भूमौ मित्राः शूलन बधसि ।  
 निरन्तराः क्षरापेण कृताः केचिद्रणाजिरे ॥५९॥  
 क्ष्येर्नानुकरणः प्रापान् मुमुक्षुस्त्रिदशार्दना ।  
 कर्पाचिद् बाह्वधिल्लभाश्लिष्मन्निबस्तथापरे ॥६०॥  
 क्षिरंसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः ।  
 विच्छिन्नमहास्तवपर पेतुरुर्ध्वा महासुराः ॥६१॥

हाथकी करारि और लहू आदिसे तेकड़ों महारैत्योंस तंहार कर गइया ।  
 फिटनेको कन्देके मय्यदुर नररते मूर्च्छित करके मार गिराया ॥ ५६ ५६ ॥  
 बरुहरे रैत्योंको पाशसे बाँधकर बरतीपर बलीया । फिटने ही रैत तजकी  
 तीली तजकारकी मारसे वो वो डूकके हो गये ॥ ५७ ॥ फिटने ही गदकी  
 जोरसे धातक हा बरतीपर खो गये । फिटने ही मूलकी मारसे जकत  
 जाइत होकर रक्त बमन करने लगे । कुछ रैत खल्ले छती कट खनेके  
 कारण धूमकीपर डर हो गये । उस रणाङ्गणमें बाकतूहोंकी बुझिसे फिटने ही  
 अतुरोंकी कम्मर डूब गयी ॥ ५८ ५९ ॥ बाजकी तरह क्षपटनेवाले रैकरीक  
 रैतकम भयने प्राणसे हाथ बाने लगे । फिटनेकी बाँहि जिब-मित्र ही ययी ।  
 निजनाकी गर्बने कट गया । फिटने ही रैत्योंके महाक कट-कटकर मारने लगे ।  
 कुछ जोगाक शरीर मणभयम ही निरीर हो गये । फिटने ही महारैत

ण्यथाद्विषयवशा कचिदेव्या द्विधा कृता ।  
 छिन्नेऽपि चान्य शिरसि पतिता पुनरुत्थिताः ॥६२॥  
 क्वचिद्वा युयुर्देव्या गृहीतपरमायुधा ।  
 ननृतुभावर तत्र युद्धं सूर्यतयाभिताः ॥६३॥  
 क्वचिद्वाष्टिभ्रमशिरस रद्गगन्त्यष्टिपाणय ।  
 तिष्ठ तिष्ठति मापन्ता दक्षीमन्ये महामुंग ॥६४॥  
 पानितै रथनागाश्चरसुरं च वगुचरा ।  
 अगम्या मामयत्नत्र यन्नामृत्स महाग्न ॥६५॥  
 द्वापित्ताया महानद्य मयन्त्र प्रमुञ्चुः ।  
 मय्य चागुर्मेन्यस्य धारणामुरवाग्निनाम् ॥६६॥

अर्थे कट अनेन दृष्टीरार मिर पद । छिन्नेही ही देवीने एक बार एक पेर  
 और एक मेवरा-न करके दो दुर्द्धामि और हाथ । छिन्ने ही देवी मगद  
 कट अनेन भी मित्रकर छि उठ और केवल पदके ही लम्पे अष्टो  
 अष्टो हविर्गार हाथने न देवी न मय युद्ध करने लगते थे । दूसरे कवच्य युद्धके  
 बाधेही लगर मयमे ॥६२-६३॥ छिन्ने ही बिना मिरके पद हाथोंमें लह  
 लीन और सुदि निज दोहते पतवा दूसरे-दूसरे महादेव लहरों । हरते ॥ मर  
 करते हुए देवी ही युद्धके निज लग्नकर । ६४ । अर्थे कट पेर लग्नम हुआ  
 न वताही बली देवीके मिरा न हुए रम हाथी बाधे और अगुर्गेही लम्पेने  
 देवी पट ली ही कि वह पम्पना फिरता अलगवार ही गल या ॥ ६४-६५॥  
 देवी-ही मे-मे लगी ६६ और अगुर्गेके लगीने इन्ही अरिह मगने  
 लग्नम हुआ का कि लगी ही देवी वती लगी बली-बली नरसो करने

१ छिन्नेही लगीने लगे कट ली-ली-लगा लगे लगी-लगा  
 लगी लगी लगी

क्षणेन सन्महासैन्यमसुराणां तथाभिव्यक्त ।  
 निन्दे क्षयं यथा वह्निस्तृणदारुमहाभयम् ॥६७॥  
 स च सिंहा महानादमुस्तृजघुतकेशर ।  
 क्षरीरेभ्योऽमरारीणामधुनिष विचिन्वति ॥६८॥  
 वेभ्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं पुद्गं महासुरैः ।  
 ययैर्षां सुतुपूर्वेवाः पुष्पहृदिष्ठो दिवि ॥६९॥

इति श्रीबार्गसप्तशत्याम् साधर्मिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

महिपातुरसैन्यस्यो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

उपान्त १ स्तोत्रः ६८ पद्यम् ६९

एवमादितः १७३ ॥



कर्ण ॥ ६६ ॥ कणाभ्यामे अशुरोकी विद्याक ऐन्द्रकी क्षमम्भरी नष्ट कर  
 दिया—उक्त उक्त तत्र केते एव और कष्टके मयी देरको जाता कुछ ही  
 क्षणोंमें मर कर देती है ॥ ६७ ॥ और वह सिंह भी पर्वतके बाध्योंको विज-  
 यितकर ओर-ओरसे गर्जना करता हुआ देवीके शरीरसे मानो उनके प्राण  
 बुने जाता था ॥ ६८ ॥ क्यों देवीके शरीरोंने भी उन महादेवोंके साथ देता  
 कुछ किया जिनने माताश्रीमें पाड़े हुए वैराग्य उनपर बहुत लक्ष्य हुए  
 और शूक करछाने लगे ॥ ६९ ॥

इस प्रकार श्रीबार्गसप्तशत्याम् साधर्मिके मन्वन्तरकी कर्णके मन्त्रके देवी-महा-  
 त्म्ये 'श्रीबुर्गासप्तशत्याम्' नामक द्वाव अध्याय पूरा हुआ ॥ २ ॥

### तृतीयोऽध्यायः

सेनापतियोसहित महिपासुरका घघ

**ध्यानम्**

३७ उपद्रानुसहस्रान्तिमरुणसौमां त्रिगमालिध्यां  
 रत्नाग्निपयापरां वपरां विद्याममीति यम् ।  
 ह्माग्नेदधतीं त्रिनेत्रपितमद्रक्षारविन्दभियं  
 दधीं षट्दहिमांगुलमुद्रां सन्दजविन्दविषिताम् ॥

❖ कृषिशास्त्र ॥ १ ॥

निःश्वसानं सन्त्यन्यमवनाक्ष्य महाभुर ।  
सेनानीभिर्भुरः कपराक्षयां यावत्पुमधाम्भिकाम् ॥ २ ॥

आरम्भादे भीमहोत्री कवि उदयचरणदे गुरुजी गुरुदे सम्मान है।  
 वे लाल रंगकी गेरुकी लट्ठी पकड़े हुए हैं। उनके गंभीर मुखपर शोभा  
 ना रही है। सोनी लालेसर लाल बालनवा भव लगा है। वे जामे पर-कमलों  
 में आनन्दित हो सिला और अमर तथा अनामक गुणों पर लाल हो रहे हुए हैं।  
 लाल नेत्रों में गुण-मय गुणार्थ स्पष्ट की शोभा हो रही है। उनके आरम्भ  
 आरम्भादे लाल ही रम्य मुख पर लाल है तथा वे कमल के आनन्द  
 सितम्भ हैं। ऐसी ही है। मैं धन्यवाद प्रणाम करता हूँ।

शुद्धि कथन है—॥ १ ॥ सर्वत्रो मेधा दत्ता ह्यसौ तान्मान  
तोते देव सार्वभौम मेधावि निरा मीयते साधकः क्षेमसा देहः

म दधीं क्षरवर्षेण वषपं समरेऽसुरः ।  
 यथा मेरुगिरे शृङ्गं तोयवर्षेण ताम्रदः ॥ ३ ॥  
 तस्यष्टिस्था ततो दधीं लोलयैव क्षरोत्करान् ।  
 वधानं तुरगान् बाणैर्यन्तारं चैव बाधिनाम् ॥ ४ ॥  
 चिच्छेद् न धनुः सद्यो ध्वजं चातिसङ्घुन्निष्ठम् ।  
 विष्वाद्यं चैव गात्रेषु छिन्नमन्वानमाद्युगै ॥ ५ ॥  
 सुच्छिन्नमन्वा विरथा इतम्यो इतसारथिः ।  
 अभ्यवावत तां दधीं स्वर्गचर्मवराऽसुर ॥ ६ ॥  
 मिहमाहस्य स्वर्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि ।  
 आजधानं मुजे सम्ये देवीमप्यतिवेगवान् ॥ ७ ॥  
 तस्यां स्वर्गो मुर्वं प्राप्य पफ़लं नृपनन्दन ।  
 ततां चप्राह मूर्तं स क्षपादरुणलोचनः ॥ ८ ॥  
 विक्षेपं च ततस्तथु मद्रकास्यां महासुरः ।  
 सान्जन्त्यमानं तजामी रथिबिम्बमिवाम्बरम् ॥ ९ ॥

कुछ करनेको अपने बड़ा ॥ १ ॥ वह असुर रत्नमूर्ति देवीके ऊपर  
 इत प्रकार बालोंकी उपा करने लगा जैसे बादल मेरुगिरिके शिखरपर  
 पानीकी बार बरना रहा हो ॥ ३ ॥ उस देवीने अपने बालोंसे उसके पाव  
 लम्पूहकी अनायास ही काटकर उसके पोहों और तारथियों की मार  
 डाला ॥ ४ ॥ नाथ ही उसके वनुय तथा अत्यन्त लौकी ध्वजको भी लकड़के धार  
 मिलाया । धनुय बर जानेपर उसने अज्ञातोंको अपने बालोंसे बीच बाधा ॥ ५ ॥  
 धनुय रथ छोड़ और तारथिके मर हो जानेपर वह असुर बाण और लकड़कर  
 कर डधीकी मार डाला ॥ ६ ॥ उसने तीली चारबाणों लकड़कारते तिरके  
 मल्लकार और बरक डधीकी भी डधी मुझमें बड़े कैयने प्रहार किया ॥ ७ ॥  
 गगन । देवी कीद्वार पकड़ते ही वह लकड़कर दूध गयी फिर तो जीवते  
 जल मान्य करके उन राजपुत्रों को हाथमें लिया ॥ ८ ॥ और उसे उस महा-  
 देव अत्यन्त मद्रकासीके ऊपर लज्जता । वह शूक आकाशसे गिरते हुए

दृष्ट्वा तदापतन्मूर्त्तं देवी शून्यमुद्यत ।  
 तन्मूर्त्तं प्रतप्ता तेन नीत स च महामुर ॥ १० ॥  
 हत तस्मिन्महावीर्ये महिषस्य चमूपाता ।  
 आब्रुवाम गजान्मूढभामरगिदशादन ॥ ११ ॥  
 साऽपि शक्तिं मुमापाद्य दन्यान्नामन्विका द्रुतम् ।  
 हुंकारामिदतां मृमां पातयामास निष्प्रमाम् ॥ १२ ॥  
 मन्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा प्राथसमन्वितः ।  
 निधर चामर गूर्त्तं धारणमदपि साञ्छिन्तन् ॥ १३ ॥  
 तत मिह समुत्पन्न्य गजान्मूढान्तर म्बिन ।  
 बाहुपुद्गलं युयुष सनार्त्तगिदशारिषा ॥ १४ ॥  
 पुद्गलमानीं तन्मौ तु तस्यान्नागा मही गर्ता ।  
 युयुपातेतिमरण्यां प्रहाररजिदास्मां ॥ १५ ॥

पूर्वमण्डल की शक्ति अन्ते सेना प्रस्थापिता हा उदा ॥ ॥ तत एवमेव अन्ती  
 भेद भजे दल देवीने भी एवका प्रारु किया । उन्ने एवमेव एवमेव नेहरी  
 दृष्ट्वा हा गने नय ही पारादेव किमुकी भी धारिणी उद गयी ।  
 वर प्राप्तेने एव भी हा ॥ १ ॥

अथैवमुक्ते मेवार्ति ततः प्रहारायमयी शक्तिरुदेवत देवता  
 को देहा देवेनता काम हापीर कामर भक्त । उन्ने भी देवीने उदा  
 हाँवका प्रारु किया किमु कामकाय उन्ने अन्ते एवमेव ही एवमेव  
 निष्प्रम वरके एवमेव एवमेव निष्प्रम ॥ ११ १२ ॥ तन्नि दृष्ट्वा  
 दृष्ट्वा देव कामकी वहा मोक्ष हुआ । धर उन्ने एव काम किमु देवीने  
 उन्ने भी अन्ते एवमेव काम काम ॥ १३ ॥ एवमेव ही देवीने  
 ततः प्रहारायमयी शक्तिरुदेवत देवता को देवीने काम लूट कर कामर  
 बाहुपुद्गल कामे काम ॥ १४ ॥ मे ही ने एवमेव ही एवमेव  
 वरके भी एवमेव कामकी कामर दृष्ट्वा एवमेव वर कामर काम कामे एव



तथा वेगात् समुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा ।  
 कनप्रहारण क्षिरधामरस्य पृथक्कृतम् ॥ १६ ॥  
 उदग्रश्च रणे देव्या क्षिणाक्ष्णादिभिर्हितः ।  
 दन्तमुष्टितलैश्चैव क्त्रालम्ब्य निपातितः ॥ १७ ॥  
 इषी क्रुद्धा गदापातैर्घूर्णयामास चोद्धतम् ।  
 बाष्कलं मिन्दिपालेन बाणेस्ताम्रं तथान्धकम् ॥ १८ ॥  
 उग्रासमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहतम् ।  
 त्रिनेत्रा च त्रिगुलेन जघान परमेष्ठी ॥ १९ ॥  
 विहातस्यासिना कयास्पातयामास वै क्षिरः ।  
 दुर्करं दुर्मुखं चार्भा क्षरन्निन्ये यमक्षयम् ॥ २० ॥

छद्मे मये ॥ १५ ॥ तदन्तरं स्थि बड़े देवते आत्माएकी ओर उग्र  
 और उग्रते गिठे कम उठने परीकी मारते आम्बर क्षिर बड़े अक्षय  
 कर दिया ॥ १६ ॥ इषी प्रहार उग्र मी शिख और वृद्ध अक्षरकी मर  
 पाकर रक्तधूमि देवीके हाथले मार गया तथा कण्ठ मी शीतों मुखों और  
 अम्बरकी ओरले कण्ठामी हो गया ॥ १७ ॥ अक्षयमें मरी हुई देवीने मरकी  
 ओरले उग्रता कचूमर निवाक बाक । मिन्दिपालके बाष्कलको तथा बाणों-  
 से ताम्र और अम्बरको मीठके बाद उछार दिया ॥ १८ ॥ तीन देवीयकी  
 परमेष्ठीने त्रिगुलेन उग्रस्य उग्रीर्य तथा मरुद्वानु नामक देवकी मर  
 बाका ॥ १ ॥ उग्रारकी ओरले विहातके मलकको बड़े बाद गिरना । दुर्कर  
 और दुर्मुख—इन दोनोंको भी अपने बाणोंसे यमकोट में दिया ॥ २ ॥

तत्के कर विनी विनी प्रतिमे—

आप्य च वाकरादेव आम्बरविराजन्तः ।

आरधनमपुत्री आरधनपौरवाचकः ॥

अभिर्देवप्रतिमोऽथवाअभिर्देवप्रतिमः ।

गने । अथवा देव्य च अथवादेवप्रतिमः ॥

—दे ही लोके अधिक दे ।

एवं संधीयमाणे तु स्वसन्ये महिषासुरः ।  
 माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान् ॥२१॥  
 कांश्चिदुण्डप्रहारेण सुरधेपैस्तथापरान् ।  
 लाङ्गूलकाहिताधान्यामृद्धाभ्यां च विदारितान् ॥२२॥  
 वेगेन कांश्चिदपराभावेन भ्रमणेन च ।  
 निःश्वासपवनेनान्यान् पातयामास भूतले ॥२३॥  
 निपात्य प्रमथानीकमम्यधावत साऽसुरः ।  
 सिंहं हन्तुं महादम्या काप चक्रे तत्ताऽम्बिका ॥२४॥  
 सोऽपि कोपान्महावीर्यः सुरमुष्णमहीतल ।  
 मृद्धाभ्यां पर्वतानुच्छांश्चिन्नेष च ननाद च ॥२५॥  
 वेगभ्रमणबिभुष्या मही तस्य व्यशीर्यत ।  
 लाङ्गूलनाहतभ्रान्धिं धावयामास सर्वतः ॥२६॥  
 धुतमृद्धविमिश्राय खण्डं खण्डं यपुर्धना ।

इत प्रहार करनी केनाका नहार हाता देन माहिषासुरने भेदेका रूप  
 धारण करके देवीके यन्त्रोंको धार देना आरम्भ किया ॥२१॥ किन्हीको धुपुनसे  
 मारकर किन्हीके ऊपर गुर्तोंका प्रहार करके किन्ही-किन्हीको धूँठसे थोडा  
 पट्टेबाकट कुछसे लीमोले गिरीर्य करके कुछ गणोंको मारते किन्हीको  
 मिहनासे कुछको बकर देकर भीर दित्तनोंका मिथपाल बाधुके लोकेते  
 बरायानी कर दिया ॥ २२ २३ ॥ इत प्रहार गन्त्रोंकी केनाको मिथार बह  
 कनुर महादेवीके मिहको मारनेके निवे करता । इन्ने आदम्याको बहा मोप  
 हुआ ॥ ४॥ उपर महागुण्यी माहिषासुर भी कोबने मारकर धारणीको गुर्तोंके  
 गोन्ने लग्न तथा मन्ने नीमोंके छे के ऊँचे पर्वतोंको बहाकर तेकने और  
 गन्ने लग्न ॥ २ ॥ उनके वेगन बकर देनेके कारण दूसरी धुप्य होकर  
 पट्टने लगी । उनकी धूँठने डकगकर मयु- नव भारने धारणीका दुरोने  
 लग्न ॥ ५ ॥ दिन्ने हुए लीमोके आदतने गिनीर्न होकर बादलोंके गच्छ इच्छे

यास्तानिडास्ताः श्रुतश्चो निपेतुर्नमसाऽपलाः ॥२०॥  
 इति ब्रह्मसमाध्यातमापतन्तं महासुरम् ।  
 इष्टुं सा चण्डिका कर्षं तद्वधाय तदाश्रितम् ॥२१॥  
 सा धिप्त्वा तस्मै वै पार्श्वं तं बभूव महासुरम् ।  
 तस्याम् माहिष रूपं सोऽपि बद्धा महामुषे ॥२२॥  
 ततः सिंहाऽमवत्सया यावत्तस्माच्चिका शिरः ।  
 छिनत्ति तत्कस्युर्यः स्वर्गपाणिरदभ्यत ॥२३॥  
 ततः पवातु पुरुषं देवी चिच्छेत् सत्यकैः ।  
 तं स्वर्गवर्मेणा सार्द्धं ततः सोऽमून्महागजः ॥२४॥  
 करम् च महासिंहं तं पक्षं जगत्स्य च ।  
 कर्पवस्तु करं देवी स्वर्गेन निरुन्तत ॥२५॥  
 तदा महासुरा भूया माहिषं वपुराभितः ।  
 तथैव क्षामयामास त्रैलोक्यं सचरत्परम् ॥२६॥

हो गये । उनके स्थानी प्रसन्न होकर बोले उहें हुए हैकड़ों पर्यंत आकाशमें  
 फिरने लगे ॥ १७ ॥ इस प्रकार जोधमें से हुए उध महादेवकी शपथ  
 और जाते देव शक्तिमाने उत्तका वह करनेके लिये महान् शेष किया ॥ १८ ॥  
 उन्होंने पाप प्रकृति उस महान् मनुष्यो बाँध किया । उध महान् प्रथममें देव  
 ज्ञानपर उधने भक्ति का रूप स्थापन किया ॥ १९ ॥ और उत्तक दिवसे हममें  
 वह प्रकट हो गया । उस अवस्थामें जगदम्बा को ही उत्तका मनुष्य करनेको  
 उत्तक है । त्यागी वह गृहधारी पुरुषके रूपमें दिगम्बरी देने लगा ॥ २० ॥  
 तब हीन तत्त्व ही वातापी उसा करके हाथ और टङ्गारके साथ उध  
 पुरुषका ना नाय गया । इतनेमें ही वह महान् मनुष्यके रूपमें परिणत हो  
 गया ॥ ॥ तथा अपनी मूर्धन देवीन विष्णु भिदको लीकने और गजने  
 लगा । ॥ तब मनन करीने तत्त्वामें उत्तकी लूँह करत हाथी ॥ २१ ॥ तब  
 उस महाई बन पन । तब हीन वातापी कर किया और पदोपी ॥ भक्ति  
 जगत्तक प्रतीति लीन लीन । लोकोको व्यापक करने लगा ॥ २२ ॥

ततः क्षुद्रा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् ।  
 पयो पुनः पुनश्चैव जहासारुमलाचना ॥३४॥  
 ननर्द चासुरः सोऽपि बलधीर्यमदोवृषतः ।  
 विपाणाम्यां च विधेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ॥३५॥  
 सा च सान् प्रहितास्तेन घूर्णयन्ती क्षरोत्करे ।  
 उवाच तं मदोवृधूतमुस्वरागाकुलाधरम् ॥३६॥  
 दैवमुवाच ॥ ३७ ॥

गर्ज गर्ज घर्ण मूढ मधु यावत्पिबाम्महम् ।  
 मया त्वयि हतेऽश्वेव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥३८॥  
 क्षपित्वाच ॥ ३९ ॥

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽकृढा तं महासुरम् ।  
 पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमतान्वयत् ॥४०॥  
 ततः सोऽपि पदाऽऽक्रान्तस्तया निम्मुत्पाततः ।  
 अर्धनिष्क्रान्त एवासीत् देव्या वीर्येण संवृतः ॥४१॥

तब ओषधों मरी हुई जगन्माता चण्डिका बारबार उत्तम मधुका पान करने और  
 अन्न भोजन करके हँसने लगी ॥ ३४ ॥ उपर वह बल और पण्डितके मरते  
 उन्मत्त हुआ दासल गर्जने लगा और अपने सीमेंसे चण्डीके ऊपर पर्वतोंको  
 घेरने लगा ॥ ३५ ॥ उस समय देवी अपने बाणोंके छद्मोंसे उनके पैरोंके हुए  
 पर्वतोंको घूर्ण करती हुई चोली । थोछटे समय उनका मुख मधुके मरते जाक  
 हो रहा था और बायीं कटुलवा रही थी ॥ ३६ ॥

देवीसे कहा—॥ ३७ ॥ ओ मूढ । मैं जबतक मधु पीती हूँ तबतक  
 तू तबतक मेरे लूण गर्जके । मेरे हाथसे यहीं तेरी मृत्यु हो जानेपर अब  
 शीघ्र ही देवता भी गर्जना करेंगे ॥ ३८ ॥

श्रुति कहते हैं—॥ ३९ ॥ यों कहकर देवी उज्जली और ठग महादेवके  
 ऊपर चढ़ गयी । फिर अपने पैरोंसे उसे हवाकर उन्हीने शूलसे उनके कण्ठमें  
 आगत किया ॥ ४० ॥ उनके पैरोंसे हवा होनेपर भी मणिासुर अपने मुखसे  
 [ दूधसे अपने बाहर होने लगा ] अभी आधे शरीरसे ही वह बाहर निकलने

अर्धनिष्क्रान्त एवासी युष्मन्मानो महासुरः ।  
 तथा महामिना देव्या शिरश्छिन्ना निपातितः ॥४२॥  
 तता द्वादाहृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाप्त वत् ।  
 प्रहर्य च परं जग्मुः सकृन्ना देवतागणाः ॥४३॥  
 सुपुत्रस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः ।  
 क्षुर्गन्धर्वपत्न्या ननुतुषाप्सरोगणाः ॥४४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सारगर्भिके मन्त्रस्तोत्रे देवीमाहात्म्ये महिषासुरवधौ  
 नाम सुतीक्ष्णोऽध्यायः ॥ ३ ॥

उवाच ॥ श्लोकः ४१ ण्वम् ४४ एवमष्टिता २१७ ॥

पावा वा किं देवीने अस्मिन् प्रमावते उते रोह विद्य ॥ ४१ ॥ आवा निष्क्रान्त  
 हानेतर मी महादेव्य देवीते बुद्ध करने जगा । एवं देवीने बहुत्र बड़ी  
 लज्जारेते उतरा मन्त्राक वरु मिष्टया ॥ ४२ ॥ फिर तो द्वादाहृत करती  
 हुए देव्यक्षी छठी सेना मृगा गयी तथा सम्पूर्ण देवता अल्पन्त प्रसन्न हो  
 गये ॥ ४३ ॥ देवताभिर्देवि दिव्य महर्षिभिर्देवि त्वं बुगदेवीत्य सावन विद्य ।  
 गन्धर्वराज गान तथा अप्सरोर्देवि वृत्त करने लगी ॥ ४४ ॥

इति त्रयस्र श्रीमार्कण्डेयपुराणस्य सारगर्भिके मन्त्रस्तोत्रे देवीमाहात्म्ये  
 'महिषासुर-वध' नामक तीसरा अध्याय पूरा हुआ ॥ ३ ॥

विद्या किंवा प्रणियों इत्येक वाद—अथ ॥ अक्षिरो ज्ञान लक्ष्म्या लज्जया ।  
 वैश्वदेव्यं तर्हि वा गु तया वक्ष्य विजयिनि ॥ वैश्वदेव्यैत्यत्र भूतैर्विदे  
 विजयिनि ॥ अथ बुद्ध जगत् सर्वं ननुतुषाप्सरोगणैः ॥ इत्यत्र अक्षिरो वाद ॥

## चतुर्थोऽध्याय

इन्द्रादि देवताओंद्वारा देवीकी स्तुति

ध्यानम्

मङ्कालाभ्रामां कटाक्षैररिक्तमयदां मौलिषद्वेन्दुरत्नां  
 चक्रं चक्रं कृपायं त्रिद्विस्त्रमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्रां ।  
 सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं  
 व्यावेदुर्दुर्गा जयास्मां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः॥

ॐ कृपितर्काय ॥ १ ॥

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये  
 तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या ।

सिद्धि की इच्छा रखनेवाले पुण्य विनयी सेवा करते हैं तथा देवता  
 जिन्हें जब मोरने धरे रहते हैं, उन स्वयां नामवासी सुरारिबीका ध्यान करे ।  
 उनके भीमहोमी आमा काळे मेचके तमान स्वयम् है । वे अपने कटखोले  
 शत्रुपूहकी मय प्रदान करती हैं । उनके मस्तकपर व्याम्ह कन्दमाकी रेखा  
 घोम्य पानी है । वे अपने हाथमें शङ्ख चक्र कृपाय और त्रिशूल धारण  
 करती हैं । उनके तीन नेत्र हैं । वे सिंहके कपिपर खड़ी हुई हैं और अपने  
 तेजसे तीनों लोकोंको परिपूर्ण कर रही हैं ।

अपि कहते हैं—॥ १ ॥ अत्यन्त पराक्रमी दुरात्मा मदिष्यामुर तथा  
 उग्री देव-सेनाके देवीके हाथमें मारे जानकर इन्द्र आदि देवता प्रसन्नके

१. किसी किसी प्रति में 'कृपितर्काय'के बाद 'तथा सुरगणा' लगे देवता स्तुति  
 मन्त्र । 'तुम्हारे विरुद्धे कर्तु विरुद्धे मदिष्यामुरे ॥' इत्यादि वाक्य अधिक है ।

तां तुष्टुवुः प्रयतिनप्रशिरोभरांसा  
 वाग्मि प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥  
 देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या  
 निपन्नेषदेवगणधृक्समूहमूर्त्या ।  
 तामम्बिकामस्त्रिलोचनमहर्षिपूज्यां  
 मयस्या नताः स विदधातु क्षुमानि सानः ॥ ३ ॥  
 यस्याः प्रभावमतुल मगवाननन्तो  
 ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमर्त्तं वक्तुं च ।  
 सा धम्बिकास्त्रिलोचनगत्परिपासनाय  
 नाश्रयं चाद्युमभवत्स मर्तिं करोतु ॥ ४ ॥  
 या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः  
 पापात्मनां कृतघ्निषां हृदयेषु बुद्धिः ।  
 मद्भा सतां कृतघ्नप्रमदस्य लज्जा  
 तां त्वां नताः स परिपास्य देवि विश्वम् ॥ ५ ॥

छिन्ने गर्दन तथा कबे छुवाकर उन भगवती दुर्गाका उच्छम बचनोंछुवा  
 लान करने लगे । उठ समस उनके सुन्दर अङ्गोंमें भस्मरूप हथके बाराव  
 रोमाञ्च हो जाता था ॥ २ ॥ देवता बोले—सम्पूर्ण देवताओंकी शक्तिका  
 समुदाय ही त्रिदश स्वरूप है तथा त्रिन देवीने अपनी शक्तिसे सम्पूर्ण  
 जगत्को स्यात कर रक्खा है तमस देवताओं और महर्षिओंकी पूजनीय  
 उन जगदम्बाको हम भक्तिपूर्वक नमस्कार करते हैं । वे हमसेगोता कल्याण  
 करें ॥ ३ ॥ त्रिनके अनुपम प्रभाव और वक्तव्य बर्णन करनेमें मयान्  
 रोचना ब्रह्माभी तथा महादेवभी भी समर्थ नहीं हैं वे भगवती धम्बिका  
 सम्पूर्ण जगत्का पावन एवं अद्युम भवका नाश करनेका विचार करें ॥ ४ ॥  
 ओ पुष्पादमानोंके योगसे स्वयं ही लक्ष्मीरूपसे पारिपत्यके बहो बलितास्मने  
 छुड जन्म-मरणनाश पुरुषोंके हृदयमें बुद्धिरूपसे, तत्पुरुषोंमें ब्रह्मरूपसे  
 तथा दुर्गाके अनुपम लक्ष्मीरूपसे निवास करती हैं उन व्याप भगवती दुर्गाको

किं वर्णयाम तव रूपमभिन्यमेतत्  
 किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि मूरि ।  
 किं बाह्वेषु चरितानि तवास्तुतानि  
 सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ ६ ॥  
 हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै  
 र्न ह्यामसे हरिहरादिमिरप्यपता ।  
 सर्वाभयास्त्रिलभिर्दं जगद्दशमृत  
 मभ्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वभाषा ॥ ७ ॥  
 यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन  
 वृत्तिं प्रयाति सकलेषु मत्सेषु देवि ।  
 स्वाहासि वै पितृगणस्य च वृत्तिहेतु  
 दृष्टार्यसे स्वमत एव खनै स्वभा च ॥ ८ ॥

॥ नमस्कार करते हैं । देवि ! तन्मूर्ध विषयका पावन श्रीक्रिये ॥ ५ ॥  
 देवि । आरके इत अविम्व रूपका अतुषोना नाच करने-बने माते परममका  
 तथा समस्त देवताओं और देवोंके समस्त पुत्रमें प्रकट किये हुए आरके  
 अतुषु परिचोष हम कित प्रकार वर्णन करें ॥ ६ ॥ अत तन्मूर्ध अतुषो  
 उत्तरार्धमें करण हैं । आरमें तल्लगुण, रम्येगुण और तमोगुण—ये तीनों  
 गुण मौजूद हैं। सो भी दोहोंके साथ आरका नतर्ग नहीं अन पड़ता । मात्वा  
 विष्णु और महादेवकी आरि देवता भी आरका पार नहीं पाते । अत ही  
 तनका भाव है । य समस्त जगत् आरका अंशमृत है। क्योंकि अत  
 सबही आदिमृत अभ्याकृता पर प्रकृति हैं ॥ ७ ॥ देवि ! तन्मूर्ध बहोंमें  
 त्रिके उच्चारणसे जग देवता तृतिमय करते हैं । च स्वाहा अत ही हैं ।  
 इनके अतिरिक्त अत त्रितोकी भी तृतिका कारण हैं अतएव तव स्तोम



या मुक्तिहेतुरविधिन्त्यमहाप्रता स्वं  
 मम्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः ।  
 माध्यामिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै  
 विद्यासि सा मगवती परमा हि देवि ॥ ९ ॥  
 श्रम्यदात्मिका सुषिमलुर्म्यमुषा निषान्न  
 मुद्गीयरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् ।  
 देवी श्रयी मगवती भवमावनाय  
 वाचा च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ॥ १० ॥  
 मेवासि दधि विदितासि तन्मात्रासता  
 दुर्गासि दुर्गमवसागरनारसङ्गा ।  
 श्रीः कैमारीद्वयैककृताधिवासा  
 गारी स्वमेव लक्ष्मीमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ ११ ॥

आपको स्वचा भी कहते हैं ॥ ८ ॥ देवि ! वो मोक्षकी शक्ति कावन है  
 अधिकतम महाप्रतापकण है समस्त दोषोंके उद्घात करनेवाला तत्त्वको ही  
 तार वस्तु माननेवाले तथा मोक्षकी अभिप्राय रखनेवाले मुनिजन मिलकर  
 सम्पन्न करते हैं वह भगवती पर विद्या आप ही हैं ॥ ९ ॥ आप राज्य  
 स्वक्या हैं अकलत निर्मल शून्येक बहुबेर तथा उद्घातके मनोहर पदोंके पाठसे  
 कुछ ताम्रदेवता भी आधार आप ही हैं । आप देवी श्रयी ( शीतो केव )  
 और मगवती ( लक्ष्मी ऐश्वर्यसे युक्त ) हैं । इत विद्याकी उदयति एवं पतनके  
 क्रिये आप ही वार्ता ( गैती एवं मात्रीविका ) के समर्थ प्रकट हुई हैं ।  
 आप लम्पुर्ष जगत्की धोर पीडाका नाश करनेवाली हैं ॥ १० ॥ देवि !  
 जिनसे समस्त घातोंके तारका घन होता है वह मेवाप्रति आप ही हैं ।  
 दुर्गम भवनागरसे पर उदारनेवाली नौकाकम युगविही भी आप ही हैं ।  
 आरम्भी कभी भी आगति नहीं है । कैवर्षके शत्रु मयमान् विष्णुके कथास्तोत्रमें  
 एकमात्र निवास करनेवाली भगवती कश्यप तथा मगवाल् चन्द्रोत्तराश्र



ते सम्मता कनपदेषु धनानि तेषां  
 तेषां यथासि न च सीदति धर्मवर्गः ।  
 पम्पास्त एष निमृतात्मनस्तत्पदारा  
 तेषां सदास्पृहयदा मयसी प्रसन्ना ॥१५॥  
 धर्माणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-  
 न्यत्माद्यः प्रतिदिनं सुकृती करोति ।  
 स्वयं प्रयाति च ततो मयसीप्रसादा-  
 न्नोक्तयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥१६॥  
 दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमक्षेपमन्तोः  
 तस्यैः स्मृता मतिमतीषां ह्युमा इवासि ।  
 दारिद्र्यदुःखमयहारिणि का त्वदन्वा  
 सर्वोपकारकराय सदाऽऽर्द्रचिन्ता ॥१७॥  
 एभिर्हैतैर्बगदुपेति सुखं तथैते  
 कर्तुं नाम नरकज्य विराय पापम् ।

बघी है ॥ १४ ॥ तथा अन्मुख प्रश्न करनेवाली बात किन्कर प्रत्यक्ष  
 रहती है वे ही देखते सम्मानित हैं अन्धीको चन और कष्टकी प्राप्ति होती  
 है अन्धीको धर्म कमी सिद्धि नहीं होता तथा वे ही अपने दुःख-पुत्र की  
 पुत्र और पुत्रोंके साथ कर्म मने करते हैं ॥१५॥ देवि । आपकी ही कृपासे  
 पुष्पात्मा पुत्र प्रतिदिन अत्यन्त बड़ापूर्वक तथा सब प्रकारके धर्मगुण  
 कर्म करता है और उनके प्रभावसे स्वर्गलोकात्मा जाता है; इच्छिते भाग लीने  
 कीकीमें निश्चय ही मोक्षोपायित फल देनेवाली हैं ॥ १६ ॥ अब दुर्गे । आप  
 करके करनेसे सब प्राप्तिवाली भव हर होती हैं और तत्त्व पुण्योपाय  
 किन्तु करनेसे उन्हें परमस्वाभावमयी बुद्धि प्राप्त करती हैं । दुःख इतिहास  
 और भय इनेवाली देवि । आपके निष्क हृत्ती कीन है किन्तु पित्र  
 लक्ष्मी उपकार करनेके लिये गया ही गया रहता हो ॥ १७ ॥ देवि । इस  
 राहोंके माननेसे लक्ष्मीका सुख मिले तथा वे गच्छत विरहाच्छत परमने

संप्राप्तमृत्युमपि गम्य दिव्यं प्रयान्तु  
 मत्वेति नूनमहितान् विनिश्चसि देवि ॥१८॥  
 इष्टैश्च किं न मयती प्रकरोति मम  
 सर्वासुरानपि यद्यहिणोपि क्षत्रम् ।  
 लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि क्षत्रपूता  
 इत्थं प्रतिर्मवसि तेष्वपि सेऽतिसाध्वी ॥१९॥  
 लङ्गप्रमानिकरविस्फुरणस्तथापि  
 शूलाप्रकान्तिनिषेन च्छोऽसुराणाम् ।  
 यन्मागता विलम्बमद्भुतमदिन्दुसम्भ  
 योम्याननं तव बिलोकयता तदेतत् ॥२०॥  
 दुर्हचदुश्चमनं तव देवि श्रीलं  
 रूपं तवैतद्विचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।  
 वीर्यं च हन्तु इतदेष पराक्रमार्ता

खनेके छिये मने ही पाप करते रहे हो इस समय संप्राप्तमे मृत्युको प्राप्त होकर  
 स्वर्गलोकमें जावें—निश्चय ही यही लोचकर आप शत्रुओंका वध करती  
 हैं ॥ १८ ॥ आप शत्रुओंपर शत्रुओंका प्रहार क्यों करती हैं ? तमस्त असुरोंको  
 हविषात्म्यावसे ही ममन क्यों नहीं कर देती ? इसमें एक रहस्य है । ये शत्रु  
 भी हमारे शास्त्रोंसे पवित्र होकर उत्तम लोकमें जावें—इस प्रकार उनके प्रति  
 मैं आपका विचार आत्मता उत्पन्न रहता है ॥ १९ ॥ लङ्गके ठेकपुङ्गवों  
 मर्मकर बीमोंसे तथा आपकी शिष्टाईके अग्रयागकी कमीभूत प्रमासे भी बिनाकर  
 जो असुरोंकी कौशलें पूर नहीं गयीं, उनमें कारण यही था कि ये स्मीहर  
 रश्मिसे कुछ प्रशस्तीके समान आनन्द प्रदान करनेवाले आत्मे इस सुन्दर  
 मुलका दर्शन करते थे ॥ २० ॥ देवि ! आपका हीन दुष्टचारियोंके हरे  
 वर्तानको दूर करनेवाला है । चाय ही वह रूप ऐसा है जो कभी क्षिप्तनमें  
 भी नहीं आ सकता और जिसकी कमी वृत्तोंसे तुच्छता भी नहीं हो सकती।  
 तथा आपका वह और पराक्रम तो उन देवीका भी गद्य करनेवाला है  
 जो कभी देवताओंके पराक्रमको भी मर कर चुके थे । इस प्रकार आपने

देरिष्यपि प्रकटिष्यैव हया स्वमेतन्म ॥२१॥  
 केनोपमा मणस्तु तेऽस्य पराक्रमस्य  
 रूपं च क्षत्रभयक्षयविहारि ह्रस्व ।  
 विष्टे कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा  
 स्वयमेव देवि वरदे सुबनत्रयेऽपि ॥२२॥  
 त्रैलोक्यमेतदस्त्रिंशं रिपुनाशनेन  
 व्रतं स्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा ।  
 नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-  
 मस्माकमुन्मदसुरारिमव नमस्ते ॥२३॥  
 शूलैर्न पाहि नो देवि पाहि स्वहृगेन चाम्बिके ।  
 षष्ठ्यास्वनेन नः पाहि बापन्यानिःस्वनेन च ॥२४॥  
 प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चम्बिके रक्ष दक्षिणे ।  
 आम्रमेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां त्वेयमरि ॥२५॥

शत्रुमार भी अपनी हया ही प्रकट की है ॥ २१ ॥ वरदविभी देवि ।  
 आपके इन पराक्रमकी कितने लाभ हुकना हो सकती है । तथा शत्रुओंको  
 भय देनेवाला एवं भयान्त मनोहर ऐसा रूप भी आपके सिवा और कहाँ  
 है । हरद्वारे कृपा और युद्धमें निष्ठुरता—ये दोनों बातें दोनों ओरोंके भीतर  
 केवल आपमें ही देखी गयी हैं ॥ २२ ॥ मात । आपने शत्रुओंका भय  
 करके इस सम्पूर्ण विश्वोकीभी रक्षा की है । उन शत्रुओंको भी युद्धमूर्तिमें  
 मारकर स्वर्गलोचमें पहुँचाया है तथा उन्मत्त देवोंमें प्राप्त होनेवाले हमलोगोंके  
 भयको भी दूर कर दिया है आत्मो हमारा नमस्कार है ॥ २३ ॥ देवि ।  
 आप शूलने हमारी रक्षा करें । चम्बिके । स्वहृगले भी हमारी रक्षा करें तथा  
 षष्ठ्याही स्त्रनि और वनुरही डकारने भी आप हमलोगोंकी रक्षा करें ॥ २४ ॥  
 चम्बिके । पूर्व पश्चिम और दक्षिण दिशामें आप हमारी रक्षा करें तथा  
 उत्तर दिशामें भी हमारी रक्षा

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विहरन्ति ते ।

यानि चात्यर्थपोराणि तै रद्यासांस्तथा युवम् ॥ २६ ॥

सदृग्मूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।

करपस्त्रसङ्गीनि तैस्मान् रक्ष सर्वत ॥ २७ ॥

श्रुतिवाच ॥ २८ ॥

एव स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।

अर्चिता जगतां घात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥ २९ ॥

मक्षया समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्षुषैस्तु भूषिता ।

प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥ ३० ॥

॥ दिव्यवाच ॥ ३१ ॥

त्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्योऽमिवाच्छिस्तम् ॥ ३२ ॥

करें ॥ २५ ॥ तीनों लोकोंमें आपके ओ परम सुन्दर एवं अत्यन्त मर्मकर रूप विचरते रहते हैं, उनके द्वारा भी आप हमारी तथा इस भूमीकी रक्षा करें ॥ २६ ॥ अम्बिके । आपके कर-पस्त्रोंमें शोभा पनेवाले लक्ष्म हथ और गदा आदि ओ-ओ वस्तु हैं उन सबके द्वारा आप सब ओरसे हमसे-सबकी रक्षा करें ॥ २७ ॥

श्रुति कहते हैं—॥ २८ ॥ इस प्रकार जब देवताओंने जगत्प्रभु भूर्गकी स्तुति की और मन्दन-वनके दिव्य पुष्पों एवं गन्ध-सन्धन आदिके द्वारा उनका पूजन किया । फिर अपने मित्रकर जब अक्षिपूर्वक दिव्य षूषोंकी सुगन्ध निवेदन की तब देवीने प्रसन्नवदन होकर प्रणाम करते हुए सब देवताओंसे कहा—॥ २९ ३ ॥

देवी बोलीं—॥ ३१ ॥ देवताओं । तुम सब लोग मुझसे मिल करसुखी अभिमान रखते हो, उसे माँगो ॥ ३२ ॥

१ पा०—वैः सुश्रुति । २ मर्षणैकपुत्रावधौ अपुत्रिण ममिषोमे—

वरान्तरमपिरीत्य सार्वेतिः सुश्रुति । १ एता वाड अपिड है । मिनी-मिनी

देवा उवाच ॥ ३३ ॥

भगवत्प्रा कृतं सर्वं न किंपिदबधिष्यते ॥ ३४ ॥  
 यद्यं निहतः शत्रुरसात्कं महिषासुरः ।  
 यदि चापि बरो देवस्त्वयासाकं महेश्वरि ॥ ३५ ॥  
 मंस्मृता संस्मृता त्व नो हिंसेया परमापदः ।  
 मय मर्त्यः त्वभैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥ ३६ ॥  
 तस्व विचर्हिषिमवैर्भनवरादिसम्पदाम् ।  
 इदमेऽसात्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ ३७ ॥

श्रुत्वा ॥ ३८ ॥

इति प्रसादिता देवैर्नगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः ।  
 तथेत्सुक्त्वा मद्रक्ष्णी वसुबन्तहिता नृप ॥ ३९ ॥  
 इत्येतस्त्वयितं मूय सम्भूता सा यथा पुरा ।

देवता बोले—॥ ३३ ॥ सम्भवतीने हमारी तब इच्छा पूर्ण कर दी-  
 अब कुछ भी बचती नहीं है ॥ ३४ ॥ क्योंकि हमका वह शत्रु महिषासुर  
 मारा गया । महेश्वरि । इतनेपर भी यदि आप हमें और बर देना चाहती  
 हैं ॥ ३५ ॥ तो हम जब जब आपका स्मरण करें तब-तब आप बर्जन देकर  
 हमकोबोके मद्रक्ष्णी मद्रक्ष्णी दूर कर दिया करें तथा प्रलयनशुद्धी अभिषेक ।  
 ओ सम्भूत इन लोभोद्वेगों का भावकी स्तुति करो, उसे विष्णु समृद्धि और वैभव  
 देनेके साथ ही उत्तरी मन और श्री आदि तत्त्वविष्णु की बखानेके श्रिये  
 आप तथा हमारा प्रणमन रह ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

श्रुति कहते हैं—॥ ३८ ॥ राजन् । देवताओंने जब अपने तथा  
 मद्रक्ष्णी सम्भवक श्रिये मद्रक्ष्णी बखानी इत प्रकार प्रणम किया, तब वे  
 भगवाण कहकर बरा सम्भवतीने दी गयी ॥ ३९ ॥ भूयम् । इत प्रकार

प्रतिवे देवता तथा भूयम् तब विद्वत् प्रणमन करी देवता प्रणमने  
 की ना नीर वि पाद २

देवी देवशरीरेभ्यो जगत्प्रयदितैषिणी ॥४०॥  
 पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्रता यथामवत् ।  
 यथाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः ॥४१॥  
 रक्षसाश्च च लोकानां देवानामुपकारिणी ।  
 तन्मृशुष्व मयाऽऽस्म्यार्तं यथावत्कथयामि ते ॥४२॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

सकादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

उवाच ५ अर्चयेन्मै २, श्लोकः ३५

पञ्चम् ४२ पञ्चमान्तिः ॥ २५९ ॥



पूर्वकाध्याये टीको छोकोका हित पारनेवाली देवी जिस प्रकार देवताओंके  
 शरीरोंसे प्रकट हुई थी वह सब कथा मैंने कह सुनायी ॥ ४ ॥ अब पुनः  
 देवताओंका उपकार करनेवाली वे देवी दुष्ट दैत्यों तथा शुम्भ निशुम्भका  
 वध करने एवं सब लोकोंकी रक्षा करनेके लिये गौरीदेवीके शरीरसे जिस  
 प्रकार प्रकट हुई थी वह सब प्रसङ्ग मेरे मुँहसे सुनो । मैं उल्लास तुमसे यथावत्  
 वर्णन करता हूँ ॥ ४१ ४२ ॥

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराणमें सार्वर्णिक मन्वन्तरकी कथाने अन्त्यमें

देवीमाहात्म्यमें 'सकादिस्तुति' नामक श्रीया अध्याय पूरा

हुआ ॥ ४ ॥



१ किमी-रिमी प्रक्तिमें श्रीदेहा ला' श्री देहा सा' कन्जि रर मी  
 वरउन्व होने है ।



## पञ्चमोऽध्यायः

धैर्यताओंद्वारा देवीकी स्तुति, चण्ड-मुण्डके  
मुखसे अम्बिकाके रूपकी प्रशंसा  
सुनकर शुम्भका उनके पास  
दूत भेजना और दूतका  
निराश लौटना

—॥॥॥—

### विनियोग

ॐ ब्रह्म श्रीउत्तरचरित्रक ध्यायति महातरुवती देवता  
अनुपुप कन्द, भीमा मणि, कामरी बीजं सर्वकर्म साधनेन  
सर्वम् महातरुवतीप्रोक्तं उत्तरचरित्रादे विनियोगः ।

ध्यानम्

ॐ पद्मासुहसानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं  
इत्यम्बैर्दधती पनान्तरिक्षसङ्घीतांशुस्यप्रमाम् ।

ॐ इस उत्तर चरित्रके यह अंगि है, महातरुवती देवता है अनुपुप  
कन्द है भीमा मणि है कामरी बीज है सर्व कर्म है और सामने  
अरुण है । महातरुवतीकी प्रशंसाके लिये उत्तर चरित्रके पाठमें इसका  
विनियोग किया जाता है ।

जो करने करक्रममें पद्मा शङ्ख, इक, शङ्ख, धनुः, चक्र धनुष और  
बाण धारण करती । शङ्खशङ्खके शोभासम्पन्न पद्मादेवताके समान यिनकी मन्त्रोदर

गौरीदेवसमुद्रभां त्रिजगतामाधारमूर्तां महा-  
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुमजे शुम्भादिदैत्यादिनीम् ॥

‘ॐ ह्रीं’ आपित्वा च ॥ १ ॥

पुरा शुम्भनिशुम्भाम्यामसुरार्यां क्षपीपते ।  
त्रैलोक्यं यज्ञमागाध इता मदबलाभयात् ॥ २ ॥  
तावेव क्षयतां सद्बधिकार तयैन्दवम् ।  
काँवेरमथ याम्य च चक्राते वरुणस्य च ॥ ३ ॥  
तावेव पवनर्हि च चक्रसुर्वहिकर्म च ।  
तता देवा विनिर्पृता अष्टरान्याः पराजिताः ॥ ४ ॥  
इताधिकारास्त्रिदशास्ताम्यां सर्वे निराकृताः ।  
महासुरार्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥ ५ ॥  
तयाभार्कं वरा दत्तो यथाऽऽपस्तु स्मृतास्तिलाः ।  
मयतां नाशयिष्यामि सत्त्वघात्परमापदः ॥ ६ ॥

अन्ति है श्री तीनों छोड़ीनी आधारभूता और शुम्भ आदि दैत्यों का नष्ट करनेवाली है तथा गौरीके शरीरसे विनका प्राप्त हुए हैं उन महात्वरत्नती देवीका मैं निरन्तर मन्त्रन करता हूँ ।

श्रुति कहते हैं—॥ १ ॥ पूर्वजन्मे शुम्भ और निशुम्भ नामक असुरोंने अपने बलके प्रभुके आकर क्षपीपति इन्द्रके हाथसे तीनों लोकोंका राज्य और कलमग्न चीन जिने ॥ २ ॥ वे ही दोनों पूर्व जन्मका कुबेर वरुण और वरुणके अधिकारका भी उन्नीका करने लगे । वायु और अग्नि का कार्य भी वे ही करने लगे । उन दोनोंने नष्ट देवताओंके अग्रगणित, राक्षस, पक्षि तथा अश्विपत्नी करके स्वर्गसे निकाल दिया । उन दोनों महान् असुरोंने तिरसृत देवताओंके अग्रगणित देवीका शरण किया और छोटा पञ्चदशने हमकायोंको बर दिया था कि आराधितारमें स्मरण करनेपर मैं शुम्भानी तथा

१ द्विती-द्विती त्रिमे इतके बाद ‘अन्ते’ वाचिकराज्य नष्टकरनेवाली

राजा राज अधिक है

इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नमोभरम् ।

अमुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुषु ॥ ७ ॥

देवा उचुः ॥ ८ ॥

नमा देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।

नमः प्रकृत्यै भगवत्यै नियताः प्रणताः स ताम् ॥ ९ ॥

रौद्रायै नमा नित्यायै गीर्ष्यै धाम्यै नमो नमः ।

व्योस्त्नायै चन्द्ररूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥ १० ॥

कल्याण्यै प्रवर्तयै हृदयै सिद्धयै कुर्मो नमो नमः ।

नैर्ऋत्यै भूमृता उरुम्यै श्रवाण्यै ते नमः नमः ॥ ११ ॥

दुर्गायै दुर्गपारम्यै सारायै सर्वकारिण्यै ।

स्यात्यै तथैव कृष्णायै भूमयै सततं नमः ॥ १२ ॥

आपदिबोका वल्कल नाथ कर हूँगी ॥ १—९ ॥ यह विचारकर देवता गिरिराज हिमालयपर गये और वहाँ भगवती विष्णुमायाकी स्तुति करने लगे ॥ ७ ॥

देवता बोले—॥ ८ ॥ देवीको नमस्कार है, महादेवी शिवाको सर्वदा नमस्कार है । प्रकृति एवं भगवती प्रणाम है । हमारी नियमपूर्वक आराधनाको नमस्कार करते हैं ॥ ९ ॥ रौद्राको नमस्कार है । नित्य गीर्ष्य एवं धात्रीको बारबार नमस्कार है । व्यासनाथकी कल्याण्यै एवं सुखस्वरूप देवीकी उक्त प्रणाम है ॥ १० ॥ शरणागतीका उद्वेग करनेवाली हृदि एवं चिद्धि रूपा देवीको हम बारबार नमस्कार करते हैं । नैर्ऋती ( रासलीला करुण ) रासलीला करुणी तथा श्रवाणी ( शिवाजी ) स्वरूपा आप आराधनाको बार बार नमस्कार है ॥ ११ ॥ दुर्गा दुर्गपारा ( दुर्गा नमस्कारों पर उद्वेग करनेवाली ) सारा ( नवनी नारमृता ) सर्वकारिणी, अर्थात् कृष्णा और

हृदयै सिद्धयै व प्रवर्तयै देवी अति नमो मति कुर्मो लक्षणम् । कर वा कल्याणानि प्रकृत्यै तेषां लक्षणमिति वहीनदुष्टचक्षणं योगम् । इति कल्याणार्थ स्तोत्रम् अन्ता इति पाठ्यम्

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।

नमो जगत्प्रतिष्ठायै दम्ब्यै कृत्यै नमो नमः ॥१३॥

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायति क्षमिता ।

नमस्तस्यै ॥१४॥ नमस्तस्यै ॥१५॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥१६॥

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।

नमस्तस्यै ॥१७॥ नमस्तस्यै ॥१८॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥१९॥

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण सम्मिता ।

नमस्तस्यै ॥२०॥ नमस्तस्यै ॥२१॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥२२॥

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण सम्मिता ।

नमस्तस्यै ॥२३॥ नमस्तस्यै ॥२४॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥२५॥

या देवी सर्वभूतेषु सुषारूपेण सम्मिता ।

नमस्तस्यै ॥२६॥ नमस्तस्यै ॥२७॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥२८॥

धूम्रादबीजो सर्वदा नमस्कार है ॥ १२ ॥ अत्यन्त लोभ तथा अत्यन्त  
रोद्ररूपा देवीको हम नमस्कार करते हैं उनहें हमारा बारबार प्रणाम है ।  
कालकी आचारभूता बुद्धि देवीको बारबार नमस्कार है ॥ १३ ॥ जो देवी  
जब प्राणिजोंमें विष्णुमायाके मायने कही जाती हैं उनको नमस्कार, उनको  
नमस्कार, उनको बारबार नमस्कार है ॥ १४-१५ ॥ जो देवी जब प्राणिजोंमें  
चेतना कहलाती है उनका नमस्कार, उनका नमस्कार उनको बारबार  
नमस्कार है ॥ १६-१९ ॥ जो देवी जब प्राणिजोंमें बुद्धिरूपमें स्थित हैं  
उनको नमस्कार उनको नमस्कार उनका बारबार नमस्कार है ॥ २०-२२ ॥  
जो देवी जब प्राणिजोंमें निद्रारूपमें स्थित हैं उनका नमस्कार, उनको नमस्कार,  
उनको बारबार नमस्कार है ॥ २३-२५ ॥ जो देवी जब प्राणिजोंमें  
सुषारूपमें स्थित हैं उनको नमस्कार उनको नमस्कार उनको बारबार

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै ॥२०॥ नमस्तस्यै ॥२०॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥२१॥  
 या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै ॥२२॥ नमस्तस्यै ॥२३॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥२४॥  
 या देवी सर्वभूतेषु वृष्णारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै ॥२५॥ नमस्तस्यै ॥२६॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥२७॥  
 या देवी सर्वभूतेषु ध्यान्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै ॥२८॥ नमस्तस्यै ॥२९॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥३०॥  
 या देवी सर्वभूतेषु ध्यान्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै ॥३१॥ नमस्तस्यै ॥३२॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥३३॥  
 या देवी सर्वभूतेषु ध्यान्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै ॥३४॥ नमस्तस्यै ॥३५॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥३६॥  
 या देवी सर्वभूतेषु ध्यान्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै ॥३७॥ नमस्तस्यै ॥३८॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥३९॥

नमस्कार है ॥ १-२८ ॥ जो देवी तथा प्राणिजोंमें शक्तिरूपमें स्थित हैं  
 उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारबार नमस्कार है ॥२९-३१॥  
 जो देवी तथा प्राणिजोंमें शक्तिरूपमें स्थित हैं उनको नमस्कार, उनको नमस्कार  
 उनको बारबार नमस्कार है ॥ ३२-३४ ॥ जो देवी तथा प्राणिजोंमें  
 वृष्णारूपमें स्थित हैं उनको नमस्कार उनको नमस्कार उनको बारबार  
 नमस्कार है ॥ ३५-३७ ॥ जो देवी तथा प्राणिजोंमें ध्यान्ति ( ध्यान्ति ) रूपमें  
 स्थित हैं उनको नमस्कार उनको नमस्कार उनको बारबार नमस्कार है  
 ॥ ३८-४० ॥ जो देवी तथा प्राणिजोंमें ध्यान्तिरूपमें स्थित हैं उनको  
 नमस्कार उनको नमस्कार उनको बारबार नमस्कार है ॥ ४१-४३ ॥ जो  
 देवी तथा प्राणिजोंमें ध्यान्तिरूपमें स्थित हैं उनको नमस्कार उनको नमस्कार  
 उनको बारबार नमस्कार है ॥ ४४-४६ ॥ जो देवी तथा प्राणिजोंमें ध्यान्ति  
 रूपमें स्थित हैं उनको नमस्कार उनको नमस्कार उनको बारबार

या देवी सर्वमृतेषु भद्रारूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥५०॥ नमस्तस्यै ॥५१॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥५२॥

या देवी सर्वमृतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥५३॥ नमस्तस्यै ॥५४॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥५५॥

या देवी सर्वमृतेषु उष्मीरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥५६॥ नमस्तस्यै ॥५७॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥५८॥

या देवी सर्वमृतेषु वृष्टिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥५९॥ नमस्तस्यै ॥६०॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥६१॥

या देवी सर्वमृतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥६२॥ नमस्तस्यै ॥६३॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥६४॥

या देवी सर्वमृतेषु दयारूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥६५॥ नमस्तस्यै ॥६६॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥६७॥

या देवी सर्वमृतेषु सुष्टिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥ ४७-४९ ॥ ओ देवी तव प्राणिष्वेभ्यो भद्राकरोत्ये स्थित है

उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारबार नमस्कार है ॥५०-५२॥

ओ देवी तव प्राणिष्वेभ्यो कान्तिरूपे स्थित है, उनको नमस्कार, उनको

नमस्कार, उनको बारबार नमस्कार है ॥ ५३-५५ ॥ ओ देवी तव

प्राणिष्वेभ्यो उष्मीरूपे स्थित है, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको

बारबार नमस्कार है ॥ ५६-५८ ॥ ओ देवी तव प्राणिष्वेभ्यो वृष्टिरूपे

स्थित है, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारबार नमस्कार है

॥ ५९-६१ ॥ ओ देवी तव प्राणिष्वेभ्यो स्मृतिरूपे स्थित है, उनको

नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारबार नमस्कार है ॥ ६२-६४ ॥

ओ देवी तव प्राणिष्वेभ्यो दयारूपे स्थित है, उनको नमस्कार, उनको

नमस्कार, उनको बारबार नमस्कार है ॥ ६५-६७ ॥ ओ देवी तव प्राणिष्वेभ्यो

नमस्तस्य ॥६८॥ नमस्तस्य ॥६९॥ नमस्तस्य नमो नमः ॥७०॥

या देवी सर्वमृतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्य ॥७१॥ नमस्तस्य ॥७२॥ नमस्तस्य नमो नमः ॥७३॥

या देवी सर्वमृतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्य ॥७४॥ नमस्तस्य ॥७५॥ नमस्तस्य नमो नमः ॥७६॥

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री मृतानां चाम्बिष्ठपु या ।

मृतेषु सुततं तस्य व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ॥७७॥

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगद् ।

नमस्तस्य ॥७८॥ नमस्तस्य ॥७९॥ नमस्तस्य नमो नमः ॥८०॥

स्तुता सुरैः पूर्वममीष्टुं भवा-

तया सुरन्त्रेण दिनेषु सेविता ।

क्याप्तु सा नः शुभहतुरीधरी

शुमानि भद्राप्समिहन्तु चापदः ॥८१॥

कृत्स्नरूपे स्थित हैं उनकी नमस्कार, उनकी नमस्कार, उनकी चारचार नमस्कार है ॥ ६८- ॥ ओ देवी तब प्राणियोंमें मातृरूपे स्थित हैं

उनकी नमस्कार उनकी नमस्कार उनकी चारचार नमस्कार है ॥ ७१-७३॥

ओ देवी तब प्राणियोंमें भ्रान्तिरूपे स्थित हैं उनकी नमस्कार, उनकी नमस्कार उनकी चारचार नमस्कार है ॥ ७४-७६ ॥ ओ देवी तब इन्द्रिय-

काकी भाषणात्री तभी एवं तब प्राणियोंमें तथा व्याप्त रहनेवाली हैं उन व्याप्तिदेवीकी चारचार नमस्कार है ॥ ७७॥ ओ देवी चैतन्यरूपमें इत तत्पूर्व

क्याप्तु सा नः शुभहतुरीधरी शुमानि भद्राप्समिहन्तु चापदः ॥ ८०-८॥ पूर्वजन्ममें अपने अमीशरी प्राप्ति होने

में दयाला प्रभिनकी शक्ति की तथा देवराज इन्द्रने बहुत दिनोंक प्रिया सेवन किया वह कल्याणकी लावनभूता ईश्वरी हमारा कल्याण और माह

या साम्प्रतं षोडशत्यतापितं  
रम्याभिरीक्षा य मुरैर्नमस्यते ।  
या य स्मृता सख्यणमेव हन्ति न  
सरापदा भक्तिरिनम्रमूर्तिभिः ॥८२॥

अभिग्याप ॥ ८२ ॥

पर्वं मयादियुक्तानां दधानां तत्र पार्वती ।  
ग्रातुमम्यापयां ताव आद्यम्या नृपनन्दन ॥८४॥  
गाम्परीक्षान् गुगान् गुध्रमराद्रि स्तुपतेऽत्र का ।  
धरीम्काग्रतपाम्याः मसुनूभूताप्रसीष्टिता ॥८५॥  
मार्गं ममनन् स्थितं गुम्भदेत्यनिगुहृतः ।  
दवे ममन गमर निगुम्भन परावित ॥८६॥  
धरीरस्यशापसम्या पारन्या निःश्रुताम्बिका ।  
क्रीडिनीति ममन्तु यता साक्यु गीयत ॥८७॥

श्री लला लली कालीदेवी का मया वरदा ॥ ८१ ॥ उदय देवते ललादे  
दुष्ट ह्ये लली देवता (मि ललादेवी) एत लला मया वर करे है मया  
मोक्ष मे मिमि पुनः उदय मया वी मनेम त कथ है मया वर करे है  
का मया वर देते है वे का मया मया मया वर करे ॥ ८२ ॥

अभि वरदा है—॥ ८३ ॥ गमन । एत मया वर देवता लली  
का १८ वे एत लला लली है लला देवी ॥ ८४ ॥ मया वर देते है ॥ ८५ ॥  
का १८ उदय पुनः उदय मया वर देते है ॥ ८६ ॥ मया वर देते है  
मया वर देते है ॥ ८७ ॥ मया वर देते है ॥ ८८ ॥ मया वर देते है  
मया वर देते है ॥ ८९ ॥ मया वर देते है ॥ ९० ॥ मया वर देते है  
मया वर देते है ॥ ९१ ॥ मया वर देते है ॥ ९२ ॥ मया वर देते है  
मया वर देते है ॥ ९३ ॥ मया वर देते है ॥ ९४ ॥ मया वर देते है  
मया वर देते है ॥ ९५ ॥ मया वर देते है ॥ ९६ ॥ मया वर देते है  
मया वर देते है ॥ ९७ ॥ मया वर देते है ॥ ९८ ॥ मया वर देते है  
मया वर देते है ॥ ९९ ॥ मया वर देते है ॥ १०० ॥ मया वर देते है



तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णामृत्सापि पार्वती ।  
 कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताभया ॥८८॥  
 तवाऽम्बिकां परं रूपं विभ्राणां सुमनोहरम् ।  
 ददर्श चण्डा मुण्डश्च मृत्यो शुम्भनिशुम्भयोः ॥८९॥  
 ताम्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा ।  
 कृष्णास्ते स्त्री महाराज मासयन्ती हिमाचलम् ॥९०॥  
 नैव तादृकं कश्चिदप्यष्ट केनचिदुत्तमम् ।  
 ज्ञापतां कृष्णसौ देवी शृङ्गतां चासुरेश्वर ॥९१॥  
 स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिक्षस्त्रिधा ।  
 सा तु विद्यति दैत्येन्द्र तां भवान् ब्रह्ममहति ॥९२॥  
 यानि रत्नानि मणयो गङ्गाद्यादीनि वै प्रभो ।  
 त्रैलोक्ये तु समन्तानि साम्प्रतं मान्ति ते गृहे ॥९३॥

वे समस्त लोकोंमें 'कोटिग्री' कही जाती है ॥८८॥ कालिकाके प्रकट होनेके बाद पार्वतीदेवीका स्वरूप कल्पे रगड़ा हो गया कदा वे हिमालयके खनेवाली कालिकादेवीके नामसे विख्यात हुई ॥ ८८ ॥ तदनन्तर शुम्भ-निशुम्भने मृत्यु चण्ड मुण्ड कहां आये और उन्होंने परम मनोहर रूप धारण करनेवाली अम्बिकादेवीको देखा ॥८९॥ फिर वे शुम्भके पास जाकर बोले—  
 महाराज ! एक अत्यन्त मनोहर स्त्री है जो अपनी दिम्पकान्तिसे हिमालयके प्रकाशित कर रही है ॥ ९ ॥ क्या उत्तम रूप कही किन्हीं मी बही देखा होगा । असुरेश्वर ! क्या समझिये वह देवी कौन है और उसे के खोजिये ॥ १ ॥ जिसमें तो वह राज है उत्तम प्रत्येक अज्ञ बहुत ही दुन्दुभर है तथा वह अपने श्रीमहोदारी प्रभासे सम्पूर्ण विश्वभूमिमें प्रकाश फैल रही है । हेवराज ! जभी वह हिमालयपर ही मौजूद है आप उसे देख सकते हैं । ॥ २ ॥ प्रभो ! तीनों लोकोंमें मणि हाथी और बोदे यादि जितने भी राज है वे सब इस नामक आनेके परम योग्य पाते हैं ॥ ९३ ॥

ऐरावत समानीतो गजवरत्नं पुरन्दरात् ।  
 पारिजातवक्ष्यायं तथैवोन्मैः प्रभा इयं ॥९४॥  
 विमानं हससपुष्कमेतत्पिपुति तेऽङ्गणे ।  
 रत्नमूषमिहानीतं यदासीद्दशसोऽङ्गुलम् ॥९५॥  
 निधिरेष महापद्मः समानीतो घनेभरात् ।  
 किञ्चिच्छिन्नी ददौ चाम्बिमालामम्लानपङ्कजाम् ॥९६॥  
 छत्रं ते धारुणं गङ्गे काञ्चनस्रावि विपुति ।  
 तथार्यं स्यन्दनवरो यः पुराऽऽसीत्प्रवापतेः ॥९७॥  
 मृत्योस्तृकान्तिदा नाम शक्तिरीष स्वया इता ।  
 पाशः सत्तिरराजस्य आतुम्बु परिग्रहे ॥९८॥  
 निश्रुम्मम्याम्बिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः ।  
 बद्धिरपि ददौ तुम्यमग्निर्ग्राहे च वासमी ॥९९॥

अथिचैमिरत्नभूतऐरावत यहपरिजातका नृपभीरवहउन्मैः प्रभा बोद्धा—यह  
 तब आरने इच्छत से किया है ॥ ९४ ॥ इतोंसे बुना हुआ यह विमान भी आरने  
 भोगनमें शोभा पाया है । यह रत्नभूत अङ्गुल विमान को पहले ब्रह्मासीके पास  
 था जब आरने यहाँ आया मया है ॥ ९५ ॥ वहाँ महाराज नामक निधि अर  
 बुदेरसे छिन लाये हैं । लज्जुहने भी आरनेको किञ्चिच्छिन्नी नामकी माय्य में  
 की है जो केन्द्रमें सुयोगित है और शिखर कमल कमी बुन्दबन्दते नहीं  
 है ॥ ९६ ॥ मुर्गाही बर्ग करमेताम्य बदनका छत्र भी आरने परमें शोभा  
 पाया है तथा वह भेद रत्न जो पद-प्रकाशितके अधिधाममें था अब आरने  
 काय मोहर है ॥ ९७ ॥ देखेपर ! मृत्युकी उल्लसितता नामकी छत्रि भी  
 आरने छिन ली है तथा बदनका पाश और लज्जुहमें होनेछने लय प्रकारके रत्न  
 आरने अर निश्रुम्मके अधिधाममें हैं । अग्निने भी स्वयं छत्र द्विप हुए हो

एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते ।

क्षीरसमेपा कल्याणी त्वया कस्याम् गृह्यते ॥१००॥

श्रुतिस्मात् ॥ १०१ ॥

निधम्येति वचः श्रुम्यः स तदा वण्डमुण्डयाः ।

प्रेषयामास सुग्रीवं हृत देव्या महासुरम् ॥१०२॥

इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम ।

यथा वाम्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ॥१०३॥

स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलदेहेऽतिष्ठोमने ।

सौ देवी तां ततः प्राह प्लक्ष्यं मधुरया गिरा ॥१०४॥

इति उवाच ॥ १०५ ॥

देवि दत्तेधरः श्रुमन्मूर्खोऽप्ये परमेधरः ।

दुतोऽहं प्रेषितस्तेन स्वस्त्यक्षमिहागतः ॥१०६॥

वचन आत्मी केवले अर्पित किये हैं ॥ १८ १९ ॥ देवपुत्र । इत प्रकार समी  
रत्न भास्ते एकत्र कर किये हैं । फिर जो वह क्षीरसमेपा रत्नसम कल्याणमयी  
देवी है इसे माय कबो नहीं अपने अधिनारमें कर केते ॥ १ ॥

श्रुति कहत हैं—॥ १ १ ॥ वण्ड मुण्डका यह वचन सुनकर श्रुमन्ने  
महादेव सुग्रीवजी वृत्त बनाकर देवीके पास भेज आये और कहा—तुम मेरी  
माझमें उम्मे नामने यत्र वार्ते कहमा और एता उवाच करना श्रितसे  
प्रकृत होकर वह क्षीर ही मर्ग या जाय ॥ १ २-१ ३ ॥ यह वृत्त पर्वतके  
अत्यन्त समशील प्रहारायें अर्धों देवी मौजूद थीं गया और मधुर वाणीसे  
बोम्बत बचन बोला ॥ १ ४ ॥

नून वाम्य—॥ ॥ वणि दे यत्रा श्रुम्य इति ममव टीमें ओहीके  
परमेश्वर हैं । मैं उम्मीका भय आभा वृत्त हैं प्रीति यत्रा तुम्हारे ही पास आया

॥ —इति वचन कही कही 'श्रुमन्' उवाच' शब्दों जड़ित पाठ है ।

१ ४ —ता च देवी नन

अप्याहृताः सवामु य सदा देवयोनिषु ।  
 निर्वृतास्त्रिदश्यानि स यदाह मृणुष्व तत् ॥१०७॥  
 मम प्रलोक्यमस्त्रिदश्यानि मम दद्यात् वशानुगा ।  
 यद्गमयानहं सर्वानुपाशनामि पृथक् पृथक् ॥१०८॥  
 प्रलोक्ये परस्त्रिदश्यानि मम वशानुपाशनाः ।  
 तथैव गजैर्न च हस्त्रां देवेन्द्रवाहनम् ॥१०९॥  
 क्षीरादमधनोद्भूतमश्नन् ममामरः ।  
 उच्चैः श्रवससंश्रुतमणिपत्य समर्पितम् ॥११०॥  
 धानि शान्यानि दशेषु गन्धर्वैरुपगु च ।  
 रत्नमूतानि मूतानि शानि मय्येष धामने ॥१११॥  
 क्षीरसमूतां त्वां दधि लाक मन्थामहे वयम् ।  
 सा त्वमन्थानुपागच्छ यता रत्नसुखा वयम् ॥११२॥

है ॥ १ १ ॥ उनही आज रात सब देवता एक स्थाने मिलने हैं । कोई  
 उनका उपासना नहीं कर सकता । वे लगभग दशार्ध पल कर चुके  
 हैं । उन्होंने तुम्हारे लिये जो शिष्ट दिया है उभरना ॥ १० ॥ अमूर्त  
 विषयी मेरे अधिकारमें है । देवता भी मेरी आज्ञाके अधीन बनते हैं ।  
 लगभग पन्द्रह मासोंसे मैं ही पृथक्-पृथक् भोगता हूँ ॥ ११ ॥ तल्ले  
 लाकमें त्रिनेत्र रख है व सब मेरे अधिकारमें है । दशम दशका  
 करने पगारा जो हथियी रखे लगान दे मैंने छिन्न दिया है ॥ १२ ॥  
 क्षीरमयका मन्थ करने में जो अधिकार उन्ने-जसा प्रकट हुआ था, उस  
 देवताओं में देवता पहचान नमर्पित किया है ॥ ११ ॥ सुनो । उनके  
 निरा भी मैं त्रिनेत्र रख-रख करके देवताओं गन्धर्वों और मर्त्यों के पक्ष  
 में वे सब मेरे ही पक्ष आगये हैं ॥ १११ ॥ देखो । हमारे तुम्हें नकार  
 की धिक्कारें रख करने हैं अतः तुम हमारे पक्ष आ जाओ, क्योंकि रक्षक

मां वा ममानुजं वापि निष्कुम्भमुरुविक्रमम् ।

भवत्वं चञ्चलापाङ्गि रत्नभूतासि वै पतः ॥११३॥

परमैश्वर्यमनुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् ।

एतद् बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहात् व्रज ॥११४॥

कवित्वाच ॥ ११५ ॥

इत्युक्त्वा सा तदा देवी गम्भीरान्तःसिता जगौ ।

बुर्गा भगवती मद्रा वयेदं वार्यते जगत् ॥११६॥

देवमुवाच ॥ ११७ ॥

सत्यमुक्तं स्वया नात्र मिथ्या किञ्चिच्चयोदितम् ।

त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निष्कुम्भवापि तादृशः ॥११८॥

किं त्यक्त्वा पत्यविहातं मिथ्या सत्क्रियतं कथम् ।

भूयतामन्यबुद्धिस्तात्प्रतिज्ञा या कृता पुरा ॥११९॥

उपमेग करनेवाले इस ही हैं ॥ ११२ ॥ चञ्चल कन्याओंवाली सुन्दरी । तुम मेरी या मेरे माई म्हायतकमी निष्कुम्भकी ऐनामें या जामो। क्योंकि तुम रत्नत्वक्या हो ॥ ११३ ॥ मेरा वरण करनेसे तुम्हें सुखान्तरित भान्द पंचवर्षकी प्राप्ति होगी । अपनी बुद्धिसे यह विचारकर तुम मेरी पत्नी बन जानो ॥ ११४ ॥

श्रुति कहते हैं ॥ ११५ ॥ बुद्धिसे ही कहनेपर कन्यात्वमयी मन्मथी बुर्गादेवी को इस जगत्को धारण करती है। मन-ही-मन गम्भीर भावसे मुक्तकराती और इस प्रकार बोली—॥ ११६ ॥

देवीसे कहा—॥ ११७ ॥ बूढ़े । तुमने तब कहा है। इतने लज्जित भी मिथ्या नहीं है । शुम्भ लीने कोकोई स्वामी है और निष्कुम्भ भी उतने समान पराजयी है ॥ ११८ ॥ किंतु इस कियसे मैंने जो प्रतिज्ञा कर ली है उसे मिथ्या बेंधे नहीं । मैंने अपनी अस्तबुद्धिसे वरण पहनेसे जो

यो मां जयसि सग्रामे या मे दर्पं व्यपोहसि ।  
 यो मे प्रतिबलो लोके स मे मर्ता मविष्पति ॥१२०॥  
 वदागच्छतु शुम्भाञ्च निशुम्भो वा महासुरः ।  
 मां किंवा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णतु मे लघु ॥१२१॥

इति उवाच ॥ १२२ ॥

अवलित्तासि मैवं त्वं देवि शूहि ममाग्रतः ।  
 त्रैलोक्ये कं पुमांस्तिष्ठेद्दग्ने शुम्भनिशुम्भया ॥१२३॥  
 अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे दवा न र्षं युधि ।  
 तिष्ठन्ति सम्मुखे दधि किं पुनः स्त्री स्वमफिका ॥१२४॥  
 इन्द्राद्याः सफला दवास्तस्पुर्येषां न संपुगा ।  
 शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम् ॥१२५॥  
 सा त्वं गच्छ मयबोक्ता पार्थ शुम्भनिशुम्भया ।

प्रतिरुद्ध कर रक्ता है उगडा मुने—॥१२१॥ जो मुझे संग्राममें जीत द्या  
 जो मेरे अभिमानको धुँध कर देगा तथा लकारमें जो मेरे सम्पन्न बन्पान्  
 होगा वही मेरा स्वामी होगा ॥ १२१ ॥ इत्युक्ते शुम्भ भयवा महादेव  
 निशुम्भ स्वयं ही नहीं पकारें और मुझे जीतकर शीघ्र ही मेरा पात्रिग्रह  
 कर से इनमें निशुम्भकी क्या आशयका है ॥ १२१ ॥

इति उवाच—॥ १२२ ॥ हेरि ! तुम धनदमें गयी हो मेरे नामने  
 देवी बाते न करो । तूनीं लोकीमें कौन देना पुकार दे जो शुम्भ निशुम्भके  
 नामने लड़ा हो लड़ ॥ १२३ ॥ हेरि ! सम्य हेरोंके नामने भी नारे देवग्र  
 मुदमें नहीं करर गये फिर तुम अकेली स्त्री हाकर देने करर लड़ती  
 हो ॥ १२४ ॥ किन शुम्भ भर्तृ देवके नामने इन्हीं मां नर दवा भी  
 मुदमें लड़ मही हुए, उनके नामने तुम स्त्री होकर देने जाओगी ॥१२५॥  
 इत्युक्ते शुम्भ मेरे ही करनेके शुम्भ-निशुम्भके पात्र पानी पत्र । दैत्य करनेके

केयार्क्यर्णनिर्भूतयौरवा मा गमिष्यसि ॥१२६॥

देवमुवाच ॥ १२७ ॥

एवमेतव बली ह्युम्मा निशुम्माभातिषीर्मथान् ।

किं करोमि प्रतिष्ठा मे यदनालाक्षिता पुरा ॥१२८॥

स त्वं गच्छ ममाक्त ते यदेतत्सर्वमावृतः ।

तदाचक्ष्वातुरन्त्राय स च पुच्छं करोतु तत् ॥३॥ १२९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे साधर्णिके मन्त्रस्तोत्रे देवीमाहात्म्ये

देव्या वृत्तसंवादो ऋम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

उवाच ९ त्रिपद्मस्तोत्रा ६६, स्तोत्रा ५४,

पद्म १२९, एवमादितः ६८८ ॥

तुम्हारे गौरवही रहा हैगी। मम्यचा जब वे कैय पकड़कर पकड़ेंगी त  
तुम्हें मन्त्री प्रतिष्ठा खोकर बना पड़ेगा ॥ १२६ ॥

देवीने कहा—॥ १२७ ॥ तुम्हारा कहना ठीक है ह्युम्मा बली  
हैं और निशुम्मा भी बड़े पराक्रमी हैं। किन्तु क्या करें। मैंने पहले तो  
मोक्ष-समसे प्रतिष्ठा कर ली है ॥ १२८ ॥ अतः अब तुम ब्रह्मो। मैंने तुम  
को कुछ कहा है वह नर देवराजने आश्चर्यपूर्वक कहना। फिर वे जो उक्ति  
अन पड़े करें ॥ १२९ ॥

इम प्रकाश श्रीमार्कण्डेयपुराण साधर्णिक मन्त्रस्तोत्रे देवीमाहात्म्ये

वृत्तसंवादो ऋम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

उवाच ९ त्रिपद्मस्तोत्रा ६६, स्तोत्रा ५४,

## षष्ठोऽध्यायः

### धूम्रलोचन-वध

#### ध्यानम्

ॐ नागाधीश्वरपिटरां फणिकणोत्तसौलस्रावली-  
 मास्यदेहलतां दिवाकरनिभां नेत्रप्रपोम्नासिताम् ।  
 माठाङ्गुलमकपालनीरजकरां चन्द्रार्धचूडां परां  
 सूर्यतोषरमरपाङ्कनिलयां पद्मावतीं चिन्तय ॥

ॐ कृपिण्या ॥ १ ॥

इत्याहर्ष्य वधा दम्पा स दूताऽमर्षवृत्ति ।

ममावष्ट ममागम्य दैत्यराजाय विम्वरात् ॥ २ ॥

ये तर्षहकर धैर्यद्वय शस्त्रे निराल कनेश्वरी परमोक्ता पद्मावती  
 देवीया विन्म काला हैं । प मन्त्राद आकवार येती हैं ममीके वन्त्रे  
 मुषोन्नि हनेयनी मन्त्रिणी शिख्य मन्त्रे उनकी देहना उन्मनि हो  
 रही है । मूर्धके मन्त्र उनका ठेक है तीन नव उनकी नामा वना १६ हैं ।  
 वे हाथोंमें माग मुग्ध काला धोर कमा जिने हुए हैं मन्त्र उनके मन्त्रके  
 भर्षकदका मुग्ध मुग्ध हैं ।

श्रुति कथन है—॥ १ ॥ देवीया गर कपन मुग्धर दूता वधा  
 मर्ष दूता धोर मन्त्रे देहनादके एन मन्त्र मन्त्र मन्त्र मन्त्र मन्त्र



तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यसुरराट् ततः ।  
 सक्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम् ॥ ३ ॥  
 इ धूम्रलोचनायु त्वं स्वमैत्र्यपरिवारितः ।  
 तामानय बलात् दुष्टं केशाकर्षणमिह्वलाम् ॥ ४ ॥  
 तत्परित्राण्यद् कथिपदि बोत्तिष्ठतेऽपरः ।  
 स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ॥ ५ ॥

कपित्वा ॥ ६ ॥

तेनाद्यस्तुतः क्षीम स दैत्यो धूम्रलोचनः ।  
 हृत पट्टया सहस्राणामसुराणां हृतं ययौ ॥ ७ ॥  
 स दृष्ट्वा तौ ततो द्वावीं तुहिनाच्छर्त्तन्मिताम् ।  
 बगदाप्नोः प्रयाहीति मूढं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ८ ॥  
 न चेच्छीत्याद्य भवती मङ्गतराक्षुर्प्यति ।  
 तदा बलान्नयान्येष केशाकर्षणमिह्वलाम् ॥ ९ ॥

बह मुनाय ॥ ९ ॥ हृते उठ बन्धन छोड़कर दैत्यराज कुपित हो उठ्य  
 और दैत्यमैत्र्यपति धूम्रलोचन को बोला—॥ ३ ॥ 'धूम्रलोचन ! तुम क्षीम  
 बन्धी सेना लाय लेकर आओ और उठ कुल के कैय पकड़ कर पकड़ते हुए  
 उठे अमरदस्ती यहाँ से आओ ॥४॥ उठही रक्षा करने के लिये यदि कोई दूत  
 लाया हो तो वह बेज्जा नभ भयगा गन्धर्व ही क्यों न हो उठे अमर  
 मर जाना' ॥ ५ ॥

अपि कहते हैं—॥ ६ ॥ शुम्भ के इस प्रश्न का दैत्यराज ने  
 धूम्रलोचन दैत्य मातृ हजार असुराही सेना को लाय लेकर कहति दूरत पकड़  
 दिया ॥ ॥ बहा परीक्षकर उमने हिमाश्वकर खने-बढ़ी देवी को देखा और  
 अमरमकर कहा—'अभी ! तू शुम्भ-निशुम्भ के पास पकड़ । यदि इस समय  
 प्रलम्बापूर्वक मेरे आगामी गन्धर्व नहीं आयेगी तो मैं बलपूर्वक लोभ पकड़कर  
 पकड़ते हुए तुझे छे धरूँगा' ॥ ८ ॥

देव्युपाच ॥ १० ॥

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः ।  
बलाभयसि मामेवं वत किं ते करोम्यहम् ॥११॥

अपिस्थाच ॥ १२ ॥

इत्युक्तः सोऽभ्यधावधामसुरो धूम्रलोचन ।  
हुंकारेणैव तं मम सा अकाराम्बिका ततः ॥१३॥  
अथ हृद्दं महासैन्यमसुराणां सधाम्बिका ।  
वर्षं सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरम्परा ॥१४॥  
ततो घुवसटः कोपात्कृत्वा नार्द सुमैरवम् ।  
पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्वधाहनः ॥१५॥  
काञ्चित् करप्रहारेण दैत्यानास्तेन चापरान् ।  
आक्रम्य बाधरेणान्मान् स सपानं महासुरान् ॥१६॥

देवी बोली—॥ १ ॥ तुम्हें दैत्योंके राजने मेरा है तुम स्वयं भी बलवान् हो और तुम्हारे राज विघात केना भी है। ऐसी दशामें यदि तुम्हें बलपूर्वक से जघ्मे तो मैं तुम्हारा क्या कर सकती हूँ ॥ ११ ॥

अपि कहते हैं—॥ १२ ॥ देवीके ये कहनेपर असुर धूम्रलोचन उनकी ओर दौड़ा तब अम्बिकाने 'हुं' शब्दके उच्चारणमात्रसे उससे मम कर दिया ॥ १३ ॥ फिर तो अनेकों भी कुछ दैत्योंकी विघात केना और अम्बिकाने एक घुवरेपर सीले तामकों शक्तियों तथा फरलोंकी बधा आरम्भ की ॥ १४ ॥ इतनेमें ही देवीका बाहन सिंह अनेकों मरकर मयकर गर्जना करके गर्जनके बलोंको दिखता हुआ असुरोंकी पैनामें दूर पड़ा ॥ १५ ॥ उसने कुछ दैत्योंको पड़ोंकी मारसे कितनोंको अपने बरइसि और कितने ही महादैत्योंको पटककर ओठकी बाईसि घामक करके मार डाला ॥ १६ ॥

१ घा—उपधमिनाम् । २ घा—अपिस्थाय । ३ घा—अरनेवाण्याम् ।

४ घा—तीन तरफके घातपर मिलते हैं—संयुक्त विघात कथन समझ ।

केयाचित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी ।  
 तथा तलप्रहारेण शिरसि कृत्वा च पृथक् ॥१७॥  
 विष्णिमबाहुधिरस कृतास्तेन तथापरे ।  
 पयो च रुधिरं काष्ठादन्वेषां घृतकेसरः ॥१८॥  
 क्षम्यन् तद्वचसं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना ।  
 तेन केसरिणा देव्या बाह्वनेनातिकोपिना ॥१९॥  
 भुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम् ।  
 वलं च क्षयितं कृत्स्नं देवीकसरिणा ततः ॥२०॥  
 शुक्लप दैत्याधिपतिः धूम्रः प्रस्फुरितावरः ।  
 आग्रापयामास च तौ चण्डमुखौ महासुरौ ॥२१॥

उक्त सिंहेने अपने मर्जेसे कितनीके कर पाङ्ग बाये और बप्यङ्ग मारके  
 कितनीके निर बहने मरणा कर दिने ॥१७॥ कितनीकी मुखमें और मरणा  
 काट बाये तथा अपनी गर्दनके बाक दिखते हुए उठने दूतरे देवियोंके के  
 काङ्कर उनका रक्त भूत किया ॥ १८ ॥ मारके मोक्षमें मरे हुए देवियों  
 बाह्वन उक्त महाशरी सिंहेने क्षयमरमें ही बाधुरोंकी कटी केन्द्रका वंश  
 कर बाण ॥ १ ॥

धूम्रने अब मुन्ना नि देवीने धूम्रलोचन अनुरको मार बाण्य तथा  
 उनके निहने मारी केन्द्रका वंशका कर बाण्य तब उक्त देवराजसे बह  
 मोर मना । उक्त भोक्त बौम्ने को । उक्तने चण्ड और चण्ड नामक

वा — बहनी वगण्य प्रतिदिन लव अण्ड केसरी और नेमर' धूम्र  
 मण्यम् 'यु वा मण्यम् है

हे पण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुमि परिवारितौ ।

तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयता लघु ॥२२॥

केसेष्वारुष्य बवृष्या वा यदि नः संस्रयो युधि ।

सदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥२३॥

तस्मां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपासिते ।

शीघ्रमागम्यतां बवृष्या गृहीत्वा सामवाग्मिकाम् ॥२४॥

इति श्रीमहाकण्वेयपुराणे सामर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सुम्भनिमुम्भ-

सनान्नीभून्नखोचमन्त्रो नाम पष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

उवाच ४ श्लोकः २० एवम् २४ एवमादितः ॥ ४१२ ॥



महादेवोंको आका ही—॥ १ २१ ॥ वे पण्ड । और हे मुण्ड । तुमसेना

बहुत बड़ी सेना लेकर वहाँ आओ, उस देवीके हाँटि एकद्वार भयप

उत्ते बाँधकर शीघ्र वहाँ के आओ । यदि इत मन्त्रर उसको अपनेमें लबिह हो

तो तुझमें सब प्रकारके अस्त्र शस्त्रों तथा समस्त आसुरी सेनाका प्रयोग करके

उत्तकी हत्या कर काजना ॥ २२-२३ ॥ उस दुष्टाणी हत्या होने तथा सिंहेके

भी मारे अपनेपर उस अम्बिकाको बाँधकर लाय के शीघ्र ही छोड़ आना ॥२४॥

इस प्रकार श्रीमहाकण्वेयपुराणमें सामर्णिक मन्वन्तराधी कथाके अन्तर्गत देवीमाहात्म्यमें

“ब्रह्मरीचन-वच” नामक छठ अध्याय पूरा हुआ ॥ ३ ॥



# सप्तमोऽध्यायः

## चण्ड और मुण्डका मध

### ध्यानम्

ॐ ध्यायेयं रत्नपीठे शुक्लकल्पवृक्षे मृण्मयीं ध्यामतां ह्रीं  
 न्यस्तकाङ्क्षिं सराजे क्षणिककलपरां बहुकीं वादयन्तीम् ।  
 कङ्कापद्ममाळां नियमितचिह्नसंयोजितां रक्तवर्णां  
 मातङ्गीं क्षुद्रपात्रां मधुरमधुमदां पित्रक्षेत्रासिमाताम् ॥

ॐ कर्पित्वाच ॥ १ ॥

आम्रहास्ते तता ईश्याम्यण्डमुण्डपुरांगमाः ।

चतुरङ्गवसापेता पपुरम्युपतायुधाः ॥ २ ॥

मैं मस्तकी बन्दीका ध्यान करूँ । वे रत्नमय सिंहासनपर बैठकर  
 पड़ते हुए तातेरा मधुर शब्द सुन रही हैं । उनके शरीरका वर्ण ध्यान है ।  
 वे भगना एक पैर कमलपर रखे हुए हैं और मस्तकपर मधुमकर शाय  
 करती हैं । कङ्का पुष्पीरी माळा धारण करने बीजा बगलती हैं । उनके बजाये  
 बनी १० जोड़ी होमा वा रही है । धातु गगनी लाही पड़ने हाथमें धातुका  
 बाज होने हुए हैं । उनका बदनपर मधुका हस्का हस्का मधु काटन पड़ता  
 है जोर कण्ठमें बनी धामा दे रही है ।

अग्नि कहते हैं—॥ १ ॥ तदन्तर शुम्भरी आम्र पाकर वे चण्ड-  
 मुण्ड और शैव्य पुराणिकी सेनाके साथ अन्न-शब्दोंसे सुगन्धित हो कर

दृष्टुस्ते ततो देवीमीपद्मासां व्यवस्थिताम् ।  
 सिंहस्योपरि शैलेन्द्रशृङ्गे महति काञ्चने ॥ ३ ॥  
 ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यता ।  
 आकृष्टपापासिधरास्तयान्ये तत्समीपगाः ॥ ४ ॥  
 ततः क्रोधं चकारोऽप्यैरम्बिका तान्नीन् प्रति ।  
 क्रोपनं चास्या वदनं मपीषर्णममृचदा ॥ ५ ॥  
 अङ्गुलीकुण्डिलाद्यस्या उलाटफलकाद्भुवम् ।  
 काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाहिनी ॥ ६ ॥  
 विचित्रस्वट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा ।  
 द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिमैरवा ॥ ७ ॥  
 अतिविस्तरवदना जिह्वाउत्थनमीपमा ।

दिये ॥ २ ॥ फिर निरिहक हिमालयके सुवर्णमय ऊँचे शिखरपर पहुँचकर  
 उन्होंने सिंहपर बैठी हुई देवीको देखा । वे मन्द-मन्द मुनकर रही थीं  
 ॥ ३ ॥ उन्हें देखकर रत्नयोग तत्परतासे पकड़नेका उद्योग करने लगे ।  
 किसीने वन्य वान क्रिया किसीने तलवार लेंगामी और कुछ लोग देवीके पाद  
 स्पर्श करने लगे ॥ ४ ॥ तब अम्बिका ने उन शत्रुओंके प्रति बड़ा क्रोध किया ।  
 उक्त समय क्रोधके कारण उनका मुख काष्ण पड़ गया ॥ ५ ॥ उलाटमें मौँड़े  
 देदी हो गयीं और बहोते तुरत विकरालमुगी काबी प्रकट हुईं । वे उत्तम  
 और पाद किये हुए थीं ॥ ६ ॥ विचित्र स्वरवाह चारण क्रिये और चालिके  
 चर्मकी लाली पहने नर मुण्डोंकी माम्मते विभूषित थीं । उनके शरीरका मांस  
 सूख गया था केवल हड्डियोंका ढाँचा था जिससे वे अत्यन्त मजबूत बान  
 पड़ती थीं ॥ ७ ॥ उनका मुख बहुत विस्तर था जीम लम्बरानेके कारण

निमन्त्रारक्तनयना नादापरितदिङ्मुखा ॥ ८ ॥  
 सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुगन् ।  
 मन्थं तत्र सुरारीणाममक्षयत तद्वृषठम् ॥ ९ ॥  
 पार्थिव्याहाङ्कुशग्राहियाधषण्डस्तमन्वितान् ।  
 समादार्यकश्चस्तन मुख चिक्षेप वारणान् ॥ १० ॥  
 तथैव यार्धं सुरैर्गं रथं सारथिना सह ।  
 निक्षिप्य वक्त्रं दक्षनश्चर्षयन्त्यन्तिर्मरमम् ॥ ११ ॥  
 एकं जग्राह कटेषु ग्रीवायामथ चापरम् ।  
 पादनाक्रम्य चयान्यसुरसान्यमपाधयत् ॥ १२ ॥  
 तर्मुक्तानि च छम्बाणि महास्त्राणि तथासुरैः ।  
 मुखेन जग्राह कृत्वा दक्षनैर्मथितान्यपि ॥ १३ ॥  
 बलिनां तद् घत मर्बमसुराणां दुरात्मनाम् ।

वे और भी डरवन्ती प्रतीत होती थी । उनको भारी मोठरको घेंटी हुई  
 और कुछ लज्ज या ३ बन्ती भवकर गर्जनसे मन्थूर्ण शिखामौंडो गुंथ रही  
 थी ॥ ८ ॥ उह बड़ बलवान् उस करती हुई व कर्मकांडी बड़े बेगले  
 दम्बोडी उस तनापर गट पना और उन मरको मखन करने लगा ॥ ९ ॥  
 वे पकड़नकरा म्हुकाशमी म्गारुण बोडाभी और पण्डितहित किठने ही  
 हाथियाका एक ही हाथसे पकड़कर मेंमें बाळ म्भी थी ॥ १ ॥ इती  
 म्कार गीह रथ और म्गमिथ म्भय म्भी मैमिकोंकी मुँहमें डम्भकर वे ठम्  
 बड़ म्भानन म्भमे म्भरा हाण्नी थी ॥ ॥ किनीके बाळ पकड़ केटी  
 मिनीका म्भरा म्भरा पता मिनीकी वेगले दुपल हाण्नी और किनीको  
 म्भारीय पकड़न गिराकर म्भरा हाण्नी था ॥ ॥ ३ भमुटीके छोड़े हुए  
 बड़-बड़े म्भय म्भय म्भमे पकड़ लगा और म्भयमे म्भकर उनको दौलमे पीठ  
 हाण्नी थी ॥ १ ॥ बाळीन म्भभान पच म्भरा मा देल्लोडी बड़ लटी वेम

ममदामध्वयचान्यानन्याश्चाताडयद्यथा ॥१४॥  
 असिना निहताः केचित्फेषित्सद्वान्तोहिताः ।  
 अग्धुर्विनाशमसुरा दन्ताग्रमिहतास्तथा ॥१५॥  
 क्षणेन सत्त्वं बलं सर्वमसुराणां निपातितम् ।  
 हृष्टा चण्डाऽमिदुद्राव सौ कालीमविभीषणाम् ॥१६॥  
 ध्रुवर्षर्महार्मीमैर्मीमांसी सौ महासुराः ।  
 छादयामास चक्रे च मुण्ड शिखैः सद्दक्षिणः ॥१७॥  
 तानि चक्राप्यनेकानि विद्यमानानि तन्मुत्सम् ।  
 धूमुर्यथार्कबिम्बानि सुबहूनि घनाक्षरम् ॥१८॥  
 तता ब्रह्मासाविरुषा मीम मरवनादिनी ।  
 काली कलात्रयकान्तर्दुर्दर्शदक्षनोज्ज्वला ॥१९॥

पैद बाही या हामी और गिठनोको मर भगण ॥ १४ ॥ कोई ठकुरके  
 पद उतार गये कोई गदगाहने पीटे गये और किलने ही भमुर दाँतीके  
 अग्रभागसे कुचपे आकर मृन्पुरो प्राप्त हुए ॥ १५ ॥ हृष्ट प्रकट देवीने  
 अमुरोकी उस खरी केनाको धनमरमें मार गिराया । यह देव चण्ड उन  
 अत्यन्त भयानक कालीदेवीकी और दोहा ॥ १६ ॥ तथा महारैय मुण्डने  
 मी अत्यन्त मर्याद काजीकी बगलें तथा हजयों बार चमके हुए चक्रेसे  
 उन भयानक मिथोगी देवीको आच्छादित कर दिया ॥ १७ ॥ वे भनेही  
 चक्र देवीके मुखमें लगाते हुए ऐसे अनेक पदे अनेक शूरके बटुधरे दादल  
 बादलोंके उन्तरमें प्रवेश कर रहें ॥ १८ ॥ तब मर्याद गहना करनेवाली  
 कालीने अत्यन्त शीघ्रने भरकर विद्वत् भद्रदल दिया । उस समय उनके  
 विद्वत् बदनके भीतर बडिमगले रीरे अथ गहनाका दाजीकी प्रभने के



उत्थाम च महार्तिं हं देवी चण्डमभावत ।  
 गृहीत्वा चास्य केद्वेषु क्षिस्तेनासिनाच्छिनत् ॥२०॥  
 मध मुष्ठाऽम्यधावतां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।  
 समप्यपातयद्गर्भां सा स्वद्वगामिदं कृपा ॥२१॥  
 इतःपं सत सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।  
 मुष्णं च सुमहात्मीयं दिष्टो मेजे मयातुरम् ॥२२॥  
 क्षिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुष्णमेव च ।  
 प्राह प्रचण्डाद्गुहासमिममन्येस्य चण्डिकम् ॥२३॥  
 मया तवात्रापहतौ चण्डमुष्णौ महापशू ।

अत्यन्त उच्चर विनावी वती वी ॥ १९ ॥ देवीने बहुत बड़ी लक्ष्मी  
 हाथमें ले हं का उच्चारण करते चण्डपर पात किया और उसके देव पक्ष-  
 णर उठी लक्ष्मीसे उलझ मलक काट डाल ॥ २ ॥

चण्डको मारा गया देवपर मुष्ण मी देवीकी और बीड़ा । उन देवीने  
 राक्षसी भरकर उले मी लक्ष्मीने पावन करके बरछीपर मुष्ण दिया ॥ २१ ॥  
 महापराक्रमी चण्ड और मुष्णको मारा गया देव मनेसे बड़ी हुई बली  
 सेना मनेसे लड़क हो चारों ओर मंग यकी ॥ २२ ॥ लक्ष्मीने चण्ड  
 चण्ड और मुष्णका मलक हाथमें ले चण्डिकासे पात कर प्रचण्ड  
 मयूखान करते हुए मंग—॥ २३ ॥ देवि । मी चण्ड और मुष्ण नष्ट

१ चण्डाली वीरागणने यहाँ पर खोज करिक पाठ किया है, जो  
 हम प्रमाण है—

किन्तु धिगि रीतवन्को पदं लुप्तम् ।

तेन गौरेन चण्ड चण्डितं मुष्णम् ॥

पुद्गले स्वयं शुभं निशुभं च इनिप्यसि ॥२४॥

अपिदवाच ॥ २५ ॥

सावानीतौ सतो दृष्ट्वा चण्डमुण्डौ महामुरौ ।

उवाच काली कल्याणी ललितं चण्डिका वचः ॥२६॥

यस्माद्यन्त्रं च मुष्टं च गृहीत्वा त्वमुपागता ।

चामुण्डसि सतालाक स्याताद्वि भविष्यसि ॥२७॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सारणिंके मन्वन्तरे दीप्तिमाहात्म्ये

चण्डमुण्डपद्यो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

उवाच २, श्लोकः २५ अथ २७

एवमादितः ॥ ४३९ ॥



इन ही महागुप्तोंको गुहे भेंट दिया है । अब पुद्गलमें तुम शुभ और निशुभका मेल ही बंध बना ॥ २४ ॥

अपि कहत है—॥ ॥ यत्न लाय लप उत चण्ड मुण्ड नामक महादेवीको दगकर कल्याणी चण्डिका कालीने मातृ यानी कहा—॥ २६ ॥ इति तुम चण्ड और मुण्डको लपकर मर जल मानी हो । इतिने संज्ञामे चण्डिकाक नामने तुमही लप दी ॥ २७ ॥

एत इति ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

अपि २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

एत इति ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥



# अष्टमोऽध्यायः

रक्तग्रीज-ध्वज

ध्यानम्

ॐ अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं वृत्तपाष्ठाङ्कुशबाणबाणहस्तम् ।  
अभिमादिमिरावृतां मयूखरहमित्येष विमात्रये मयानीम् ॥

ॐ कृपित्वाच ॥ १ ॥

बध्ने च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते ।  
बहुलेषु च मैत्रेय्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥ २ ॥  
तठ कोपपराधीनचेता धुम्मः प्रतापवान् ।  
उद्यता सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदक्ष ॥ ३ ॥  
अथ सर्वबलदैत्याः पञ्चशीतिरुदायुधाः ।  
कम्बुनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु खलैर्हताः ॥ ४ ॥

ये अष्टम्या आदि निहन्तरी विरणीति आहृत मयानीका ध्यान करछ  
है । उनके शरीरका रंग आरुण है । मेजोंमे कबला कक्ष रशी है तथा क्षयोंमे  
पाश अङ्कुश बाण और वज्रुय शीमा पाते हैं ।

अपि कहते हैं—॥ ॥ बगद और मुण्ड मयक दैत्योंके मारे  
जाने तथा बहत ली सेनाका लक्षण हो जानेपर दैत्योंके राज्य प्रतापी धुम्मके  
मनमें रहा शोक हुआ और उन्हे दैत्योंकी सम्पूर्ण सेनाको मुद्रके चिने  
बूझ करनेकी आज्ञा था ॥ ३ ॥ वह बोध्य—आज उद्यतुव नामके  
उद्युती दैत्य सेनापति अपनी सेनाओंके खल मुद्रके चिने प्रस्तान करें ।  
कम्बु नामका दैत्य और चतुरशी सेनानायक अपनी आदिनीके चिने हुए बाण

काटिधीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै ।  
 शत कुलानि घौघ्राणां निर्गच्छन्तु ममाश्रया ॥ ५ ॥  
 कालका दौर्द्धा मौर्याः कालकेषाम्बधामुरा ।  
 युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आश्रया स्वरिता मम ॥ ६ ॥  
 इत्याप्ताप्यसुरपति शुम्भो मेरुध्यासन ।  
 निर्जगाम महासैन्यसहस्रप्रभुभिर्दृत ॥ ७ ॥  
 आपान्तं वणिङ्का दृष्ट्वा सत्सैन्यमतिमीपणम् ।  
 न्यास्वने पूरयामास धरणीगगनान्तरम् ॥ ८ ॥  
 संतः सिंहा महानादमतीव कृतवान् नृप ।  
 घण्टास्वनेन तंभादमम्बिका आपर्णहयम् ॥ ९ ॥  
 धनुर्व्यासिहपण्णानां नादापरितदिच्छत्वा ।  
 निनादमीपणः काला विगम्य विस्तारितानना ॥ १० ॥

करें ॥ ४ ॥ पचास काटिधीर्य कुलके और बी बीस कुलके असुर केन्द्रपति  
 मेरी आज्ञाने केन्द्रनदित कृप करे ॥ ५ ॥ कालक दौर्द्ध मौर्य और  
 कालकेय असुर भी युद्धके शिव तैयार हो मी आज्ञाने तुरत प्रस्थान  
 करें ॥ ६ ॥ मयानक शासन करनयन्य असुरराज शुम्भ दस प्रकार आग दे  
 गदमों बड़ी-बड़ी केन्द्रमाके लय युद्धके शिरे प्रभिन हुआ ॥ ७ ॥ उनको  
 अस्मन्त भयकर नेता आठो दैग वणिङ्गने अपने धनुषकी टंकारके घृष्णी  
 और भाकापके बीसका भय गूँगा दिया ॥ ८ ॥ राजन 'तदन्तर देवीके  
 मिदने मी बड़े जंग जीरने दशावना आरम्भ किया । फिर अम्बिकाके पारेके  
 घण्टने उन कटिङ्का और मी बना दिया ॥ ९ ॥ धनुषकी टंकार निन्दी  
 दराह और पारेकी कटिने लण्डन दिखारें गूँगा उठी । तब मरकर घण्टने  
 बाटने जाने रिङ्गल मुक्को और मी बड़ा विषा लया दस प्रकार के शिर्षिमी

त निनादमुपभुत्स्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् ।  
 दवी सिंहास्था काली सरापैः परिवारिताः ॥११॥  
 पतस्मिन्नन्तर भूप बिनाशाय सुरक्षिणाम् ।  
 मन्त्रायामगमिहन्नामतिपीर्यबलान्विताः ॥१२॥  
 मन्त्रधनुर्विष्णूनां तवेन्द्रस्य च शक्तयः ।  
 शरीरम्या विनिष्क्रम्य तदूर्पमधिष्ठाय ययुः ॥१३॥  
 यस्य दत्तस्य यद्वप यथाभूपजवाहनम् ।  
 तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् यावदुन्मययौ ॥१४॥  
 ईसमुक्तविमानाग्रे साश्वत्थकमम्बुतुः ।  
 आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी सामिधीयते ॥१५॥  
 माह्वरी वृषारूढा त्रिशूलधरधारिणी ।  
 महाहिमलया प्राप्ता चन्द्ररसाविभूषणा ॥१६॥

[illegible]

कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ।  
 योद्धुमभ्याययौ दैत्यान्म्विका गुह्यरूपिणी ॥ १७ ॥  
 तथैव वैष्णवी शक्तिर्गुरुद्वोपरि संस्पृता ।  
 शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गस्वर्गहस्ताभ्युपाययौ ॥ १८ ॥  
 यज्ञवाराहमत्तुलं रूपं या विभ्रता हरेः ।  
 शक्तिः साभ्याययौ तत्र वसती विभ्रती तनुम् ॥ १९ ॥  
 नारसिंही नृसिंहस्य विभ्रती सद्यः षण्णः ।  
 प्राप्ता तत्र सद्यःषेपक्षिप्तनखप्रसंहतिः ॥ २० ॥  
 वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराघोपरि स्थिता ।  
 प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥ २१ ॥  
 ततः परिहृतामिरीशानो वेषशक्तिमिः ।  
 इत्यन्तामसुराः क्षीर्णं मम प्रीत्याऽऽह वन्धिकां ॥ २२ ॥

विमुक्ति हो रहा था पहुँची ॥ १६ ॥ कार्तिकेयश्रीकी शक्तिरूपा अमृतम्विका  
 उन्नीका रूप धारण किये श्रेष्ठ मयूरवर आरुढ़ हो हाथमें शक्ति किये दैत्यसे  
 युद्ध करनेके लिये आयी ॥ १७ ॥ इसी प्रकार भगवान् विष्णुकी शक्ति  
 गुरुद्वपर विराजमान हो शङ्ख चक्र गदा शार्ङ्गभगुप तथा लङ्का हाथमें किये  
 क्यों आयी ॥ १८ ॥ अनुपम यम्भाराजना रूप धारण करनेवाले श्रीहरिकी  
 ये शक्ति है वह भी बाणहारीर धारण करके वहाँ उपस्थित हुई ॥ १९ ॥  
 नारसिंही शक्ति भी नृसिंहके समान शरीर धारण करके क्यों आयी । उसकी  
 गर्दनके बाजोंके सङ्केते आकाशके तारे बिन्दु पड़ते थे ॥ २० ॥ इसी प्रकार  
 इन्द्रकी शक्ति वज्र हाथमें किये गजराज देवराजपर बैठकर आयी । उनके  
 भी सहस्र नेत्र थे । इन्द्रका जैता रूप है वैसा ही उसका भी था ॥ २१ ॥

तदन्तर उन देव-शक्तियोंके धिरे हुए महादेवजीने वन्धिकाके कहा—  
 येही प्रसन्नताके लिये तुम शीघ्र ही इन असुरोंका संहार करो ॥ २२ ॥

ततो देवीक्षरीराशु विनिष्क्रान्तातिमीपणा ।  
 षष्टिक्रमशक्तिरत्युग्रा क्षिपाश्रुतनिनादिनी ॥ २३ ॥  
 सा याह भूममण्डिमिधानमपराजिता ।  
 दत्त त्व गच्छ भगवन् पार्श्वं ह्युम्भनिशुम्भयोः ॥ २४ ॥  
 ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्भितौ ।  
 य आन्य दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥ २५ ॥  
 त्रैलोक्यमिन्द्रा समतां देवाः सन्तु हविर्भुजः ।  
 पुन प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥ २६ ॥  
 बलावलपादथ चेद्भवन्ता युद्धकाङ्क्षिणः ।  
 तदागच्छत दृष्यन्तु मच्छिवाः पिष्टितेन च ॥ २७ ॥  
 यथा नियुक्त्य दान्यन तथा देव्या शिवः स्वयम् ।  
 शिवदूर्ताति लाकेऽस्मिस्तत सा स्थातिमामता ॥ २८ ॥

२३ ततो देवीक्षरीराशु विनिष्क्रान्तातिमीपणा ।  
 षष्टिक्रमशक्तिरत्युग्रा क्षिपाश्रुतनिनादिनी ॥ २३ ॥ ततः अस्यापि  
 २४ सा याह भूममण्डिमिधानमपराजिता ।  
 दत्त त्व गच्छ भगवन् पार्श्वं ह्युम्भनिशुम्भयोः ॥ २४ ॥ भो उन् अस्मत् पार्श्वं दानव शुम्भ एवं  
 २५ ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्भितौ ।  
 य आन्य दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥ २५ ॥ भो उन् अस्मत् पार्श्वं दानव शुम्भ एवं  
 २६ त्रैलोक्यमिन्द्रा समतां देवाः सन्तु हविर्भुजः ।  
 पुन प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥ २६ ॥ यदि वलके  
 २७ बलावलपादथ चेद्भवन्ता युद्धकाङ्क्षिणः ।  
 तदागच्छत दृष्यन्तु मच्छिवाः पिष्टितेन च ॥ २७ ॥ यदि वलके  
 २८ यथा नियुक्त्य दान्यन तथा देव्या शिवः स्वयम् ।  
 शिवदूर्ताति लाकेऽस्मिस्तत सा स्थातिमामता ॥ २८ ॥ यदि वलके

तेऽपि ध्रुत्वा वचा दध्याः क्षर्षाख्यातं महासुराः ।  
 अमर्षापुरिता जग्मुर्यत्र कात्यायनी मृता ॥ २९ ॥  
 ततः प्रथममेषाम्ने क्षरशक्त्यष्टिदृष्टिभिः ।  
 ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां दधीममरारयः ॥ ३० ॥  
 सा च तान् ग्रहितान् पाणाभ्रुलक्ष्मिपरध्वजान् ।  
 विच्छद् सीलयाऽऽध्मातवनुर्मुक्तैर्महैषुमि ॥ ३१ ॥  
 तस्याध्वस्तथा काली क्षुलपातविदारितान् ।  
 स्वद्वाङ्मपाथिताम्बरीन् कुर्यती व्यचरत्तदा ॥ ३२ ॥  
 कमण्डलुजलाक्षेपहतवीर्यान् हतीवस ।  
 मत्तापी चाकराच्छत्रुन् येन येन स घावति ॥ ३३ ॥  
 माहेक्षरी त्रिगुलेन तथा चक्रेण वैष्णवी ।  
 दत्त्याग्रयान कीमारी तथा शुकपातिकापना ॥ ३४ ॥

के नाम्ने नगरमें शिम्मात हुई ॥ २८ ॥ व महात्त्व भी मगवान् शिवक  
 होते देखेके वचन सुनकर नाथमें भर गये और वन कागजावनी शिवकमान  
 भी ठक और बड़े ॥ २९ ॥ तदनन्तर व दैत्य अमर्षमें भरकर पन्च ही देखेके  
 कर बाण छक्ति और क्षुष्टि आदि अम्माकी क्षुष्टि करने लग्य ॥ ३० ॥  
 तब देखने भी गेल-गलमें ही धनुष की टकार की ओर दखने पाद पण बहु-बहु  
 बाणोद्वारा देखेके बलाके रूप बाण एक एक और करतीका बाण  
 बाण ॥ ३१ ॥ फिर काही उनके आगे हाथ पर घनप्राको एकके प्रहारने शिरीष  
 करने लगी और तद्वत्तापने उनका कपूर निहाली गई स्वर्भूमिमें निचरने  
 लगी ॥ ३२ ॥ मत्तापी भी त्रिगुलि और होदनी उनी उनी और भान  
 कमण्डलु का पण उड़ककर शत्रुओंके भाग और पराक्रमका मर कर गली  
 दी ॥ ३३ ॥ माहेक्षरीने त्रिगुलेन तथा देखरीने चक्रेण और व-यन्त्र का वने  
 लगी हुई बुद्धि करी कि वही छानिने छानिने देख्याहा महान् अम्मा



ऐत्रीकुलिष्ठपातेन क्षतघ्नो वैत्पदानवाः ।  
 पेतुर्विदारिताः पृष्ण्या रुधिरांघ्रप्रवर्षिणः ॥ ३५ ॥  
 तुम्बप्रहारविष्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः ।  
 वाराहमूर्त्या न्यपतमग्रज च विदारिता ॥ ३६ ॥  
 नत्तर्विदारिताम्बान्यान् मस्ययन्ती महासुरान् ।  
 नारसिंही चचाराक्षौ नादापूर्णदिगम्बरा ॥ ३७ ॥  
 चम्बाहृदसैरसुराः क्षिपदूत्यमिदृषिताः ।  
 पतुः पृष्ण्या पतितास्तांश्चादाय सा तदा ॥ ३८ ॥  
 इति मातृगणं हृष्ट मर्दयन्त महासुरान् ।  
 दृष्ट्वाभ्युपायेर्विचिचेनेष्टुर्देवारिसैनिकाः ॥ ३९ ॥  
 पलायनपरान् दृष्ट्वा वैत्यान् मातृगणार्दितान् ।  
 बाहुमन्यायसौ हृष्टा रक्तबीजा महासुरः ॥ ४० ॥

किया ॥ ३८ ॥ इन्द्र-नागिके वज्रप्रहारसे निरीज हो केकड़ी देव-राज वरुणी  
 चारा बहत्त हुए पृष्णीयर ले गये ॥ ३५ ॥ बाणही धरुकेने किछनोंको अपनी  
 बुद्धनकी मारमे मर किया बाणोंके अग्रमागसे किछनोंकी छाती छेद करके ठण  
 दिक्के ही है च उलक चकली चोटके विहीन होकर मर पड़े ॥ ३६ ॥ नारसिंही  
 भी दूध-दूधर महादेवकी ओर अपने नक्तोसे निरीज करके लक्ष्मी कीर स्थितारसे  
 विमाना ठण नाकाछनो गुंजली हुई बुद्ध-वेधमें निरुतन प्यगी ॥ ३७ ॥  
 किछनों ॥ अमुर भिजपूतीक प्रचण्ड अहङ्कारसे अत्यन्त मयमीन हो पृष्णीय  
 मर पड़े नार मरनेपर ठण्ठे क्षिबपूतीने ठण समग्र अरता मर  
 बना किया ॥ ४० ॥

अमप्रकाश कोयमें भये रूप मनुगणोंको नानाप्रकारसे ठपार्योते बड़े-बड़े  
 अमुरका मदन करने इन्द्र दत्तनेनिक मया लहे हुए ॥ ३९ ॥ मनुगणोंसे  
 पीड़ित व बाका बुद्धने मागत इन्द्र रक्तबीज नामका महादेव कोयमें भरकर

रक्तचिन्दुर्यदा भूर्मा पतस्यस्य क्षरीरतः ।  
 समुत्पतति मेदिन्यां तत्प्रमाणस्तन्मुरः ॥४१॥  
 पुपुषे स गदापागिरिन्द्रशक्त्या महामुरः ।  
 ततश्चेन्त्री स्वयम्भुव रक्तभीजमताडयन् ॥४२॥  
 कृतिशेनाहतस्यागु बहु मुस्ताश्च प्रापितम् ।  
 समुत्सृज्यस्तता याषान्तद्रूपान्तत्पराक्रमा ॥४३॥  
 यावन्तः पतितास्तस्य क्षरीराद्रुक्तपिन्दव ।  
 तावन्तः पुरुषा ज्ञानान्तद्वीर्यबलविक्रमा ॥४४॥  
 त चापि युपुष्मन्त्र पुरुषा रक्तमम्भवाः ।  
 समं मातृमिरत्पुष्पमन्त्रपातातिमीषणम् ॥४५॥  
 पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य क्षिरा यदा ।  
 यदाह रक्तं पुरुषान्तता जाता महामुः ॥४६॥

पुच्छके निचे भाष्य ॥ ४ ॥ उनके शरीरमे जब रक्तकी बूँद पृष्ठीतर  
 गिरती, तब उनीके समान शक्तिशाली एक बूँदरा महादेव पृष्ठीतर पैदा हो  
 जाता ॥ ४१ ॥ महामुर रक्तबीज हाथमे गदा लेकर रक्तपातके नाब मुद्र  
 करने लगा । तब ऐन्द्रीने भाने बहने रक्तबीजसे भगा ॥ ४२ ॥ बहने पावच  
 होनेपर उनके शरीरमे बहुत-सा रक्त बूँदे लगा और उनमे उनीके समान बल  
 तथा पराक्रमसे बाढा उत्पन्न होन लगे ॥ ४३ ॥ उनके शरीरमे रक्तकी  
 चिन्ती बूँद गिरा । उनमे ही पुनश्च उत्पन्न हो गये । ये सब रक्तबीजके समान  
 ही बीरशालु बलशालु तथा पराक्रमी थे ॥ ४४ ॥ वे रक्तम उत्पन्न होनेवाले  
 पुरुष भी अत्यन्त भयङ्कर भय-शङ्कोर प्रहार करते हुए वर्ण-मातृगर्भके  
 तब पर मुद्र करने लगे ॥ ४५ ॥ पुनः यज्ञके महामुने जब उनका मस्तक  
 चटख हुआ तब रक्त बहने लगा और तन्मे बहने पुरुष उत्पन्न हो

वैष्णवी समरे चैन चक्रेणामिजधान इ ।  
 गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥४७॥  
 वैष्णवीचक्रमिजस्य रुधिरस्रावसम्भवैः ।  
 सहस्रशः अगदूष्याप्त तत्प्रमाणैर्महासुरैः ॥४८॥  
 द्रुक्स्या अपान कौमारी धाराही च तथासिना ।  
 माह्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम् ॥४९॥  
 स चापि गदया दैत्यः सपा एवाहनत् पृषत् ।  
 मातः क्षापसमाधिष्टा रक्तबीजो महासुरः ॥५०॥  
 तस्माद्वत्स बहुधा शक्तिश्रद्धादिभिर्भुवि ।  
 पपात या व रक्तौषस्तेनासम्भूतशोऽसुराः ॥५१॥  
 तथानुरासुक्मम्पूतेश्वरैः सकलं अगत् ।  
 म्याप्तमासीत्तता देवा भयमात्मगुरुत्तमम् ॥५२॥  
 तान् विपण्वान् मुरान् इष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्परा ।

गत ॥ ४६ ॥ वैष्णवीन युद्धमे रक्तबीजर चक्राप्रहार किया तथा ऐन्द्रीने उठ  
 रे तमेतान्तरिका महाप चक्र पर्जवापी ॥ ४७ ॥ वैष्णवीके चक्रे पावक  
 होनपर ठमर छरी न बी रण बहा और ठकले ओ उन्हीक वणवर व्याकर  
 बाव मन्त्रा मन्त्र ३ प्ररुह रूप उनके द्वारा समूर्ण व्याप्त कृत हो  
 गया ॥ ४ ॥ त्रीमूर्तिने मानस, शरणाग्निने त्रहस्य और महेन्द्रने त्रिष्टम्भे  
 मन्त्रान् च नोत्रा पावक किया ॥ ४९ ॥ शेषमें धरे हुए ठक मन्त्रेण  
 मन्त्रान् च भी गदाम लभी मातु शक्तिशेन पृषत् पृषत् प्रहार किया ॥ ५ ॥  
 शक्ति और शूल शक्तिने अनेक बार पावक होनेपर ओ ठकले छरीले रक्तबी  
 जता प्रणीपर गिरी उलग भी निजब ही नेकही असुर उत्पन्न हुए ॥ ५१ ॥  
 इन प्रकार उन महादेव के रचने पकर हुए भक्तुर्देवता समूर्ण  
 व्याप्त पाम हो गया । इनने देवताओंकी कहा भय हुआ ॥ ५२ ॥  
 देवताओंकी उदात्त रंग चण्डिकाने वाणीने श्रीमच्छूर्णक करा—

उभाय कर्त्ता चासुण्हे विंस्तीर्णं वदनं कुरु ॥५३॥  
मच्छस्त्रपातसम्भृतान् रक्तबिन्दून्महामुरान् ।  
रक्तबिन्दा प्रतीच्छ त्व मक्षत्रणानेन वेगिनो ॥५४॥  
भक्षयन्ती खर रणे तदुत्पन्नान्महामुरान् ।  
एवमेव क्षयं दैत्यः क्षीणरक्ता गमिष्यति ॥५५॥  
मक्ष्यमाणास्त्वया शोभा न शोत्वस्सन्ति चापरै ।  
इत्युक्त्वा तां ततो दधी शूलेनामिजघान तम् ॥५६॥  
मुरेन कर्त्ता जगृह रक्तबीजस्य क्षोणितम् ।  
ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकां ॥५७॥  
न चास्या वेदनां चक्र गदापातोऽन्यिकामपि ।  
तस्याहतस्य दहानु बहु मुन्वाप क्षापितम् ॥५८॥  
यतन्ततस्तद्वक्षत्रेण चासुगृहा मक्षप्रतीच्छति ।

बापुण्ड । तुम भाना मुग भीर भी देनाभी ॥ ५१ ॥ तथा मेरे सम्पत्तये  
 मिलेको रत्नगुभी भीर उनने उत्तम होनेका भारे ५२ ॥ तुम  
 भाने रत्न उत्तम मुगने गा जाओ ॥ ५३ ॥ रत्न प्रकर रत्नने उत्तम होने-  
 का भारे देवीका मधन करती हैं तुम रत्न विपरीत हो । देना करनेमें  
 उन देवका भान रत्न हीन हो जानार वह स्वयं भी नष्ट हो जयगा ॥ ५४ ॥  
 उन मयकर देवीका जह तुम ला जाओगे तब पुनरे नने देव उत्तम नही हो  
 गये । सो बहकर यह देवीने दुःख रत्नहीनका भान ॥ ५५ ॥ और  
 भाने भाने मुगने उत्तम रत्न न भिन्न । तब उनने वरा रत्नप्रकार  
 वरा भान देवा ॥ ५६ ॥ किन्तु उन गणपतने देवीका लीन हो भी पना  
 भी पहुँचायी । रत्नहीनके पारन शरीरन वत्तन रत्न भिन्न ॥ ५७ ॥  
 किन्तु भाने ही वा भिन्न हो ही बापुण्डने उन भाने मुगने न भिन्न ।

१. यह विचार है कि - 'मित्र' । हमारे घर वहाँ-वहाँ  
'मित्र' ही है।

मुखे सद्युद्रता येऽस्ता रक्तपातान्महासुराः ॥५९॥  
 तथिस्तादाय चामुण्डा पर्या तस्य च स्थापितम् ।  
 दक्षी शूलन वज्रेण बाह्वैरसिभिश्चाष्टिभि ॥६०॥  
 जपान रक्तबीजं तं चामुण्डापीतश्चापितम् ।  
 स पपत्त महीपृष्ठे शूलसहसमावृत ॥६१॥  
 नीरक्तम् महीपात रक्तबीजो महासुरः ।  
 ततस्तं हर्षमलुलमवापुस्त्रिदशा नृप ॥६२॥  
 तपां मातृगणा जाता ननर्तास्तुह्मदावृतः ॥६३॥६४॥  
 इति श्रीमाकण्डेकपुराणे सावर्जिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

रक्तबीजत्वां शुभाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

उवाच १ अर्धस्तोत्र १ हस्तोक्तः ६१ एकम्

६३ पञ्चमाङ्कितः ५२ ॥

रक्त मिरनेके वालीक मुलमें आ महादेव उत्पन्न हुए, उन्हें भी वह चम  
 गयी और उन्नत रक्तबीजका रक्त भी पी लिया । तदनन्तर देवीने रक्तबीज  
 त्रिनका रक्त चामुण्डादेवी पी लिया था वह, बाव पद्वय तथा  
 नाशिले मातृ गणा । शूलन । इत प्रथम शूलोंके लघुराजसे आवृत एवं रक्त  
 २० श्री मन्वन्तरे महीपृष्ठीय मिरपदा । बरेबर । इन्ते देवप्रभोंके लघु  
 हयवी मार्ग ॥ -६॥ और मातृगण उन असुरोंके रक्तपातके म  
 उद्धत हो होकर दृष्ट करने लगा ॥ ६३ ॥

॥ ८ ॥ इति सावर्जिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

श्रीमाकण्डेकपुराणे सावर्जिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

अध्याय पूरा हुआ ॥ ८ ॥

## नवमोऽध्यायः

निशुग्म-वध

ध्यानम्

ॐ व-पू-रु-का-श्चननिम रुधिराद्यमाकां  
पामादुर्गां च वरदां निजपादुदण्डैः ।  
विभ्राणमिन्दुशकलामरणं त्रिनेत्र  
मधाम्बिकशमनिशं वपुराभयामि ॥

ॐ राजाराज ॥ १ ॥

रिचित्रमिद्रमाग्न्यात् भगवन् मरता मम ।  
दन्त्यापरितमाहात्म्यं रक्तपीत्रवपाधिनम् ॥ २ ॥

मैं अर्धशरीरवत् भीतिघटकी निरन्तर धारण तथा हूँ । उनका वर्ण  
बलरूप पुष्प और गुच्छोंके समान रक्तपीत्रवर्धन है । वह अपनी मुद्राओंसे  
दुर्गर मधाम्बिका नाम अद्भुत और वरदा मुद्रा धारण करता है। अर्धवत्  
उन्का भा-वना है तथा वह तीन नेत्रोंसे मुद्रित है ।

राजान वन्दे—॥ १ ॥ मन्त्रः । अन्ते वरदादेके वरगे लक्ष्मण  
रामदेवता देवी करिष्या वर अद्भुत आत्म्य मुदा वन्द्याया ॥ २ ॥

मूयश्चेच्छाम्यहं भ्रातुं रक्तबीजे निपातिते ।  
चकार शुम्भा यत्कर्म निशुम्भयातिक्रान्तः ॥ ३ ॥

अपिस्थान ॥ ४ ॥

चकार कृपमनुत रक्तबीजे निपातिते ।  
शुम्भासुरा निशुम्भस्य हतेष्वन्येषु बाह्वे ॥ ५ ॥  
हन्यमानं महासैन्यं विलास्यामर्षमुद्रहन् ।  
अभ्यधावन्निशुम्भाऽथ मुख्यपत्नुरसेनया ॥ ६ ॥  
तस्याग्रतस्तथा वृष्टं पार्श्वपांशु महासुराः ।  
मंददृष्टपुटा कुन्दा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥ ७ ॥  
आस्रगाम महावीर्यः शुम्भाऽपि स्वतैर्हृतः ।  
निहन्तुं अभिक्तां कोपात्कृत्वा पुष्टं तु मातृभिः ॥ ८ ॥  
तदा युद्धमतीवासीद् देव्या शुम्भनिशुम्भयाः ।  
ध्रुवर्षमतीवाश्रं मेषयारिव धर्षताः ॥ ९ ॥

अथ रत्नरीक्तं माते अनेकर अस्त्राण कोचमी मरे हुए शुम्भ और निशुम्भने की  
कर्म किया उनके म पुनना चाहता हूँ ॥ ३ ॥

अपि कृतं ह—॥ ४ ॥ शब्द । युद्धमें रक्तबीज तथा अभ्य  
हतेष्वे मा जनार शुम्भ और निशुम्भके कोचमी सीम्य न रही ॥ ५ ॥  
रत्नी स्त्रियाश्च मता इत प्रकार माती अती देव्य निशुम्भ अभ्यर्षये मरका  
हवीकी शर जोड़ा । उनके साथ अनुगोरी प्रधान सेना थी ॥ ६ ॥ उनके  
भाग पीछे तथा पार्श्वमाग्य बहु-बहु असुर के जो कोचके जोड़ चले हुए  
हवीर । मर गये के 'कये' बाव ॥ ७ ॥ महापराजयी शुम्भ की अपनी सेनाके  
साथ मातृगण म युद्ध करने कोचरा अभिक्ताओ मारनेके लिये आ  
पड़े ॥ ८ ॥ तब तभी साध शुम्भ और निशुम्भका और अभ्यम उड़ मर्षा । वे  
दाना दे ब कोचकी भाति वाजोड़ी मरकर हूँ कर रहे के ॥ ९ ॥

विच्छेदास्ताञ्जरास्ताम्यां चण्डिका स्वशरोत्करैः ।  
 ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैस्तुरैश्च ॥१०॥  
 निशुम्भो निशितं स्वद्गं चर्म पादाय सुप्रभम् ।  
 अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ॥११॥  
 ताडिते वाहने दधी सुरप्रणासिमुत्तमम् ।  
 निशुम्भस्याशु विच्छेदं चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम् ॥१२॥  
 छिन्ने चर्मणि स्वद्गे च शक्तिं विधेयं साञ्जुरः ।  
 तामप्यस्य द्विषा चक्रे चक्रेषामिमुन्नागसाम् ॥१३॥  
 क्षेपाष्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः ।  
 आर्षत्तं मुष्टिपातेन दधी तच्चाप्यचूर्मयत् ॥१४॥  
 औत्तिष्याथ गदां सोऽपि विधेयं चण्डिकां प्रति ।  
 सापि देव्या त्रिशूलेन मित्रा भयस्त्वमागता ॥१५॥

उन दोनोंके बचने हुए बाणोंको चण्डिकाने अपने बाणोंके समूहसे दूरत कर  
 शाय और शस्त्रसमूहोंकी कर्ग करके उन दोनों देवपरतियोंके अङ्गोंमें मी चोट  
 पहुँचयी ॥ १ ॥ निशुम्भने तीली तकवार और चमकती हुई दाढ़ केकर  
 देवीके घेठ वाहन सिंहके मस्तकपर प्रहार किया ॥ ११ ॥ अपने वाहनको  
 चोट पहुँचनेपर देवीने सुरंग नामक बाणसे निशुम्भकी घेठ तकवार दूरत ही  
 कर दाढ़ी और उठती दाढ़को मी अंगमें बाण चोर चढ़े थे, चण्ड-चण्ड  
 कर दिया ॥ १२ ॥ दाढ़ और तकवारके बट अनेपर उठ अङ्गुरने शक्ति चण्डकी  
 हिन्दु तामने अनेपर देवीने चक्रे उठके मी दो टुकड़े कर दिये ॥ १३ ॥  
 मर तो निशुम्भ मोचने एक उठा और उठ दानवने देवीको मारनेके छिने  
 धुस उठाया। हिन्दु देवीने समीप आनेपर उसे मी मुक्केसे मारकर चूर्ण कर  
 दिया ॥ १४ ॥ तब उठने मर धुमाकर चण्डिकाके ऊपर चकारी परतु बर



ततः परशुहस्तं समापान्तं दैत्यपुङ्गवम् ।  
 आहस्य देवी बाणोपैरपातयत् भूतले ॥१६॥  
 तस्मिन्निपतिते भूमौ निष्ठुग्मे मीमविक्रमे ।  
 भ्रातर्यतीव सङ्कटः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥१७॥  
 स रथस्तथास्युन्धैर्गृहीतपरमायुधैः ।  
 शूजैरष्टाभिरतुलैर्भ्याम्बाक्षेपं बभौ नमः ॥१८॥  
 समापान्तं समाकाश्य देवी षड्भस्वादयत् ।  
 न्यास्य च पापि वनुपबक्रातीव दुःसहम् ॥१९॥  
 पूरयामास ककुभो निजघण्टास्थनेन च ।  
 समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधामिना ॥२०॥  
 ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेममहामदैः ।  
 पूरयामास गगनं गां तत्रैरं दिष्टो दष्ट ॥२१॥

श्री देवीने दिष्टुक्ते बरकर भक्त हो गयी ॥ १६ ॥ तदनन्तर दैत्यपुङ्गव  
 निष्ठुम्भरो फरला हाथमे लेकर आते देख देवीने बाणतमूहोंसे फावत कर  
 बरतीकर सुप्त दिष्टा ॥ १७ ॥ तत मबकर पछकमी भाई निष्ठुम्भके बरछासी  
 हो अनेकर दुग्भरो बड़ा मोह लजा और अम्बिकासा बच करनेके क्रिये वह  
 आगे रहा ॥ १८ ॥ रक्तर बेडे बेडे ही उत्तम आधुनिक सुशोभित अस्त्री  
 बड़ी-बड़ी जाड अनुपम मुखासीने समूचे आकाशको डककर वह अमृत सोम  
 पान लगा ॥ १९ ॥ उने आते देख देवीने शङ्ख बजाया और वनुपकी मन्त्रजाप  
 भी जयन्त दुम्भक शब्द किया ॥ २० ॥ नाथ ही अस्त्री फटेके छत्रसे जो  
 सम्मल लय मैनिक्षीरा तेन नष्ट करनेका था तमूर्ध दिष्टासीने अन्त कर  
 दिया ॥ ॥ तदनन्तर सिंहने भी अस्त्री बहाहते क्रिये सुनकर बड़े-बड़े  
 मन्त्राकारा महान् मर दूर हो जाता था आशाय पूष्पी और दक्षी दिष्टासीने

ततः काली समुत्पत्य गगनं क्षामताडयत् ।  
 कण्ठ्यां तन्निनादन प्राक्पयनास्त निराहिता ॥२२॥  
 अद्भुतदाममश्विं शिवदूती चकार ह ।  
 तं चन्द्रशुक्रागु शुम्भ कथं परं ययौ ॥२३॥  
 दुरात्मनिष्ठ तिष्ठति ध्याजद्वाराभिरा यदा ।  
 तदा अपेत्यमिदितं दर्शयन्नासन्वितं ॥२४॥  
 शुम्भेनागत्य या नक्तिर्मुक्ता ज्योत्सतिर्मपगा ।  
 आयान्ती पद्मिहृता मा निगन्ता मदान्दया ॥२५॥  
 मिदनादन शुम्भस्य प्यार्णं लापयपात्तरम् ।  
 निपातनि मनो पाता बितरानरनीपत ॥२६॥  
 शुम्भमुक्तामगान्दयी शुम्भस्तप्रदितामृताम् ।

॥ २२ ॥ ततः काली समुत्पत्य गगनं क्षामताडयत् ।  
 कण्ठ्यां तन्निनादन प्राक्पयनास्त निराहिता ॥२२॥  
 अद्भुतदाममश्विं शिवदूती चकार ह ।  
 तं चन्द्रशुक्रागु शुम्भ कथं परं ययौ ॥२३॥  
 दुरात्मनिष्ठ तिष्ठति ध्याजद्वाराभिरा यदा ।  
 तदा अपेत्यमिदितं दर्शयन्नासन्वितं ॥२४॥  
 शुम्भेनागत्य या नक्तिर्मुक्ता ज्योत्सतिर्मपगा ।  
 आयान्ती पद्मिहृता मा निगन्ता मदान्दया ॥२५॥  
 मिदनादन शुम्भस्य प्यार्णं लापयपात्तरम् ।  
 निपातनि मनो पाता बितरानरनीपत ॥२६॥  
 शुम्भमुक्तामगान्दयी शुम्भस्तप्रदितामृताम् ।

चिच्छेद स्वसुरैरग्नैः क्षतश्चाऽथ सहस्रशः ॥२७॥  
 ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलैनामिबधान तम् ।  
 स तदामिहतो भूमौ मूर्च्छिता निगपात ॥२८॥  
 तता निशुम्भः सम्प्राप्य श्वेतनामायक्यर्मुक ।  
 आसृपान श्वरैर्देवीं कालीं कसरिण तथा ॥२९॥  
 पुनश्च क्रुत्वा बाहूनामयुतं दनुजेष्वरः ।  
 चक्रायुधेन दितिजघ्छेदयामास चण्डिकाम् ॥३०॥  
 तता मगधवी क्रुद्धा दुर्गा दुर्गाविनाशिनी ।  
 चिच्छेद तानि चक्राणि स्वश्वरैः सायक्यं च तान् ॥३१॥  
 तता निशुम्भा बेगन गदामाढाय चण्डिकाम् ।  
 अम्यभाहत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः ॥३२॥  
 तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका ।  
 स्वर्गन श्वितधारेण स च धूलं समाददे ॥३३॥

अग्न नवक सचोडारा नेकहो भीर दहारी डुक्क कर दिसे ॥ २७ ॥  
 तब हाथमें श्री १२ चण्डिकाने सुम्भको शूलसे मारा । तबके आततने मूर्च्छित  
 हो वह प्रभोवन मिर पड़ा ॥ २८ ॥

इत्यनेन ही निशुम्भका चिच्छेद १२ भीर उतने वनुष हाथमें केवल  
 बाणांशरा गद्दी काली तथा मिहको बाणक कर दत्ता ॥२९॥ फिर तब  
 दे मगधन दल दहान बाण उठाकर चक्राके प्रहारसे चण्डिकाको व्याकुलरित  
 क दिका ॥ ॥ तब दुग्गम पीडारा तथा करनेश्वरी मगधवी धुक्किने  
 उ अग्न होकर तब बाणाय उन पता तथा बाणोंका काट गिराव ॥ ३१ ॥  
 तब १३ चक्र दैत्यनाक तथा चण्डिकाका वध करनेके लिये हाथमें मारा  
 उदरगम ॥ ॥ ॥ उतक जाने ही चण्डिकाने तीली धारणासे तन्मय  
 उतकी चण्डिका भीम ही काट दत्ता । तब तबने धूल हाथमें के सिवा ॥ ३३ ॥

शूलहन्त समायान्त निशुम्भममगर्दनम् ।  
 इदि विम्याष शूलन वेगाविदेन चण्डिच्छ ॥३४॥  
 मिन्नस्य सस्य शूलेन हृदयान्निःसृताऽपर ।  
 महाबला महावीर्यमिच्छेति पुरुषा यदन् ॥३५॥  
 तस्य निष्क्रामता दवी प्रहस्य खनवत्ततः ।  
 शिगधिच्छद् गवद्गन सताऽसापपठहुनि ॥३६॥  
 ततः मिहधन्वादाग्रं दंष्ट्राधुष्णशिराधरान् ।  
 अमुगंतांस्तथा काली शिरदूती तथापरान् ॥३७॥  
 फमारीश्वक्तिनिर्मिन्ना कचिन्नगुर्महामुरा ।  
 प्रनाणीमन्त्रपूतन तापनान्य निराहता ॥३८॥  
 माहारीप्रिशुम्भन मिषा पतुस्तथापर ।

शूलहन्तः समायान्तः निशुम्भममगर्दनम् । इदि विम्याषः शूलन वेगाविदेन चण्डिच्छ ॥३४॥  
 मिन्नस्य सस्य शूलेन हृदयान्निःसृताऽपरः । महाबला महावीर्यमिच्छेति पुरुषा यदन् ॥३५॥  
 तस्य निष्क्रामता दवी प्रहस्य खनवत्ततः । शिगधिच्छद् गवद्गन सताऽसापपठहुनि ॥३६॥  
 ततः मिहधन्वादाग्रं दंष्ट्राधुष्णशिराधरान् । अमुगंतांस्तथा काली शिरदूती तथापरान् ॥३७॥  
 फमारीश्वक्तिनिर्मिन्ना कचिन्नगुर्महामुरा । प्रनाणीमन्त्रपूतन तापनान्य निराहता ॥३८॥  
 माहारीप्रिशुम्भन मिषा पतुस्तथापरः ।

बाराहीतुष्टपास्तन कपिष्णुर्णीकृता भुवि ॥३९॥

म्रेण्टं स्वण्टं च चक्रण वैष्णव्या दानवाः कृताः ।

चक्रण चैन्द्रीहस्तप्रविभुक्तेन तथापरे ॥४०॥

कपिदिनेहुरसुराः कपिन्नद्या मद्रक्ष्वाम् ।

मक्षितायापरे क्यतीश्वरुतीसृगाधिपैः ॥४१॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराण सावनिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

त्रिसुप्तकपी नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

उवाच २ रुद्रोच्चः ३९ एकम् ४१

००मादिता ५४३ ॥

गये । बापहीके बूधनके भाषासने त्रितीया एण्हीस कपूर निरुद्ध  
गया ॥ ४ ॥ वैष्ण ने भी अस्मे चरने चानरीके दुष्टके-दुष्टके कर दये ।

ऐन्द्रीके नाचने बूटे ॥४०॥ चक्रने भी त्रिठने ही ऐन्द्रीने शप बो बेटे ॥४॥

दुष्ट असुर नष्टा गये दुष्ट उन मण्डुइने मम गये तथा किन्ने ॥४१॥ कपिः  
शिरदूत तथा त्रिदृक् शान बन मये ॥ ४१ ॥

म २ प्राग्व बगवन्म सर्वर्षिण मन्वन्तरी वषट्के कठमे

०० नाम्ना निगम-४३ नामक नर्वा अथवा

कृता ५ ॥ ॥

# दशमोऽध्यायः

शुग्म-अथ

अथानम्

(ॐ) उत्तमहेमरुचिरां रविचन्द्रबद्धि  
नेत्रां धनुःशरपुताङ्गुशपाशशूलम् ।  
रम्यैर्ध्वजैश्च दधतीं शिष्यशक्तिरूपां  
कामेश्वरीं इति भजामि शृतन्दुलम्बाम् ॥

ॐ कृतिगण ॥ १ ॥

निगुग्मं निहतं दृष्ट्वा आत्मारं प्राणमग्मितम् ।  
हन्यमानं धनं येष गुग्मं मुद्योऽपरीक्षितम् ॥ २ ॥  
बलाशतपाद् दृष्ट्वा रं मा दुर्गे गर्भमापद ।

श्री गणेशाय नमः ॥ दशमोऽध्यायः समाप्तः ॥ अथानम् ॥  
कामेश्वरीया हन्त्येव विमानं वरगर्हम् । वन्द्येनैव मुद्रादेव लब्धं मुग्मम्  
॥ १ ॥ अथ बाल्यामीरार्थम्—ये ही लीन उरुदेव नृप इत्येव भजन्ते यस्या  
राशौ चतुरस्रं भद्रम् वरगर्हं हन्त्येव विमानं वरगर्हम् ॥ २ ॥

अथ बाल्यामीरार्थम्—॥ १ ॥ गणेशाय नमः ॥ अथानम् ॥  
कामेश्वरीया हन्त्येव विमानं वरगर्हम् । वन्द्येनैव मुद्रादेव लब्धं मुग्मम्  
॥ १ ॥ अथ बाल्यामीरार्थम्—ये ही लीन उरुदेव नृप इत्येव भजन्ते यस्या  
राशौ चतुरस्रं भद्रम् वरगर्हं हन्त्येव विमानं वरगर्हम् ॥ २ ॥

अन्यास्तां बलमाभित्य युद्धयसे यातिमानिनी ॥ ३ ॥

दम्बुकाय ॥ ४ ॥

एकदाई जगत्पत्र द्वितीया का ममापरा ।

पञ्चता दुष्ट मथ्यथ विघ्नन्त्यो मद्विभूतयः ॥ ५ ॥

स्तुत समस्तास्ता देव्यां ब्रह्माणीप्रभूता लयम् ।

तस्या देव्यास्तनौ जगद्गुरुर्ब्रह्मासीत्तदाम्बिका ॥ ६ ॥

दम्बुकाय ॥ ७ ॥

अहं विभूत्या बहुमिरिह रूपैर्यदास्मिता ।

तस्मद्गुण मयैकैव तिष्ठाम्यानां मिरा भव ॥ ८ ॥

कपिल्याय ॥ ९ ॥

तनः प्रवृत्ते पुष्टं दम्बा शुभमस्य बोधयोः ।

पश्यतां सर्ववैश्वानरामसुराणां च दारुणम् ॥ १० ॥

बुद्ध-मूढका समग्र न हिन्वा । नु बड़ी आग्निनी बरी हुई है किन्तु वृद्धों  
विशेषक बड़का लहारा मकर लहती है ॥ १ ॥

बड़ी बोद्धी—॥ ४ ॥ ओ बुद्ध ! मैं अकेली ही हूँ । इस संसारमें  
मर गिय बुरी बीन है । देव मे मरी ही विभूतियों हैं अतः बुद्धमें ही  
प्रवेश कर रही हैं ॥ ॥

तदनन्तर ब्रह्माणी आदि समस्त देवियों ज्वलित देवीके शरीरमें  
जैन हो गयीं । उन समय केवल अम्बिकादेवी ही रह गयी ॥ ६ ॥

बोधी बोद्धी—॥ ॥ मे अम्बिका ऐश्वर्यशालिते अनेक लक्षोंमें बड़ी  
उपस्थित हुई थी । उन सब लक्षोंमें मैंने समस्त विश्व । अब अकेली ही  
बुद्धमें रही हूँ । तुम भी भिन्न हो जाओ ॥ ८ ॥

शुचि कहत ह— ॥ ॥ तदनन्तर देवी और शुभम बोद्धीमें लय  
रहनाओं तथा दानोंके योगन बगले समझकर बुद्ध उड़ गय ॥ ९ ॥

इसका मत किमी किमी अग्निमें ज्वलितका लहारा ज्वलित रहत है ।

ध्रुवपैः क्षितैः क्षत्तैस्तयास्त्रैश्चैव दारुणैः ।  
 तपार्थ्युद्धममृद्ध्य सर्वलोकमयङ्करम् ॥११॥  
 दिव्यान्ध्रस्त्राणि श्रुतशो मुमुक्षे यान्यधाम्बिका ।  
 वमञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीधातकर्त्रिभिः ॥१२॥  
 मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।  
 वमञ्ज लीलयेनोद्यद्गुह्यारोचारणादिभिः ॥१३॥  
 ततः श्रुत्वा तैर्देवीमान्छादयत् सौऽसुरः ।  
 सौपि सत्कृपितां देवीं वनुषिच्छेद चेपुमि ॥१४॥  
 छिन्ने वनुषि दैत्येन्द्रस्तथा क्षक्तिमधादद ।  
 विच्छेद देवीं चक्रण तामप्यस्य करं स्थिताम् ॥१५॥  
 ततः स्वङ्गमुपादाय श्रुतचन्द्रं च भानुमत् ।  
 अन्यथावर्त्तदा देवीं दत्पानामधिपेश्वर ॥१६॥

वामोक्षी करा तथा हीले शस्त्रों एवं शस्त्र अक्षोंके प्रहारके कारण उन दोनोंका  
 मुह सब ओगोंके किये बड़ा मयानक प्रतीत हुआ ॥ ११ ॥ उस समय  
 अम्बिका देवीने जो सत्कृती दिव्य अस्त्र छोड़े उन्हें दैत्यराज छुम्मे उनके  
 निवारक अक्षोंद्वारा काट डाला ॥ १२ ॥ इसी प्रकार छुम्मे भी जो दिव्य  
 अस्त्र अस्त्रये उन्हें परमेश्वरीने मयंकर हुकार शब्दके उच्चारण आदिद्वारा  
 निष्कृष्टाद्वै ही मट कर डाला ॥ १३ ॥ तब उस असुरने सैकड़ों वार्ष्णि देवीको  
 आच्छादित कर दिया । यह देख ओषमें मरी हुए तब देवीने भी वायु  
 मारकर उसका वनुष काट डाला ॥ १४ ॥ वनुष काट जानेपर छि दैत्यराज-  
 ने क्षक्ति हाथमें ली किन्तु देवीने चमके उनके हाथकी क्षक्तिसे भी काट  
 दिया ॥ १५ ॥ तत्पश्चात् देवीके स्वामी छुम्मेने ली चाँदवाही वमकरी हुए  
 वायु और तत्पश्चात् दायाँ से उस समय देवीपर बाधा किया ॥ १६ ॥



मस्मापतत एवाशु स्वर्गं चिच्छेद चण्डिका ।  
 धनुर्मुक्तैः शिवबाणैर्धर्मं चाकुरामत्सम् ॥१७॥  
 इताश्च स तदा दैत्यशिखणधरा विसारयिः ।  
 व्यग्रं मुद्गरं परमम्बिकानिधनायतः ॥१८॥  
 चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः ।  
 तथापि सोऽम्बिकावर्ता मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् ॥१९॥  
 स मुष्टिं पातयामास हृदयं दैत्यपुङ्गवः ।  
 द्रव्यास्तं चापि सा देवी तल्लनोरसताडयत् ॥२॥  
 तलप्रहाराभिहता निपपात महीतले ।  
 स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥२१॥  
 उत्पत्य च प्रगृह्णात्पर्वदेवीं गगनमास्थित ।  
 तत्रापि सा निराधारा मुपुषे तेन चण्डिका ॥२२॥

ठमके अने ही चण्डिकाने अपने वनपते छोड़े हुए छीले बायोबाय ठमके कर्त  
 निरबोके समान ठमके बाय और तन्वारको कुरंत काट दिया ॥ १७ ॥  
 फिर ठम देवने बोड़े और तन्ववि मारे यन् वनप तो पड़े ही कट पुता  
 बा भन ठमने अम्बिकाको मारनेके बिने ठपन हो मवकर मुद्गर हाथमें  
 लिया ॥ १८ ॥ उने अले देव देवीने जम्ने तीक्ष्ण बायोके ठमके मुद्गर मी काट  
 बाय निजर मी बा अतुर मुक्त तानकर बड़े वेगसे देवीकी ओर  
 छाप्प ॥ १९ ॥ ठम देवराजने देवीकी छातीमें मुक्त माथ वन ठठ देवीने  
 मी ठमकी जनीमें एक चाटा बाड़ दिया ॥ २० ॥ देवीका कण्ठ साकर  
 देवराज मुक्त प्रणीय गिर पड़ा किन्तु पुनः कृष्ण पूवम् ठठकर लड़ा  
 हो गया ॥ ॥ फिर वह ठठका और देवीको ठमर के अन्तर धारणमें  
 लड़ा ना गया तब चण्डिका आकाशमें भी गिना किती माथरके ही मुम्मेके

इमं वाचं शिवा शिवा शिवे—अम्बिका चण्डिका रत्न तन्ववि

निपुद्ग खे तदा दैत्यमण्डिका ख परस्परम् ।

शक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविसमकारकम् ॥ २३ ॥

ततो निपुद्ग सुचिरं कृत्वा सेनामण्डिका सह ।

उत्पात्य आमयामास चिक्षेप धरणीतले ॥ २४ ॥

तत्र क्षितौ धरणी प्राप्य मृष्टिमुद्यम्य वेगितः ।

अम्यधावत दुष्टात्मा अण्डिका निघनेच्छया ॥ २५ ॥

तमायान्तं तदा देवी सर्वदैत्यबनेश्वरम् ।

वगत्या पातयामास भिक्षा गूलेन वक्षसि ॥ २६ ॥

स गतासु पपाताम्या देवीगुलाग्रविक्षत ।

बालयन् सकलां पृथ्वीं सान्निध्वीर्षा सपर्वताम् ॥ २७ ॥

ततः प्रसन्नमखिलं हृते तस्मिन् दुरात्मनि ।

जगत्वास्थ्यमतीषाप निर्मलं आभस्मिन्मः ॥ २८ ॥

शक्र पुद्ग करने लगी ॥ २३ ॥ उक्त समय देख और अण्डिका अजायमे एक  
गूले से करने लगे । उनका वह पुद्ग परत सिद्ध और मुनियों को विम्वयने  
आयनेश्वर हुआ ॥ २४ ॥ फिर अण्डिकाने गुम्फे काय बहुत देर तक पुद्ग  
करने के पक्षान् उमे ठंडाकर पुमाया और पृथ्वी पर पटक दिया ॥ २५ ॥ पटक  
करने पर पृथ्वी पर आ के पार वह पुमाया देख पुनः अण्डिका का वह  
करने के लिये ठनकी आर वह अगने होया ॥ २६ ॥ तब समय देख के  
पक्ष पुमाया भवनी आर आत देव देवीने सिद्धयने उगदी छाती से दहर  
उमे पृथ्वी पर गिरा दिया ॥ २७ ॥ देवी अण्डिका पारने पक्ष देवने उगदे  
पक्ष लोभ उह गत और यह लक्ष्मी हीने गया पक्ष लक्ष्मी लक्ष्मी पृथ्वी  
को ब्रह्मा हुआ भूमि पर गिरा ॥ २८ ॥ लक्ष्मी उग दुग यदे का  
देवने लक्ष्मी अण्डिका पक्ष लक्ष्मी पक्ष लक्ष्मी हा गत । अण्डिका पक्ष

उत्पातमथाः सोन्ध ये प्राप्तास्तस्ते धर्मं ययुः ।  
 सखितो मागेभादिन्मस्तथास्तत्र पातिते ॥२९॥  
 तथा देवगणाः सर्वे हर्षनिर्मरमानसाः ।  
 ययुर्निहत तमिन् गन्धर्वा ललितं अयुः ॥३०॥  
 अवाद्यस्तथैवान्ये ननुतुषाप्सरागणाः ।  
 ययु पुष्पास्तथा वाताः सुप्रमोऽमृदिवाकरः ॥३१॥  
 बन्धतुषाग्रयः शान्ताः शान्तादिग्गनितस्वनाः ॥३२॥  
 इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सार्वभौमिके मन्वन्तरं देवीमाहात्म्ये

शुम्भराजो नाम दसमोऽप्यक्षयः ॥ १० ॥

उवाच ॥ अर्चयिष्ये ॥ १० ॥ २७ एवम् ३२ एवमाप्तिता ५७५१

शिवजी बने कहा ॥ ८ ॥ वह जो उत्पातमूचक मेघ और उत्पात होवे  
 के, वे तर धातु हो गये तथा उत देवके मारे जानेपर मरिचों मी डीक  
 मरिचि बहने लगी ॥ २९ ॥ उन समय छुम्भजी मृत्युके बाद तमूच देवछात्रोंका  
 हृदय हरिने नर गया और गन्धर्वकय मधुर घीत करने लगे ॥ ३० ॥  
 हुने गन्धर्व वागे बजाने लगे और अप्सराएँ नाचने लगीं । पवित्र ययु  
 बहने लगे । मृमकी प्रमा उत्तम हो गयी ॥ ३१ ॥ अग्निछात्रजी कुली हुई  
 मागे लगे अन्य प्रपञ्चिन हो उठी तथा धमूच विद्यायोगी मयकर  
 छम्भ शान्त हो गये ॥ ३२ ॥

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराणमें सार्वभौमिक मन्वन्तरकी कथाके अन्तमें  
 श्रीमहात्म्यमें 'शुम्भराज' नामक दसमों मन्वाव पूरा हुआ ॥ १० ॥

# एकादशोऽध्याय

देवताओंद्वारा देवीकी स्तुति तथा

देवीद्वारा देवताओंको

करदान

प्यानम्

बालरविपुतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुशां नयनत्रयमुक्ताम् ।

स्मरत्स्वीं वरदाङ्गुशपाद्माभीतिहतां प्रमजे सुवनेशीम् ॥

ॐ कृपिण्याम् ॥ १ ॥

देव्या इत तत्र महामुरेन्द्र

सेन्द्रा सुरा वह्निपुंगवमास्ताम् ।

कात्यायनीं तुष्टुनुरिष्टलोमावू

निकाश्रियकशाब्जविक्रान्तिताया ॥ २ ॥

मैं मुक्तेश्वरी देवीका प्यान करता हूँ । उनके भीमहोत्री आभा प्रमाणकाष्ठके लक्षके समान है । मणिकरकिन्त्रमाका मुरुर है । ये उमर हुए सनो और तीन नेत्रोके मुक्त है । उनके मुगगर मुगगलकी छया छापी रहती है और हाथोंमें वरद अङ्गुश पद्म एवं भयम मुद्रा आभा पाठे हैं ।

श्रुति कहत है—॥ १ ॥ देवीके द्वारा बर्तों महादेवनि सुम्भके मोरे ज्ञानर हृद आदि देवता आदिओ आग करके उन कात्यायनी देवीकी स्तुति करने लगे । उन समय अभीष्टकी प्राप्ति होनेसे उनके मुगगल दमक उठे व और उनके वरदने निष्कर्ष भी आगमा उठी भी ॥ २ ॥

देवि प्रपन्नार्तिहर प्रसीद  
 प्रसीद मातर्जगताऽस्तित्सव ।  
 प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्व  
 स्वामीश्वरी देवि चराचरस्य ॥ ३ ॥  
 आचारमृता अगतस्त्वमेका  
 महीस्वरूपेण यतः सितासि ।  
 जपां स्वरूपमिषया स्वयैत  
 दाप्यायतं कृत्स्नमसङ्गपवीर्णे ॥ ४ ॥  
 त्वं वैष्णवी छक्तिरनन्तवीर्या  
 विश्वस्य बीजं परमासि माया ।  
 सम्माहितं देवि समस्तमेतत्  
 त्वं वै प्रसन्ना मुनि मुक्तिहेतुः ॥ ५ ॥  
 विद्याः समस्त्यास्तव देवि मेदाः  
 स्त्रिय समस्ताः सकला अगस्तु ।

देवता वा - चरणागलकी की हूँ करके पायी देवि । हमर प्रकल्प होमो ।  
 समस्त अगल की माता । प्रकल्प होमो । विश्वेश्वरि । विश्व की रक्षा करो । देवि ।  
 तुम्ही चराचर अगल की मयीश्वरी हो ॥ ३ ॥ तुम इत अगल का एकमात्र आधार  
 हो क्योंकि तुम्ही अगल के समुदायी ही स्थिति है । देवि । तुम्हारा परमम अगल-  
 नीम है । तुम्ही अगल के स्थित होकर अगल को पुन करती हो ॥ ४ ॥  
 तुम अगल प्रकल्पन के सभी शक्ति हो । इस विश्व की कारणमृता पर माया  
 हो । देवि तुम्हो इन अगल अगल को मोहित कर रक्ता है । तुम्ही प्रकल्प  
 होकर इन प्रकल्प पर मोहित करती हो ॥ ५ ॥ देवि । अगल के लिये  
 तुम्हारे ही मित्र मित्र स्वरूप हैं । अगल के अगल के हैं । वे सब तुम्हारी

स्वयंकृपा

पूरितमम्वयैतत्

का ते स्तुति स्तम्भपरा परोक्तिः ॥ ६ ॥

सर्वमृता यदा दधी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी ।

न स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमाक्तयः ॥ ७ ॥

सर्वस्य बुद्धिरूपण जनस्य हृदि समित ।

स्वगापसर्गदे दधि नारायणि नमाऽस्तु त ॥ ८ ॥

फलाफाष्टादिरूपण परिणामप्रदायिनि ।

विधम्योपरतां शक्त नारायणि नमाऽस्तु ते ॥ ९ ॥

सर्वमद्गलमद्गल्ये शिषे सर्वार्थमाधिके ।

शरण्ये श्रम्यके गौरि नारायणि नमाऽस्तु त ॥ १० ॥

सृष्टिमिति विनाशनां गतिमूखे मनसिनि ।

गुणाधये गुणमये नारायणि नमाऽस्तु त ॥ ११ ॥

श्रीकृष्णः । अगम्यः । एकवार तुमने ही इस विषय स्पष्ट कर दिया है । तुमने ही कहा हो नवती है । तुम ही नारायण करने योग्य पदार्थों में से सर्वोत्तम बानी हो ॥ ६ ॥ जब तुम सर्वमम्वयैतत् की लक्ष्मी देती हो । तुमने ही कहा हो नवती है ॥ ७ ॥ बुद्धिरूपण करने योग्य बानी हो ॥ ८ ॥ फलाफाष्टादिरूपण करने योग्य बानी हो ॥ ९ ॥ विधम्योपरतां करने योग्य बानी हो ॥ १० ॥ श्रम्यके करने योग्य बानी हो ॥ ११ ॥

१. क. दधि २. क. नारायणः ।

धरणागतदीनार्थपरिचाणपरायणे ।  
 सर्वस्वार्चिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१२॥  
 हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि ।  
 कौशान्मःशरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१३॥  
 त्रिशूलचन्द्रादिभर महावृषभबाहिनि ।  
 माहेभरीन्करूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१४॥  
 मयूरकङ्कणभूते महाशक्तिधरेऽनघे ।  
 कामारीरूपसत्त्वाने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१५॥  
 शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे ।  
 प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१६॥  
 गृहीताग्रमहाचक्रे वृद्धोद्धतवसुन्धरे ।  
 वराहरूपिणि शिबे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१७॥

तुम्ह नमस्कार है ॥ १ ॥ धरणमें आने हुए दीनों एवं पौकियोंकी रक्षामें  
 लक्ष्मण रहनेवाली तथा लवली पीडा दूर करनेवाली नारायणी देवी । तुम्हें  
 नमस्कार है ॥ २ ॥ नरगावधि । तुम ब्रह्माणीका रूप धारण करके ईश्वर  
 भूते हुए विमानपर बैठली तथा कुछ मिलित रूप छिद्रवाली रहती हो । तुम्हें  
 नमस्कार है ॥ ३ ॥ माहेभरीरूपसे त्रिशूल चन्द्रमा एवं सरासरी धारण  
 करनेवाली तथा महान् वृषभकी पीठपर बंठनेवाली मयूरवाली देवी । तुम्हें  
 नमस्कार है ॥ ४ ॥ धोरों और मुगाते चिटी रहनेवाली तथा महाशक्ति  
 धारण करनेवाली कामारीरूपधारिणी विष्णुसे नमस्कार । तुम्हें नमस्कार  
 है ॥ ५ ॥ शङ्ख चक्र गदा और शार्ङ्गचक्ररूप उद्यम आयुधोंसे धारण  
 करनेवाली वैष्णवी शक्तिरूप नारायणि । तुम प्रकट होओ । तुम्हें नमस्कार  
 है ॥ ६ ॥ हाथमें भयानक महाचक्र लिये और वज्रोंपर चढ़ीओ उग्रसे  
 वराहीरूपका गीत बजावतवाली नारायणि । तुम्हें नमस्कार है ॥ १७ ॥

नृसिंहरूपेणोद्येण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे ।  
 त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१८॥  
 किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।  
 वृषप्रणहर चेन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१९॥  
 शिवदूतीस्वरूपेण इतदैत्यमहाबले ।  
 घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२०॥  
 दद्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे ।  
 घातुण्ड मुण्डमयने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२१॥  
 लक्ष्मि लज्जे महाविघ्ने भद्रे पुष्टिस्वधे ध्रुवे ।  
 महारौत्रि महोऽविघ्ने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२२॥  
 मेघे सरस्वति धरे भूति धामनि धामसि ।

मर्वकरचक्रिस्वरूपे दैत्योक्ते वचने सिद्धे उद्योग करनेवाली तथा त्रिभुवनकी रक्षा  
 में लक्ष्मण करनेवाली नारायणि । तुम्हें नमस्कार है ॥ १८ ॥ मल्लकपर किरीट  
 और हाथमें महावज्र धारण करनेवाली सहस्र नेत्रोंके धारण उद्दीप्त दिग्भावी  
 देनेवाली और वृषासुरके प्राणोंका अवरहण करनेवाली इन्द्राक्षकिरूपा नायवनी  
 रेनि । तुम्हें नमस्कार है ॥ १९ ॥ शिवदूतीरूपसे दैत्योंकी महती उन्नाश  
 संहार करनेवाली मर्वकर रूप धारण तथा विकट गर्जना करनेवाली नारायणि ।  
 तुम्हें नमस्कार है ॥ २० ॥ बाणोंके कारण विकराल मुण्डवाली मुण्डमाद्यने  
 विभूषित मुण्डवर्तिनी घातुण्डाख्या नारायणि । तुम्हें नमस्कार है ॥ २१ ॥  
 लक्ष्मी लज्जा मदविधा भद्रा पुष्टि स्वध ध्रुव महारौत्रि तथा महा  
 भविष्यरूपा नारायणि । तुम्हें नमस्कार है ॥ २२ ॥ मेघा सरस्वती धरा  
 ( मेघा ), भूति ( ऐश्वर्यरूपा ), धामनी ( भूरे गङ्गा अथवा चारुती ),



नियते त्वं प्रसीदेष्टे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२३॥  
 मर्षस्वरूपे सर्वेष्टे सर्वशक्तिसमन्विते ।  
 भयम्यत्नादि ना वपि दुर्गे देवि नमोऽस्तु त ॥२४॥  
 एतत्ते वदनं सौम्यं लोफनत्रयमूपितम् ।  
 पातु न सर्वमीशिम्यः कात्पायनि नमोऽस्तु ते ॥२५॥  
 ज्वालाकृतमन्युप्रमक्षपासुरसद्गनम् ।  
 शिशुलं पातु ना भीतर्महच्छलि नमोऽस्तु ते ॥२६॥  
 हिनन्ति हृत्पतञ्जसि स्वननापूर्य या जगत् ।  
 सा वप्या पातु ना देवि पापम्याजनः सुतानिव ॥२७॥  
 प्रमुरासुम्भसापङ्कवर्षितस्ते करोज्ज्वलः ।  
 शुभाय नन्दगा भवतु वण्डिके त्वां नता वयम् ॥२८॥

तमसी ( मङ्गलसी ) निवन्ध ( तपसापण्डिता ) तप्य ईषा ( तपसी जप-  
 करी ) कर्मिणी मातराणि । तुम्हें नमस्कार है ॥ २३ ॥ सर्वशक्तता सर्वकारी  
 तप्य कर प्रकारकी शक्तिमान् तमत्र दिव्यकृपा तुम्हें देदि । तब मर्षोत्तु हमारी  
 रक्षा करो तुम्हें नमस्कार है ॥ २४ ॥ कल्याणकी ! वह तीन कोकरोति  
 विभूषित तुम्हारा श्रेष्ठ पुत्र तब प्रकारसे मर्षोत्तु हमारी रक्षा करो । तुम्हें  
 नमस्कार है ॥ २५ ॥ भद्रकाशी गायत्रीको करण विकराक प्रतीत होनेवाला  
 मन्त्रमन्त्र भद्रकर और ममल अतुलीका लक्षार करनेवाला तुम्हारा विद्या  
 मयले हमें कृपावे । तुम्हें नमस्कार है ॥ २६ ॥ देवि ! जो अपनी धर्मिणी  
 समूह समूहो म्मात्र रखे ईश्वरके तैम नष्ट निवे देता है वह तुम्हारा  
 वप्या हमारेगीकी पापीके जन्मी प्रकार रक्षा कर जैसे माता करने पुत्रोंकी सुर  
 रक्षामि रक्षा करती है ॥ २७ ॥ वण्डिके । तुम्हारे शर्षोत्तु तुल्यमित्त काह  
 ने अतुलीक रण और वसीश वर्षित है हमारा मङ्गल करे । हम तुम्हें नमस्कार

प्रत्यक्षता गीतागान्ते वहाँ एक वन्द्यो वरिष्ठ काह यत्ना है जो हम मङ्गल है—

नमः शशिवाताय

सर्वतोऽविधिरुदये

नमः शशिवाताय

मातामणि

नमः शशि

ते ५

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा  
 रुष्टा तु कामान् सफलानभीष्टान् ।  
 स्वामाभितानां न विषमराणां  
 स्वामाभिताऽभयतां प्रयान्ति ॥ २९ ॥  
 एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य  
 धर्मद्विषां देवि महासुराणाम् ।  
 रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्ममूर्तिं  
 कृत्वाम्बिकेतत्प्रकरोति कान्त्या ॥ ३० ॥  
 विघासु शस्त्रेषु विषेकदीपे  
 प्वाघेषु बाक्येषु च का स्वदन्या ।  
 ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे  
 विभ्रामयस्येतदतीत्य विश्वम् ॥ ३१ ॥  
 रक्षांसि यत्रोपविषास्य नागा  
 यत्रारयो दस्युबलानि यत्र ।

करते हैं ॥ २८ ॥ देवि । तुम प्रलय होनेपर सब रोगोंको नष्ट कर देती हो  
 और दुस्मि होनेपर मनोबान्धित सभी कामनाओंका मम्य कर देती हो ।  
 ओ योग तुम्हारी शरणमें आ चुके हैं उनपर पिरसि का आती ही मरी ।  
 तुम्हारी शरणमें गये हुए मनुष्य बुरीको शरण देनेगाने हो करते हैं ॥ २९ ॥  
 देवि । अम्बिके ॥ तुमने अपने स्वरूपको अनेक भागोंमें विभक्त करके ममा  
 प्रकारके रूपोंसे ओ इस समय इन धर्मद्रोही महारैलीका लंकार किया है वह  
 सब बुरी कौन कर सकती थी ॥ ३० ॥ विघातोंमें धनको प्रकाशित  
 करनेवाले शस्त्रोंमें तथा आदिपाशों ( बैरी ) में तुम्हारे विषा और विनका  
 बमन दे । तथा तुमको छोड़कर बुरी कौन ऐसी शक्ति दे ओ इन विषको  
 अत्यन्तमय घोर अन्धकारसे परैपूर्ण ममताङ्गी गद्गमें निरन्तर मदका रही  
 हो ॥ ३१ ॥ जहाँ शस्त्र जहाँ भयकर विषाके तर्ज जहाँ शत्रु जहाँ छटेछेकी

दावानला पत्र तथाप्यिमध्ये  
 तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥३२॥  
 विश्वेपरि त्वं परिपासि विश्वं  
 विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम् ।  
 विश्वस्रवण्या भवती भवन्ति  
 विश्वाभया ये स्ववि मक्तिनज्राः ॥३३॥  
 देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिमीते-  
 नित्वं यद्यसुरवचात्पुनश्च सद्य ।  
 पापानि सद्यज्जतां प्रश्रम नवाप्तु  
 उत्पातपाकजनितां च महोपसर्मान् ॥३४॥  
 प्रपतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि ।  
 ब्रह्माक्षयवासिनामीक्ष्ये लाक्ष्मणां वरदा मम ॥३५॥

मेना भीम जहाँ दावानला हो क्यों तथा समुद्रके बीचमें मैं तब रहकर तुम  
 विश्वकी रक्षा करती हो ॥ ३२ ॥ विश्वेपरि । तुम विश्वका पालन करती हो ।  
 विश्वरूपा हो इच्छित्वे सम्पूर्ण विश्वको धारण करती हो । तुम भगवन्  
 विश्वनाथकी श्री कन्दलीका हो । जो लोग मक्तिपूर्वक तुम्हारे सामने मस्तक  
 स्पर्शते हैं वे सम्पूर्ण विश्वको आश्रय देनेवाले होते हैं ॥ ३३ ॥ देवि । प्रसन्न  
 होओ । जैसे मैं समस्त असुरोंका वध करके तुमने शीघ्र ही हमारी रक्षा की  
 है उसी प्रकार मत्ता होम क्षत्रियोंके मगने बचाओ । सम्पूर्ण अमरका पाव  
 मक्ष कर दो और उत्पातपक्षपातके फलस्वरूप प्रसन्न होनेवाले महाभयरी आदि  
 बड़े-बड़े उपद्रवोंको शीघ्र दूर करो ॥ ३४ ॥ विश्वकी पीड़ा दूर करनेवाली  
 देवि हम तुम्हारे चरणोंपर पड़े हुए हैं हमसे प्रसन्न होओ । विश्वेक-  
 निवासिबोकी प्रकटीष्ट परमेश्वरि । तब लोगोको बखान हो ॥ ३५ ॥

देव्युवाच ॥ ३६ ॥

वरदाहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ ।

तं शृणुष्व प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥ ३७ ॥

देवा उवाच ॥ ३८ ॥

सर्वापावाप्रक्षमनं त्रैलोक्यस्यास्त्रिलेश्वरि ।

एवमेव स्वया कार्यमसहैरिविनाशनम् ॥ ३९ ॥

देव्युवाच ॥ ४० ॥

वैवस्वतेऽन्तर प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युग ।

शुम्भो निशुम्भश्चैवान्याबुत्पत्स्येते महासुरौ ॥ ४१ ॥

नन्दगोपगृहं ज्ञाता यज्ञोदागर्मसम्मवा ।

ततस्तौ नाशयिष्यामि विष्ण्वाचलनिवासिनी ॥ ४२ ॥

पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।

अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचितास्तु दानवान् ॥ ४३ ॥

देवी बोली—॥ ३६ ॥ देवताजी । मैं वर देनेको तैयार हूँ ।

इन्हारे मनमें जिसकी इच्छा हो, वह वर माँग लो । तब उसके लिये उस

उपकारक वरको मैं अवश्य दूँगी ॥ ३७ ॥

देवता बोली—॥ ३८ ॥ तबेश्वरि । तुम इसी प्रकार तीनों लोकोंकी

सम्स्त वायव्यमोकोशान्त करो और हमारे शत्रुओंका नाश करती रहो ॥ ३९ ॥

देवी बोली—॥ ४० ॥ देवताजी । वैवस्वत मन्वन्तरके अष्टाविंशत

युगमें शुम्भ और निशुम्भ नामके दो बन्धु महादेव उत्पन्न होंगे ॥ ४१ ॥ तब मैं

मन्वन्तरके धरमें उनकी पत्नी यज्ञोदाके गर्भसे अवतीर्ण हो विष्ण्वाचलमें

बाहर रूँगी और उस दोनों अशुरोंका नाश करूँगी ॥ ४२ ॥ फिर अत्यन्त

मरकर हमसे पूज्योपर अवतार के मैं वैप्रचित नाम्नाके दानवोंका वध

मधयन्त्याम तानुग्रान् वैप्रनिधान्महासुरान् ।  
 रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाहिमीकृतुमापमाः ॥ ४४ ॥  
 तथा मां देवताः पुंगे मत्संछाके च मानवाः ।  
 स्तुवन्ता अप्पाहरिष्यन्ति ससर्त रक्तदन्तिक्कम् ॥ ४५ ॥  
 भृमय दत्तवापिक्क्यामनावृष्ट्यामनम्मसि ।  
 मुनिमिः संस्तुता भूमौ सुम्मविष्प्याम्भयानिवा ॥ ४६ ॥  
 ततः पुनन नेत्रणा निरीक्षिष्यामि बन्धुनीन् ।  
 कीतयिष्यन्ति मनुष्याः दत्ताक्षीमिति मां ततः ॥ ४७ ॥  
 तताऽहमन्विल लोकमारमदेहसमुद्भवः ।  
 मरिष्यामि सुराः शार्ङ्गावृष्टेः प्राणभारकैः ॥ ४८ ॥  
 शार्ङ्गम्मरीति विष्प्याति तदा यास्याम्यहं भूपि ।  
 तत्र च य बधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ॥ ४९ ॥  
 दुर्गां दवीति विष्प्यात तन्मे नाम भविष्याति ।

कहेंगी ॥ ३ ॥ उन समयकर महादेवका मक्षण करते समय मेरे हाँव अन्दरके  
 पूछनी माँति काक हाँवोंगे ॥ ४४ ॥ उन समयमें देवता और मरुतोंके  
 मनुष्य महा मरी मूर्ति करते हुए मुझे मरुतलिका कहेंगे ॥ ४५ ॥ फिर  
 उन प्रणीत भी बपाक बिने क्या एक आकषी और पत्नीका समग्र हो  
 जाकना उन समय मुनियोंने ज्ञान करनेपर मैं धृषीर अयोनिशाममें  
 प्रकट हाँकी ॥ ४६ ॥ और भी निशोंने मुनियोंनी और देखेंगी । अथ  
 मनुष्य गताक्षी इग नामने महा कीर्न कहेंगे ॥ ४७ ॥ देवताओं । उन  
 समय मैं ज्ञान शक्ति उपाय हुए शार्ङ्गिद्वारा समय संचारकर मरुत-देव  
 कहेंगी । अथक दुर्गा नहीं होगी तत्काल वे पाक ही उनके प्राचीनी रहा  
 कहेंगे ॥ ॥ एता करनेने सारक प्रणीर शार्ङ्गमरी के नामसे मेरी  
 कप्रति "भी । उगी अस्तारमें मैं दुर्गम नामक महादेवका वच भी  
 कहेंगी ॥ ॥ एता महा नाम 'दुर्गाविही'के करते प्रकट होय ।

पुनर्माहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ॥ ५० ॥

रथांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां श्राणकारणात् ।

तदा मां मृनयः सर्वे स्ताप्यन्त्यानम्रमूर्तयः ॥ ५१ ॥

भीमा दवीति विस्मयात् तन्मे नाम भविष्यति ।

यदारुणास्पृक्षेलाक्ये महाबाधां करिष्यति ॥ ५२ ॥

सदाहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयपट्पदम् ।

त्रैलोक्यस्य हिताथाय भविष्यामि महासुरम् ॥ ५३ ॥

भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः ।

इत्थं यदा यदा बाधा दानवात्था भविष्यति ॥ ५४ ॥

तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंख्यम् ॥ ॐ ॥ ५५ ॥

इति भीमार्कण्डेयपुराणे सावर्जिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्याः

स्तुतिर्नामैकांशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

उपनिषद् अथस्तोत्रम् १ स्तोत्रम् ५ एकम् ५५ एवमादितः ६३ ॥

फिर जब मैं भीमरूप धारण करके मुनिवृक्षों के छाके छिये हिमाचलपर रहनेवाले एकलौका भक्षण करूँगी उस समय जब मुनि भक्तिसे नतमस्तक होकर मेरी स्तुति करेंगे ॥ ५०-५१ ॥ तब मेरा नाम 'भीमादेवी' के रूपमें विख्यात होगा । जब अरुण नामक दैत्य तीनों लोकोंमें भाटी उपद्रव मचायेगा ॥ ५२ ॥ तब मैं तीनो लोकोंका हित करनेके लिये का वैराग्यसे अतर्क्य भ्रमरीका रूप धारण करके उस महादैत्यका वध करूँगी ॥ ५३ ॥ उस समय तब लोग 'भ्रामरी' के नामसे चारों ओर मेरी स्तुति करेंगे । इस प्रकार जब-जब तत्काले दुःखों की बाधा उत्पन्न होगी तब तब अकतार लेकर मैं शत्रुओंका संहार करूँगी ॥ ५४-५५ ॥ इस प्रकार भीमार्कण्डेय पुराणमें सावर्जिक मन्वन्तरकी कथनके अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में 'देवीस्तुति' नामक पञ्चदशी अध्याय पूरा हुआ ॥ ११ ॥

## द्वादशोऽध्याय

देवी-चरित्रोके पाठका माहात्म्य

ध्यानम्

ॐ विष्णुदायसमप्रभां मृगपतिम्कन्यबिस्तां भीष्मां  
कन्यामि करबालखेटविलसद्गस्ताभिरासेषिताम् ।  
इन्तश्चक्रादासिखेटविशिस्तांवाप गुणं तर्जनीं  
विभ्राज्यामनलात्मिकां क्षुब्धिपरां दुर्गां त्रिनेत्रां मजे ॥

ॐ देव्युवाच ॥ १ ॥

एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्ताप्यते यः समाहितः ।

तस्माद् मकलां वाचां नाष्टयिष्याम्यसंशयम् ॥ २ ॥

म तीन नेत्रीवाली दुर्गा देवीरा ज्ञान करण हैं उनके श्रीमद्गोपी प्रभा रिपनीक लगान है । व सिद्ध करेपर बेडी हुई भक्कर प्रतीत होती है । हाथमें तन्त्राग और हाथ चिय अनेक कन्याएँ उनको लेगमें लड़ी हैं । व ज्ञान ज्ञानमें चर गरी तन्त्राग हाथ बाध धनुष पक्ष और तर्जनी म । शम्भु किये लण है । उनका स्वल्प अग्निमय है तथा वे सवेपर अग्रम-वा नरुत धारण करती है ।

इषी वाक्मि—॥ ॥ वदताम् । ॥ अष्टावधिरु होकर प्रतिदिन न गुं गेम म । ज्ञान करण उजरी लगी राधा में निधम ही बुर कर

मधुकैटभनाशं च महिषासुरपातनम् ।  
 कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वत् बर्षं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ३ ॥  
 अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः ।  
 शोष्यन्ति चैव ये मक्षस्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ॥ ४ ॥  
 न तेषां दुष्कृतं किञ्चित् दुष्कृतोत्था न चापदः ।  
 मविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ॥ ५ ॥  
 क्षत्रुतो न मयं तस्य दस्युतो वा न राजतः ।  
 न क्षत्रानलतोयौघात्कदाचित्सम्भविष्यति ॥ ६ ॥  
 तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः ।  
 मातव्यं च सदा मक्षस्या परस्वस्त्ययनं हि तत् ॥ ७ ॥  
 उपसगान्धेपांस्तु महामारीसमुद्भवान् ।  
 तथा त्रिविधमुत्पात माहात्म्यं क्षमयेमम ॥ ८ ॥

श्रीमद् ॥ १ ॥ जो मधुकैटभनाश महिषासुरका च तदा शुम्भ-निशुम्भके  
 वंशके प्रसङ्गका पाठ करेंगे ॥ १ ॥ तथा अष्टमी, चतुर्दशी और नवमीको  
 भी जो एकामपि हो मतिपूर्वक भरे उत्तम माहात्म्यका अन्वय करेंगे  
 ॥ ४ ॥ उन्हें कोई पाप नहीं हो सकेगा । उनपर पापजनित आघातियों की  
 भी आयेगी । उनके घरमें कमी दरिद्रता नहीं होगी तथा उनको कमी  
 प्रेमीकीके विजोहवा कह भी नहीं भोगना पड़ेगा ॥ ५ ॥ इतना ही नहीं  
 उन्हें क्षत्रु क्षत्रुके राजसे भयसे अश्विषेतया मक्षकी राशिसे भी कमी मय  
 नहीं होगा ॥ ६ ॥ इत्युक्तिये सबको एकामपि होकर मतिपूर्वक भरे इत  
 माहात्म्यको तथा पढ़ना और सुनना चाहिये । यह परम कल्याणकारक है  
 ॥ ७ ॥ मया माहात्म्य महामारीजनित समस्त उपद्रवों तथा आघातिक आदि



यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्निष्पत्त्यायतने मम ।  
 सदा न सद्भिमाप्सामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ॥ ९ ॥  
 बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्ये महोत्सवे ।  
 सर्वं ममेतच्चरितमुद्यमं भ्राज्यमेव च ॥ १० ॥  
 ज्ञानताञ्ज्ञानता वापि बलिपूर्वा तथा कृतम् ।  
 प्रदीपिष्याम्यहं प्रीत्या बह्निहोमं तथा कृतम् ॥ ११ ॥  
 घरस्थाले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।  
 तस्यां ममेतन्माहात्म्यं सुत्वा भक्तिसमन्वितः ॥ १२ ॥  
 सर्वोपायाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः ।  
 मनुष्यो मन्त्रसाधेन भविष्यति न संशयः ॥ १३ ॥  
 भुत्वा ममेतन्माहात्म्यं तथा चात्पचयः क्षुमाः ।  
 पराक्रमं च युद्धेषु आयते निर्भयः पुमान् ॥ १४ ॥

छैनो प्रकारके उपायोंको प्राप्त करीबान्ना है ॥ ८ ॥ मेरे कित मन्दिरमें  
 प्रतिदिन विविधपुस्तक मेरे इस माहात्म्यका पाठ किया जाता है उस स्थानको  
 मैं कभी नहीं छोड़ती । वहाँ क्या ही मेरा समिधान बना रहता है ॥ ९ ॥  
 बलिदान पूजा होम तथा मातामन्त्रके अस्तौत्पर मेरे इस चरितका पूरा-पूरा  
 पाठ और प्रत्यक्ष करना चाहिये ॥ १० ॥ ऐसा करनेपर मनुष्य विविध  
 ज्ञानकर या विना करने भी सब लिये का बलि पूजा या होम अच्छे करेगा  
 ठीक से वही प्रत्यक्षताके साथ महान् करेगा ॥ ११ ॥ घरस्थालमें जो वार्षिक  
 महापूजा की जाती है उस अनंतरपर जो मेरे इस माहात्म्यको मन्त्रपूर्वक  
 सुनेगा वह मनुष्य सब प्रकारके धन धान्यसुतान्वित तथा धन धान्य एवं  
 पुत्रपौत्र सब होगा—मम भक्तिक मी सम्यक् मही है ॥ १२ १३ ॥ मेरा यह  
 माहात्म्य मेरे प्राबुधोंकी सुन्दर कथाएँ तथा युद्धमें किये हुए मेरे पराक्रम

रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याण चोपपद्यते ।  
 नन्दते च क्लृप्तं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥१५॥  
 शान्तिकर्मणि सर्वत्र तथा दुःखमदर्शने ।  
 ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥१६॥  
 तपसर्गाः क्षमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ।  
 दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुखजमुपजायते ॥१७॥  
 बालग्रहामिमृशानां बालानां शान्तिकारकम् ।  
 संघातमेदं च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥१८॥  
 दुर्दृष्टानामश्लेषाणां फलदानिकरं परम् ।  
 रक्षामृतपिशाचानां पठनादेव नाशनम् ॥१९॥  
 सर्वं मम तन्माहात्म्यं मम सन्निधिकारकम् ।  
 पशुपुष्पाभ्यर्घ्यधूपं च गन्धदीपैस्तथोत्तमं ॥२०॥

बुननेन मनुष्य निर्मल हो जाता है ॥१५॥ मेरे माहात्म्य का जप करने से ये  
 दुष्टों के घबु नष्ट हो जाते उन्हें कल्याण की प्राप्ति होती तथा उनका पुत्र  
 जन्मदित रहता है ॥१६॥ सर्वत्र शान्ति-कर्म में भूरे स्थान दिगम्बी हैनेर  
 तथा प्रत्यक्षित मन्त्रद्वारा उच्यते होनेपर मेरा माहात्म्य जपन करना  
 करने ॥१७॥ इससे सब पित्र तथा मन्त्रद्वारा ग्रह-पीडासे शान्त हो जाती  
 है और मनुष्यों-का देहा दुःख दुःस्वप्न तथा मन्त्रमे परिचरित हो जाता  
 है ॥ १८ ॥ बाल-ग्रहोंने आश्रय दुष्ट बाल-को के किये वह माहात्म्य शान्ति  
 प्राप्त है तथा मनुष्यों-के लक्षणमें बृद्ध होनेपर वह अच्छी प्रकार मित्रता  
 करने-का होता है ॥ १८ ॥ यह माहात्म्य जपन दुष्ट-परिहारे के बन्धन  
 नष्ट करने-का है । इनके शास्त्रावले साधनों भग्य और शिवाजी का माग  
 हो जाता है ॥ १९ ॥ मेरा वह सब माहात्म्य मेरे नामों-की प्राप्ति करने-का  
 है । पशु पुष्पा अर्घ्य धूप दीप तथा गन्ध अर्घ्य उत्तम नमस्कार-का पूजन

शिवाणां मोक्षनैर्होमैः प्राक्षणीयैरहर्निशम् ।  
 अन्यैश्च त्रिविधैर्मोगैः प्रदानैर्बत्सरेण वा ॥२१॥  
 प्रीतिर्मे क्रियते सासिन् सकृत्सुखरिते भुते ।  
 भूतं हरति पापानि तथाऽऽराम्यं प्रयच्छति ॥२२॥  
 रथां कराति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम ।  
 पुद्गलं चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिर्दहम् ॥२३॥  
 तस्मिन्भूते वैरिभूतं मयं पुंसां न जायते ।  
 युष्मामि स्तुतया याव याव प्रक्षार्पिमिः कृताः ॥२४॥  
 ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् ।  
 अरम्य प्रान्तरं वापि दत्ताग्निपरिवारितः ॥२५॥  
 दस्युमिवा ब्रूतः धून्य गृहीतो वापि क्षत्रुमिः ।  
 सिंहव्याघ्रानुयाता वा बने वा वनहस्तिमिः ॥२६॥

करनेसे ब्राह्मणोंका मोक्षन करनेसे होम करनेसे प्रतिदिन अग्निप्रेष्ठ करनेसे  
 नाना प्रकारके भस्म अगोंका अर्पण करनेसे तथा राज बने अद्विष्ट एक  
 वर्षतक वा मरी व्याधिका की जाती है और उज्ज्वे भुक्ते भिक्षुकी प्रत्यक्षा  
 होती है उज्ज्वी प्रत्यक्षा मेरे इस उत्तम चरित्रका एक बार भक्षण करनेवाले  
 हो जाती है । यह माहृत्य भक्षण करनेपर पापोंसे हर होता और आराम  
 प्रदान करता है ॥ २२ ॥ मेरे प्रादुर्भाषका कीर्तन समस्त भूतोंने रक्षा  
 करता है तथा मया मुदगिष्यक चरित्र कुछ देवीका तद्वत् करनेवाला है ॥ २३ ॥  
 इसका भक्षण करनेपर मनुष्योंका शत्रुका मय नहीं रहता । देवताओं । दुष्मे  
 और प्रक्षार्पिने वा मरी स्तुतिवा की है ॥ २४ ॥ तथा ब्रह्मजीने जो कृतियों  
 की है वे सभी कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं । कर्मों से मार्गमें अथवा  
 दामानवध मित्र ज्ञानेन ॥ २५ ॥ निर्जन सामग्री कुहेरेके राजमें पद जाने  
 पर वा शत्रुओंका एकदं करनेपर अथवा अग्निकी सिंह व्याघ्र वा वनवासी हस्ति-

रक्षा कृद्धेन चाक्षतो वध्यो वन्धगतोऽपि वा ।  
 व्याघूर्णितो वा वासेन स्थितः पोते महार्णवे ॥२७॥  
 पतस्यु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे ।  
 सर्वाभाषासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ॥२८॥  
 सरन्ममैतधरितं नरो मृन्येत सङ्घटात् ।  
 मम प्रभाषान्तिहाया दस्यवा वैरिणस्तथा ॥२९॥  
 दुरादेन पलायन्ते सरसधरितं मम ॥३०॥

अपित्वाच ॥ ३१ ॥

इत्युक्त्वा सा मगवती चण्डिका चण्डबिक्रमा ॥३१॥  
 पश्यतामेवं दवानां तर्ध्वान्तरधीयत ।  
 तैऽपि देवा निरातङ्गा स्वाधिकारान् यथा पुता ॥३३॥

हे जीऊ करनेसर ॥ २९ ॥ कुणित राजाके आदेशसे बर वा बन्धनके स्थानमें  
 ते आपे जानेसर अथवा महालापरमें माथपर बैठनेके बाद भारी लूटने  
 नशके डगमग होनेसर ॥ २७ ॥ और अथवा मयदूरपुद्धमें धजोंका प्रहार  
 होनेसर अथवा वेदनासे पीड़ित होनेसर कि बहुना अभी पतनक बाषामों  
 के उन्मिश्र होनेसर ॥ २८ ॥ जो धीरे हन पदरिषका स्मरण करता है वह  
 मनुष्य मुकटमें मुक्त हो जाऊ है । धीरे प्रणयने निद्र आदि दिगड बन्यु मर  
 हो जाते हैं तथा तुम्हारे और शत्रु भी धीरे पदरिषका स्मरण करनेवाले पुराने  
 दुरागत हैं ॥ २ - ३ ॥

अपि कहते हैं—॥ ३१ ॥ यी कहकर प्रथम बगवन्महावी  
 रानी चण्डिका लक्ष देवताओंके देवों-देवोंकी वही अन्तर्धान हो गयी ।  
 फिर लक्ष देवता भी शत्रुओंके पारे जानेसे निर्बल हो पड़नेकी ही स्थिति

यद्यमागच्छः सर्वे चक्षुर्विनिहतारयः ।  
 दैत्याश्च देव्या निहते शुम्मे देवरिपौ युधि ॥३४॥  
 जगद्विष्णंसिनि तस्मिन् महाप्रेष्ठुलविक्रमे ।  
 निशुम्मे च महावीर्ये श्रेयाः पातालमाययुः ॥३५॥  
 एवं मगधती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः ।  
 सम्भूय कुरुते भूय जगत्तः परिपालनम् ॥३६॥  
 तयतमाश्रये विश्व सैव विश्व प्रसूयते ।  
 सा याचिता च विद्वान् तृण्य शक्तिं प्रयच्छति ॥३७॥  
 स्माप्यं तयतस्तच्छर्त्तं प्रक्षाल्यं मनुजेश्वर ।  
 महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया ॥३८॥  
 सप्त काले महामारी सैव सृष्टिर्मवत्यजा ।

यद्यमागच्छा उपभोग करते हुए अपने अपने अधिकारका पालन करने लगी ।  
 नगरका विजयन करनेवाक महामावद्वर अमुकगणपती देवसदु ह्यम् तथा  
 महारानी निशुम्माक मुहूर्त देवीशाय मोरे जानेकर दोष देत्व पदपञ्चमेकमे  
 चने जाते ॥ ३ — ५ ॥ यमन् । इस प्रकार मगधती अभिषेक देवी मिल  
 होती ॥ भी पुन पुनः प्रकट होकर जगत्की रक्षा करती हैं ॥ ३६ ॥ वे  
 ही तम विश्वको मोहित करती ॥ ही जगत्को जग्य देती तथा वे ही मार्ग्य  
 करनेकर मनुष्य ही विजयन एवं समुद्रि प्रधान करती हैं ॥ ३७ ॥ यमन् ।  
 महाप्रलयक समय महामागीका स्वयं जपण करनेवाकी वे महाकाकी ही इस  
 समय प्रकाशय स्वात है ॥ ३८ ॥ वे ही समय-समयकर महामयी होती और  
 ३ ही स्वयं जगन्मा होती हुए भी लुटिके जग्य प्रकट होती हैं ।



मङ्गमागच्छतः सर्वे चाकुर्वन्निहतारयः ।  
 वैस्याय देव्या निहते क्षुम्मे देवर्षिपौ पुषि ॥३४॥  
 अगद्विष्मसिनि तस्मिन् महोप्रेष्टुलबिक्रमे ।  
 निक्षुम्मे च महावीर्ये छेपाः पातालमाययुः ॥३५॥  
 एवं मगधती देवी सा निस्थापि पुनः पुनः ।  
 सम्भूय कुरुते भूय अगतः परिपाठनम् ॥३६॥  
 तप्ततन्मोक्षते विश्व सैव विश्व प्रसूयते ।  
 सा याचिता च विज्ञानं तृष्टा चर्हि प्रयच्छति ॥३७॥  
 प्माप्तं तपैस्तत्सकलं ब्रह्माण्डं मनुजैश्चर ।  
 महाक्षत्र्या महाक्षले महामारीस्वरूपया ॥३८॥  
 तत्र क्षले महामारी सैव सुष्टिर्मवस्थजा ।

मङ्गमागच्छतः उपलब्ध करते हुए अपने अपने अधिकारका पालन करने लगे ।  
 मगधका विजय करनेवाले महामावहुर मनुजराजमी वैशद्यु क्षुम्मे तब  
 महाक्षत्री निक्षुम्मेक पुत्रमे वैशीद्यु मारे जानेपर छेप देत्व पातालमेकमे  
 कले अपने ॥ ३४ — ५ ॥ एवम् । इत प्रकर मगधती अश्विक्क देवी क्लिप्त  
 होती ॥ ३५ ॥ पुन पुन प्रकर होकर अगती रक्षा करती है ॥ ३६ ॥ वे  
 ही ॥ ३७ ॥ विज्ञानको मोहित करती ॥ वे ही अगतको जन्म देती तथा वे ही प्रार्थना  
 करनेपर मनुज ही विज्ञान एवं समृद्धि प्रदान करती है ॥ ३८ ॥ एवम् ।  
 महाक्षत्र्यक समस्त महामागीना स्वल्प क्षरण करनेवाली वे महाक्षत्री ही इत  
 समस्त ब्रह्माण्डमें काम है ॥ ३८ ॥ वे ही समस्त-समस्तपर महामारी होती और  
 वे ही स्वयं ब्रह्ममा होती हुई भी सृष्टिके रूपमें प्रकट होती है ।

मोक्षन्ते मोहिताश्चैव मोहमेव्यन्ति चापरे ।  
 तस्मै हि महाराज शरण परमेश्वरीम् ॥ ४ ॥  
 आराधिता सैव नृणां मोगस्वर्गपिषर्गदा ॥ ५ ॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ ६ ॥

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरपः स नराधिपः ॥ ७ ॥  
 प्रणिपत्य महामार्गं तस्मिन् स्थितव्रतम् ।  
 निर्विघ्नोऽतिममत्वेन रत्न्यापहरणेन च ॥ ८ ॥  
 अगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने ।  
 संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुच्छिनसंस्थितः ॥ ९ ॥  
 स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीयुक्तं परं वपन् ।  
 तौ तस्मिन् पुच्छिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् ॥ १० ॥  
 अर्चयामां अकृतुस्तस्याः पुण्यवृषामितर्पणैः ।

कन्यास्य निकेली कन मोहित होते हैं मोहित हुए हैं तथा आगे श्री मोहित  
 होये। महाराज। तुम उनकी परमेश्वरीकी शरणमें आग्यो ॥ ४-४ ॥ आराधना  
 करनेपर वे ही मनुष्योंको मोग स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करती हैं ॥ ५ ॥

मार्कण्डेयजी कहते हैं—॥ ६ ॥ श्रीपुच्छिनी । महामुनिके वे  
 वन हुनकर राजा सुरपने उत्तम भक्त्या पावन करनेपरके उन महामाग  
 मूर्तिके प्रणाम किया । वे अत्यन्त ममता और राग्यपहरणसे बहुत स्थिर  
 हो चुके थे ॥ ७-८ ॥ महामुने । इच्छिने निरक्त होकर वे राजा तथा वैश्य  
 जनाक तपस्याको छोड़े गये और वे अगहम्माके दर्शनके लिये नदीके तटपर  
 परकर तपस्या करने लगे ॥ ९ ॥ वे वैश्य उत्तम देवीयुक्तका अर करते  
 हुए तपस्यामें प्रवृत्त हुए । वे दोनों मरीके तटपर देवीकी मिट्टीकी मूर्ति  
 करके पुण्य, पूजा और दान आदिके द्वारा उनकी आराधना करने लगे ।





मोक्षन्ते मोहिताऽनैव मोहमेव्यन्ति चापरे ।

तामुपैहि महाराज क्षरण परमेश्वरीम् ॥ ४ ॥

भाराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ॥ ५ ॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ ६ ॥

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरयः स नराधिपः ॥ ७ ॥

प्रणिपत्य महामातां तमुपि धंसितव्रतम् ।

निर्विण्णोऽस्तिमत्त्वेन राज्यापहरणेन च ॥ ८ ॥

अगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने ।

संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुत्तिनसंस्थितः ॥ ९ ॥

स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसक्तं परं जपन् ।

तौ तस्मिन् पुत्तिन देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् ॥ १० ॥

अर्चया चक्रतुस्तस्याः पुष्पधूपामितर्पणैः ।

अन्यथा विवेकी कन मोहित होते हैं मोहित हुए हैं तथा आगे भी मोहित रहेंगे । महाराज ! तुम उन्हीं परमेश्वरीकी शरणमें जाओ ॥ ४-४ ॥ आराधना करनेपर वे ही मनुष्योंको भोग स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करती हैं ॥ ५ ॥

मार्कण्डेयजी कहते हैं—॥ ६ ॥ श्रीभट्टकिजी । मेघाशुनिके के कन हुनकर राजा क्षरणने उद्यम प्रतका पावन करनेवाके उन महामाय शक्तिको प्रणाम किया । वे आत्मगत ममता और राज्यापहरणसे बहुत निरा हो चुके थे ॥ ७-८ ॥ महामुने । इत्यधिके निरक्त होकर वे राजा तथा वैश्य एकत्र तपस्याकी चले गये और वे अगदम्बाके दर्शनके लिये नदीके तटपर रहकर तपस्या करने लगे ॥ ९ ॥ वे वैश्य उद्यम देवीसूक्तका जप करते हुए तपस्यामें प्रवृत्त हुए । वे दोनों मन्त्रीके तटपर देवीकी मिष्टीकी मूर्ति बनाकर पुष्प धूप और हवन आदिके द्वारा उनकी आराधना करने लगे ।

निराहारी यथाहारी तन्मनस्को समाहितौ ॥११॥

ददतुस्तौ बलि चैव निजगात्रासुगुष्ठितम् ।

एवं समाराधयतोस्त्रिमिर्बर्षैर्व्यतात्मनोः ॥१२॥

परितुष्टा जगद्गङ्गा प्रत्यर्घ्यं प्राह चण्डिका ॥१३॥

देवमुवाच ॥ १४ ॥

परप्राप्यते त्वया भूप त्वया च हृत्तनन्दन ।

मत्तस्तप्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि त्वत् ॥१५॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ १६ ॥

ततो वने मृगो राज्यमविर्ब्रह्मन्वदम्भनि ।

अत्रैव च निवसन्त्यं इत्यनुवर्त्तं बभूव ॥१७॥

सोऽपि वैभ्यस्ततो ज्ञानं वने निर्विष्यमानसः ।

चन्द्रे नि पदमे हो माहारको बरि-बरि कम किया। फिर किन्तु क निजहार र-  
कर देवीमें ही मन लगाये पन्नाप्रापूर्वक उत्तमा किन्तु भयम्भ किया  
॥ १ ११ ॥ ये दोनों अपने शरीरके रससे मोहित बलि ॥११॥ हुए कपलर  
तोन कर्त्तक तयमपूर्वक मातृपद करी रहे ॥ १२ ॥ इतर मल्ल होकर  
कात्की बालन करने-इसी चण्डिका देवीने मल्लत बर्त्तन देकर कहा ॥१३॥

बुद्धी बोधी—॥ १४ ॥ राजन् । तथा कप्ये कुक्षमे मातृन्दित  
करनेवाले वैद्य । तुमसेम किन्तु बलुकी अभिलषा रचते हो वह कुक्षमे  
मौगो । मैं मन्मथ हूँ । जत तुम्ह यह लज कुक्ष हूँगी ॥ १५ ॥

मार्कण्डेयजी कहते हैं—॥ १६ ॥ तत्र राजने वृत्ते कप्ये म  
न होनेवाला राज्य मौगा तथा इन कप्ये भी अनुभवेकी कन्दको बलपूर्वक  
तह करने दून । जना राज्य प्राप्त कर कैनेम करवम मौगा ॥ १७ ॥  
देवता विन मन्मथी जोरने किन्तु एव विरक्त हो बुद्धा या भीर मे बने

ममेत्यहमिति प्राप्ताः सङ्गविष्णुविकारकम् ॥१८॥

देव्युवाच ॥ १९ ॥

सन्त्यैरहोभिर्नृपते स्व राज्यं प्राप्स्यते मवान् ॥२०॥

इत्था रिपून्स्त्रलितं तव तत्र भविष्यति ॥२१॥

मृत्युं भूयः सम्प्राप्य जन्म देवाद्विषस्यतः ॥२२॥

सावर्गिको नाम ममुर्मवान् भूवि भविष्यति ॥२३॥

वैश्यवर्गं स्वया यथा बरोऽस्यतोऽमिषाम्भितः ॥२४॥

तं प्रयच्छामि संसिद्धये तव ज्ञानं भविष्यति ॥२५॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ २६ ॥

इति दत्त्वा तयोर्देवी यथामिलवितं वरम् ॥२७॥

बभूवान्तर्हिता सद्यो मक्त्वा ताम्भ्यामभिष्टुता ।

एव देव्या वरं लब्ध्वा सुरथं क्षत्रियर्षभः ॥२८॥

शुद्धिमान् वे) अतः तत् समस्त उद्धाने ती ममता और अहंतात्म्य आतलिका  
नष्ट करनेवाला ज्ञान योग ॥ १८ ॥

देवी बोली—॥ १९ ॥ राजन् । तुम जोड़े हैं । दिनोंमें षण्मुखोंके  
स्वरकर अपना राज्य प्राप्त कर लोगे । अब बहो तुम्हारा राज्य फिर रहेगा  
॥ २० ॥ फिर मृत्युके पश्चात् तुम म्हापान् विषस्याम् (सूर्य) के अंशसे  
जन्म लेकर इस पृथ्वीपर सावर्गिक मनुके नामसे मिश्रवात होओगे ॥ २१-२३ ॥  
वैश्यवर्ग । तुम्हें भी वित्त बरको मुक्तसे प्राप्त करनेकी इच्छा की है उसे  
देती हूँ । तुम्हें मोक्षके लिये ज्ञान प्राप्त होग्य ॥ २४-२५ ॥

मार्कण्डेयजी कहत हैं—॥ २६ ॥ इस प्रसंग उन दोनोंकी  
मनोवाग्भिष्ट करवान देकर तथा उनके द्वारा अधिकपूर्वक भगवती स्तुति सुनकर  
देवी अम्बिका तत्काक अन्तर्धान हो गयी । इस तरह देवीदे करवान पाकर

सूर्यन्जन्म समासाद्य सावर्णिर्मविता मनुः ॥२९॥

एवं दृष्ट्या वर लब्ध्या मुरधः क्षत्रियर्षम ।

सूर्यन्जन्म समासाद्य सावर्णिर्मविता मनुः ॥३०॥

इति श्रीमहाकण्ठेपुराणे सावर्णिके मन्वन्तर देवी

माहात्म्ये सुरव-वैष्णवोर्वरप्रदाने नमः

अथोदसोऽध्यायः ॥ ११ ॥

उवाच ६ अर्धश्लोका ११ श्लोका १२ पञ्च

२९ पञ्चमादिता ७ ॥ सप्तमः

उवाचमन्त्राः ५७ अर्धश्लोका

४० अष्टाश्लोकाः ५१५ अष्टमः

शान्ति ॥ ६६ ॥



विहीमे भद्रं भुवः नृपम अम्भ ॥ तार्जिण नामक मनु हीमे ॥ २७-२९ ॥

इमं प्रकार श्रीमहाकण्ठेपुराणम सावर्णिक मन्वन्तरादे कथाके अन्तर्गत

द्वितीयहजारमे 'सुरव' और 'वैष्णवो वरप्रदान' नामक

सप्तहवीं अध्याय पूरा हुआ ॥ २९ ॥







साधय सर्वसिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा ।

इस प्रकार प्रार्थना करके अब आरम्भ करे । अब पूरा करके ठठे समकठीको समर्पित करते हुए कह—

गुह्यादिगुह्यांगीष्ठी त्वं गुह्याप्यपलङ्कितं कपम् ।

सिद्धिर्भक्त्यु मे देहि त्वत्पत्तावन्महेश्वरि ॥

उत्पत्तात् फिर नीचे लिखे अनुसार म्यास करे—

करम्यासः

ॐ ह्रीं बभ्रुह्याम्नां नमः । ॐ चं तर्जनीम्नां नमः । ॐ हिं मध्यमाय्नां नमः । ॐ कं अनामिकाय्नां नमः । ॐ वै कनिष्ठिकाय्नां नमः । ॐ ह्रीं अग्निकायै कस्तुरकगुह्याम्नां नमः ।

हृत्पदादिम्यासः

ॐ कङ्किनी शक्तिनी बीरु गदिनी चङ्किनी उमा ।

सङ्किनी चापिनी बाबभुङ्गुण्डीपरिष्ठापुर्वा ॥ हृदयाय नमः ।

ॐ पूकेन पाहि नो देहि पाहि कङ्गेन चापिके ।

बपटान्मेन च पाहि आपज्यानिज्ज्वलेन च ॥ सिरमे स्वाहा ।

ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च वणिक्के रक्ष इक्षिमे ।

ज्ञामजेनामसुक्ता जलत्मां तथेश्वरि ॥ पिच्छायै नमः ।

ॐ सौम्यानि पाणि स्यामि दैव्येभ्यै विचरन्ति ते ।

पाणि चात्पर्यबीराणि ते रक्षायास्तथा मुचम् ॥ कवचाय नमः ।

ॐ कङ्कगङ्गादादीनि पाणि चाक्षानि तेऽभिके ।

करपल्लवमङ्गीनि तैरप्यात् रक्ष सर्वतः ॥ नेत्रत्रयाय बीरदा ॥

ॐ सर्वलक्ष्मीं सर्वसे सर्वशक्तिप्रमण्डिते ।

भवैम्बधादि बी देहि दुर्गे देहि नमोऽस्तु ते ॥ अक्षय्य कष्ट ।

प्याजम्

ॐ त्रिपुरासुरसमप्रतां धृगपतिस्त्वन्धस्त्रिपतां नीतयां

कम्पायिः कस्तुरककोटविक्रमदुर्गमिच्छासिधिताम् ।

इस्तैः कस्तुरासिक्कोटविसिद्धायां गुणं तर्जनीं

विभ्राज्यमनकप्यिक्तं शक्तिवतां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

१ रत्नम् नमः पूज ७२ मे है । २ रत्न चार कोटीय नमः पूज २ ५ २ ५ मे है । ३ रत्ना नमः पूज २५४ मे है । ४ रत्नम् नमः पूज २० मे है ।



## श्रग्भेदोक्त देवीसूक्तम्

ॐ बह्मिन्वहर्षन् नृणाम् वागाम्बुधी वधिः, सविन्दुवाग्मयः  
सर्वगतः परब्रह्मा देवता द्वितीयाया ब्रह्मो ब्रह्मती शिवायी त्रिपुत्र ब्रह्म,  
देवीमाहत्म्यपादे विविचोयः ॥३॥

ध्यायाम्

ॐ सिद्ध्या क्षतिश्वरा मरुतप्रग्वैधतुमिर्भुवैः  
शङ्खं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रक्षिभिः क्षामिता ।  
वामुक्ताह्मदहमकङ्कणरणत्काञ्चीरणन्तपुरा  
दृगा दुर्गतिहारिणी भवतु ना रत्नास्तसक्तुम्बला ॥१॥

देवीसूक्तम्

ॐ ब्रह्मं श्रेमिर्नमुमिधराम्यहमादित्यैस्त विवदेवैः ।

य शिन्धी वीरपर विराजमान है जिनके मस्तकपर कमलमयका मुकुट  
है वो मरुतसर्वत्र समान वातिवनाली बज्ज्ये पर मुखमेंसे शङ्ख चक्र  
धनुः शौर बाण बाण्य करनी है नील नेत्रोंमें सुषोमिष्ठ होती हैं जिनके  
निष्ठ निष्ठ अङ्ग बाधे हुए बाह्यरद हास कङ्कण लललनाली हुई करवनी  
और स्तनन बग्गे ॥ न पुरोक्त विभूति है तथा जिनके कर्णोंमें रत्नबद्ध  
कुण्डल निर्मल्यग रत्न व अगकी दुगा हमारी दुर्गति दूर करनेवाली हैं ।

[ महर्षि शम्भुधरी उम्बरा नाम बाष्पा । वह वही महाशक्तिनी  
थी । उम्बरा शरीर माध्व अमित्रता प्राप्त कर ली थी । उसके वे उम्बरा हैं—]  
म शशिन्वहर्षन् नृणाम् वागाम्बुधी वधिः तथा विवदेवैः

इसमें विविचोय ब्रह्म विमर्शिन कहना अर्थ है ।

† जिनके पञ्चान् नीच किन्तु अनुग्रह बरान्त वशानुग्रह पाद कर ।

‡ वामुक्ताह्मदहमकङ्कणरणत्काञ्चीरणन्तपुरा म १ म १ १०

१ नी अहम कर्णाई है

अहं मित्रावरुणोमा विमर्म्येहमिन्द्राग्नी अहमग्निनोमा ॥१॥  
 अहं सोममाहनसं विमर्म्येह स्वष्टारमुत पूषणं मगम् ।  
 अहं दधामि ब्रविणं हविष्मते सुग्राभ्ये यजमानाय सुन्वते ॥२॥  
 अहं राष्ट्री सगमनी वसूनां चिकितुपी प्रथमा यज्ञियानाम् ।  
 तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रा भूर्यावेक्षयन्तीम् ॥३॥  
 मया सो अन्नमसि यो विपश्यति यः प्राणिति य इ मृषेस्त्युक्तम् ।  
 अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति क्षुचि भुत भक्षिवंते वदामि ॥४॥  
 अहमेव स्यमिदं वदामि श्रुष्ट ववेमिरुत मानुषमिः ।

रूपमें विचरती हूँ । मैं ही मित्र और वरुण दोनोंको इन्द्र और अग्निको तथा दोनों अधिनीकुमारोंको धारण करती हूँ ॥ १ ॥ मैं ही शत्रुओंके नाशक आश्रयधारी देवता सोमको तथा प्रजापतिको तथा पूष और मगको भी धारण करती हूँ । जो हविष्मते तमस हो देवताओंको उत्तम हविष्मकी प्राप्ति करता है तथा उन्हें सोमरत्नके द्वारा पृत करता है उस यजमानके जिये मैं ही उत्तम यज्ञका पञ्च और वन प्रदान करती हूँ ॥ २ ॥ मैं तन्मूर्ध जानकी मयीवरी अग्ने तपासकीको वनकी प्राप्ति करनेवाली, वाद्यस्तर करने योग्य परजघको अग्नेसे अभिष रूपा में जाननेवाली तथा पूजनीय देवताओंमें प्रधान हूँ । मैं प्रयत्नरूपसे अनेक भावोंमें स्थित हूँ । तन्मूर्ध मूर्तोंमें मेरा प्रवेश है । अनेक स्थानोंमें रहनेवाले देवता बड़ा करी जो कुछ भी करते हैं वह सब मेरे लिये करते हैं ॥ ३ ॥ जो अन्न पाना दे वह मेरी दक्षिणे ही लब्ध है [ क्योंकि मैं ही भोक्त-शक्ति हूँ ] इली प्रकार आ देवता दे जो सप्त सेता है तथा जो करी दुर्लभता गुन्ता है वह मेरी ही दक्षिणसे उत्कृत सब कर्म करनेमें समर्थ होता है । जो मुक्त रह रूपमें नहीं जानते वे म जाननेके कारण ही हीन दशाका प्राप्त हो जाते हैं । हे बहुभुव । मैं तुम्हें अज्ञाते प्राप्त होनेवाले ब्रह्मपदका उद्देश्य करती हूँ सुनो-॥ ४ ॥ मैं स्वयं ही देवताओं और मनुष्योंद्वारा सेविता इस दुर्लभ तपस्य वनन करती

य कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमुपि तं सुमेधाम् ॥५॥  
 अहं रुद्राय धनुरा वनामि ब्रह्मद्विषे धरवे इन्तवा उ ।  
 अहं वनाय समदं कृणोम्यहं वायापृथिवी आ विषेष्ट ॥६॥  
 अहं सुषे पितरमस्य मूर्धन्मम यानिरप्सन्तः समुद्रे ।  
 तता नि तिष्ठे शुवनानु निषोसाम् वां वर्ष्मणाप स्पृष्टामि ॥७॥  
 अहमेव पात इष प्रबाम्यारममाणा शुवनानि विधा ।  
 परा दिवापर एना पृथिव्यैतावती महिना संबभूव ॥८॥

हैं । मैं जिस जिस पुरुषकी रक्षा करना चाहती हूँ उस-उसको तबकी अपेक्षा  
 अधिक शक्तिशाली बना देती हूँ । उन्हींको सुविकर्ता ब्रह्मा परोक्षरूप में  
 शक्ति तथा उत्तममेवब्रह्मद्विषे पुष्ट बनाती हूँ ॥ ५ ॥ मैं ही ब्रह्मदेवी हितक  
 लमुपैक्य वध करनेके लिये रुद्रके धनुषको चढ़ाती हूँ । मैं ही रुद्रपातकियोंकी  
 रक्षाके लिये शत्रुओंसे युद्ध करती हूँ तथा अन्तर्वासीरूपसे पृथ्वी और वायुके  
 भीतर व्याप्त रहती हूँ ॥ ६ ॥ मैं ही इस जगत्के स्थिररूप आकाशकी  
 सर्वाभिधानस्वरूप परमात्मके रूपमें उत्पन्न करती हूँ । तमुग्र ( तमूर्धं सूर्यके  
 उत्पत्तिमान परमरूप ) मैं तथा ब्रह्म ( बुद्धिकी व्यापक बुद्धिके ) मैं मेरे  
 कारण ( कारणस्वरूप वैद्यक्य रूप ) की स्थिति है । अतएव मैं समस्त  
 सुकर्ममें व्याप्त रहती हूँ तथा उस स्वर्गलोका में अपने शरीरसे स्पर्श करती  
 हूँ ॥ ७ ॥ मैं कारणरूपसे जब समस्त विश्वकी रचना आरम्भ करती हूँ तब  
 वृत्तोंकी प्रेरणाके बिना स्वयं ही वायुकी भौति चढ़ती हूँ स्पर्शसे ही  
 कर्ममें प्रवृत्त होती हूँ । मैं पृथ्वी और आकाश दोनोंसे परे हूँ । अपनी  
 महिमासे ही मैं ऐसी दुः ॥ ८ ॥

अथ तन्त्रोक्तं देवीसूक्तम्•

नमो देव्यै महादेव्यै शिषायै सततं नमः ।  
 नमः प्रकृत्यै मद्रायै नियता प्रणताः सा ताम् ॥ १ ॥  
 रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धाम्यै नमो नमः ।  
 ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुत्वायै सततं नमः ॥ २ ॥  
 कल्याण्यै प्रणतां शुभ्यै सिद्धयै कुर्मो नमो नमः ।  
 नैर्ऋत्यै भूसृतां लक्ष्म्यै क्षत्र्यै ते नमो नमः ॥ ३ ॥  
 दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।  
 स्वास्त्यै तवैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ ४ ॥  
 अतिसौम्यातिरौद्रायै नृतास्तस्यै नमो नमः ।  
 नमो अगस्त्यतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमा नमः ॥ ५ ॥  
 या देवी सर्वभूतेषु बिष्णुमायेति श्रद्धिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६ ॥  
 या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमा नमः ॥ ७ ॥  
 या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमा नमः ॥ ८ ॥  
 या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमा नमः ॥ ९ ॥

या देवी सर्वभूतेषु शुभारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१०॥  
 या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥११॥  
 या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१२॥  
 या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१३॥  
 या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१४॥  
 या देवी सर्वभूतेषु बाधिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१५॥  
 या देवी सर्वभूतेषु उग्रारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१६॥  
 या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१७॥  
 या देवी सर्वभूतेषु भद्रारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१८॥  
 या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१९॥  
 या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२०॥  
 या देवी सर्वभूतेषु इष्टिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२१॥

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२२॥

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२३॥

या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२४॥

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२५॥

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२६॥

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।

भूतेषु सततं तस्यै ध्यातिदेव्यै नमो नमः ॥२७॥

चित्तिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत् ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२८॥

स्तुता सुरैः पूर्वममीष्टसंभया-

चया सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।

करातु सा न शुभहेतुरीश्वरी

शुमानि भद्राण्यमिहन्तु चापदः ॥२९॥

या सम्प्रतं चाद्वतदस्पतापितं

रसाभिरीक्षा च सुरैर्नमस्यते ।

या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति न

संशयदा मक्तिविनम्रमूर्तिमि ॥३०॥•

## अथ प्राधानिकं रहस्यम्

ॐ नमः श्रीगुणसप्तशतीरहस्यस्य नारायणाय नमः । महाकाव्ये  
महाकाव्यी महासप्तशती देवता चतुष्टयस्य चतुर्थे अथ विविचीयः ।

रात्रोवाच

भगवन्महेश्वर मे चण्डिकायास्तत्त्वयोदिताः ।

एतेषां प्रकृतिं प्रकृतं प्रधानं चक्षुर्मूर्धसि ॥ १ ॥

आराध्य यन्मया दम्पाः स्वरूपं येन च द्विज ।

विधिना श्रुतिं सुकृतं यथावत्प्रपठस्य मे ॥ २ ॥

श्रुतिस्तथा

इदं रहस्यं परममनास्म्येषं प्रपद्यते ।

महाकाव्यीति न म किञ्चित्प्राधान्यं नराधिप ॥ ३ ॥

सर्वस्याद्या महालक्ष्मीश्चिगुणा परमेधरी ।

लक्ष्म्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥ ४ ॥

ॐ नमः श्रीगुणसप्तशतीरहस्यस्य नारायणाय नमः । महाकाव्ये  
महाकाव्यी महालक्ष्मी एवं महालक्ष्मी देवता है । चतुष्टय चतुर्थी प्रकृति  
विधि करके इनका विविचीय होता है ।

रात्रोवाच—भगवन् ! आम्ने चण्डिकाके भक्त्यारोपी क्या सुते  
कही । प्रकृतं । अथ इन भक्त्यारोपी प्रधान प्रकृति का भिन्नपण चण्डिका ॥ १ ॥  
द्विजनेत्र । मैं आम्ने चतुर्थीमें पढ़ा हूँ । सुते देखीके किन्तु लक्ष्मी की और किन्तु  
विधि विधि भक्त्यारोपी करनी है वह तब क्या प्रकृत है कथनकरे ॥ २ ॥

श्रुतिं कथन ह—रात्रोवाच ! यह रहस्य परम श्रीगुण है । इसे किन्तु  
कहने योग्य नहीं कथनप्राप्त मया है । किन्तु तुम मेरे माछ हो इतकिने तुमसे व  
करने योग्य मेरे तब कुछ भी नहीं है ॥ ॥ चिगुणमयी परमेधरी महालक्ष्मी  
ही लक्ष्मी आदि व्याप्य है । ये ही लक्ष्मी और महालक्ष्मी लक्ष्मी विधि व्याप्य

मातुलिङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च विभ्रती ।  
 नागं लिङ्गं च यानि च विभ्रती नृप मूर्धनि ॥ ५ ॥  
 तप्तकाञ्चनवर्णामा तप्तकाञ्चनभूषणा ।  
 शून्यं तद्विलसत् स्वेन पूरयामास तजसा ॥ ६ ॥  
 शून्यं तद्विलसत् लोकं विलास्य परमं धरी ।  
 प्रसारं परमं रूपं तमसा केवलेन हि ॥ ७ ॥  
 सा मिमाञ्जनसकाशा दम्प्राङ्कितवरानना ।  
 विशाललोचना नारी यमूष तनुमप्यमा ॥ ८ ॥  
 स्वद्गपात्रशिरःखेटैरलंकृतचतुर्भुजा ।  
 कपन्धहारं शिरसा विभ्राणा हि शिरःस्रजम् ॥ ९ ॥  
 सा प्राचाच महालक्ष्मीं तामसीं प्रमदोत्तमा ।  
 नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्य नमो नमः ॥ १० ॥

करके भित है ॥ ५ ॥ एवम् । १ अगनी पार मुखाभ्योमी मालुलिङ्ग ( शिखीरेका  
 कम् ) गदा खेट ( हाथ ) एक पानपात्र और मलकार नाग लिङ्ग तथा  
 योनि - इन वस्तुओंको धारण करती है ॥ ५ ॥ तपसे हुए सूर्यके समान  
 उनकी कान्ति है तपसे हुए सूर्यके ही उनके भूत हैं । उन्होंने अपने वस्त्रों  
 इस रूप में आभूषणों परिलक्षित किया है ॥ ६ ॥ परमेवरी महाकायिनी हम सम्पूर्ण  
 आभूषणों रूप में आभूषणों तथापि है इस एक अर्थ उत्पन्न रूप  
 प्राप्त किया है ॥ ७ ॥ वह रूप एक माटीके रूप में प्रकट हुआ जिसके शरीरकी  
 कान्ति निगरे हुए काञ्चनकी माटी काफ़ी रंगही थी । उनका भेद भूत रूपोंसे  
 सुशोभित था । नैव बहै बहै और कमर पनगी थी ॥ ८ ॥ उनकी पार मुखों  
 हाथ तथापि प्याने और कड़े हुए मलकार मुशोभित थी । वह वज्ररूपतार  
 कपन्ध ( पद ) की तथा मलकार मुशोभित मातृ प्राप्त किया हुए थी ॥ ९ ॥  
 इस प्रकार प्रकट हुई जिसने मे भेद लक्ष्मी देवीने महाकायिनी कहा—महाकायिनी !  
 आरको नमस्कार है । तुमसे मेरा नम और कर्म करार है ॥ १० ॥



तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ।  
 ददामि त्वं नामानि यानि कर्माणि तानि ते ॥११॥  
 महामाया महाकाली महामारी भुषा वृषा ।  
 निद्रा तृष्णा वैकुण्ठीरा कातरात्रिर्दुरत्यया ॥१२॥  
 श्रमानि त्वं नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः ।  
 दधि कर्माणि ते द्वात्वा वाञ्छीते सोऽप्नुते सुखम् ॥१३॥  
 तामिदं कृत्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं वृष ।  
 सत्पादयनातिमुद्रेण गुणेनेन्दुप्रमं दधौ ॥१४॥  
 ब्रह्ममालाङ्कुशधरा वीर्यापुस्तकधारिणी ।  
 या बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ॥१५॥  
 महाविद्या महापाप्मी मारुती वाक् सरस्वती ।  
 आया ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगमा च भीष्मरी ॥१६॥

तब महालक्ष्मीने शिष्येमे बेटे तब तामसी हैसीले करा—मैं तुम्हें नाम प्रदान  
 करती हूँ जो तुम्हारे अनेक कर्म हैं उनको भी बतलाती हूँ ॥११॥ महालक्ष्मी  
 महामाया, महामारी, भुषा वृषा निद्रा तृष्णा वैकुण्ठीरा कातरात्रि तथा  
 दुरत्यया—॥ १२॥ ये तुम्हारे नाम हैं जो कर्मोंके द्वारा जोकेसे परिहार  
 होगा । इन नामोंके द्वारा तुम्हारे कर्मोंको जानकर जो उनका पाठ करना है  
 वह तुम्हें भागता है ॥ १३॥ वाक् । महालक्ष्मीने भी बरकर महालक्ष्मीने अक्षय  
 पुत्र तन्मयुक्त ब्रह्म तन्मा रूप धारण किया जो कर्मोंके समान सौख्य  
 वा ॥ १४॥ या बभूव नारी अपने हाथोंमे अक्षयपुत्र बभूव भीष्म तथा  
 पुलक धर्मक सिद्ध हुए थी । महालक्ष्मीने उसे भी नाम प्रदान किये ॥१५॥  
 महाविद्या महापाप्मी मारुती वाक् सरस्वती, ब्राह्मी ब्राह्मी कामधेनु  
 वेदगमा और भीष्मरी ( बुद्धिजी स्वामिनी )—ये तुम्हारे नाम होंगे ॥१६॥

अयोबाच महालक्ष्मीर्महाकाली सरस्वतीम् ।  
 युवां वनयतां देव्यौ मिथुने स्नानुरूपतः ॥१७॥  
 इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ।  
 हिरण्यगर्भो रुचिरौ क्षीपुसौ कमलासनौ ॥१८॥  
 ब्रह्मन् विधे विरिञ्चेति धातरित्याह तं नरम् ।  
 श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम् ॥१९॥  
 महाकाली भारती च मिथुने सुवतः सह ।  
 एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥२०॥  
 नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम् ।  
 वनयामास पुरुषं महाकालीं सितां स्त्रियम् ॥२१॥  
 स ह्यः शंकरः स्वाधुः कपर्दी च त्रिलोचनः ।  
 त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री मायाधरा स्वरा ॥२२॥

तदनन्तर महालक्ष्मीने महाकाली और महासरस्वतीसे कहा—देविन्द्रे !  
 तुम दोनों अपने-अपने गुणोंके योग्य क्षी-पुरुषके बोहे ठहरान करो ॥१७॥  
 उन दोनोंसे भी कहकर महालक्ष्मीने पहले स्वयं ही क्षी-पुरुषका एक बोधा  
 उत्पन्न किया । वे दोनों हिरण्यगर्भ ( निर्मल स्वनेसम्पन्न ) सुन्दर तथा कमल-  
 के अलनपर विराजमान थे । उनमेंसे एक क्षी भी और दूसरा पुद्गल ॥१८॥  
 तत्पश्चात् माता महालक्ष्मीने पुद्गलको ब्रह्मन् ! विधे । विरिञ्च । तथा धातः ।  
 इत प्रकार सम्बोधित किया और क्षीको भी । पद्मा । कमला । लक्ष्मी । इत्यादि  
 नामोंसे पुद्गल ॥ १९ ॥ इसके बाद महाकाली और महासरस्वतीने भी एक-  
 एक बोधा उत्पन्न किया । इनके भी रूप और नाम मैं तुम्हें बतलाता हूँ ॥२०॥  
 महाकालीने कण्ठमें नील चिह्नसे युक्त लम्ब मुखा बोत धारी और महाकाली  
 चन्द्रमाय सुकुट वारण करनेवाले पुरुषको तथा गौर रंगकी क्षीको कथ्य  
 दिया ॥ २१ ॥ वह पुरुष ब्रह्म शंकरः स्वाधुः कपर्दी और त्रिलोचनके नामसे  
 प्रसिद्ध हुआ तथा क्षीके त्रयी विद्या कामधेनु माया अश्वार और स्वरा—वे

सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं तृप ।  
 अनयामास नामानि तयारपि वदामि ते ॥२३॥  
 विष्णु कृष्णा हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ।  
 उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुमगा शिवा ॥२४॥  
 एव युवतयः सद्यः पुरुषत्व प्रपेदिरे ।  
 अमुष्मन्ता नु पश्यन्ति नेतरऽतद्विदो जनाः ॥२५॥  
 ब्रह्मणे ब्रह्मदौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृप त्रयीम् ।  
 रुद्राय गौरी वरदा वासुदेवाय च त्रियम् ॥२६॥  
 स्वया सह संयुय विरिञ्चाऽम्बमभीजनत् ।  
 विभेद मगान् रुद्रस्तद् गौर्या सह वीर्यवान् ॥२७॥  
 अम्बमप्यं प्रधानादि कार्ष्णमात्ममूनुप ।  
 महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्वाधरमङ्गलम् ॥२८॥

नाम ४८ ॥ २३ ॥ राजन् । मङ्गलरत्नानि श्रीरे रघवी श्री और स्वयं रंमके  
 पुरुषको प्रकट किया । उन राजाके नाम भी मैं तुम्हें बतलाता हूँ ॥ २३ ॥  
 उनमें पुरुषक नाम विष्णु कृष्ण हृषीकेश वासुदेव और जनार्दन हुए तथा  
 श्री उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुमगा और शिवा—इन नामोंके  
 प्रसिद्ध ४८ ॥ २४ ॥ इन प्रकार तीनों युवतियों ही उत्कृष्ट पुरुषव्यक्तियों प्राप्त  
 हुई । इन राजाको मननेवाको योग ही लभ्य लक्ष्मी है । दूसरे धनजीवन  
 इस रत्नको महा ज्ञान लक्ष्मी ॥ २५ ॥ राजन् । महालक्ष्मीने त्रयीविधास्वयं  
 लक्ष्मीको प्रदानके लिये पत्नीरूपमें लभ्यित किया वरदा वरदाक्षिनी गौरी  
 तथा मगान वासुदेवकी लक्ष्मी है ॥ २६ ॥ इस प्रकार सरस्वतीके लक्ष्मी  
 मयुक्त होकर ब्रह्माक्षिने ब्रह्माक्षीको उत्पन्न किया और परम लक्ष्मी मगान  
 ब्रह्मने श्रीरक्ष माय मिश्रकर उत्पन्न मेहन किया ॥ २७ ॥ राजन् । यह  
 ब्रह्माक्षीमें प्रधान ( महात्मा ) यदि कार्ष्णमा—यज्ञमहाभूतात्मक लक्ष्मी

पुपोप पालयामास तल्लश्म्या सह फेनुषः ।

संजहार जगत्सर्व सह गौर्या मद्देश्वर ॥ २९ ॥

महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीधरी ।

निराकारा ष साकारा सर्व नानामिधानमृत् ॥ ३० ॥

नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् । ॐ । ३१ ।

साक्षर-बहुमकम अक्षरही उत्पत्ति दुर ॥ १८ ॥ फिर अक्षरही के साथ महाबन्  
विष्णुने उस अक्षर का पावन-वीर्य दिया । और प्रलयकालमें ग्रीही के साथ  
महेश्वरने उस तत्पूर्व अक्षर का लंहार किया ॥ १९ ॥ महायज्ञ ! महाअक्षर  
ही सर्वसत्त्वमयी तथा सब सत्त्वोंकी अचीम्वरी हैं । ये ही निरकार और  
साक्षररूपमें रहकर नाना प्रकारके नाम धारण करती हैं ॥ १ ॥ सगुणबाधक  
सत्य अन फिन् महामाया आदि नामान्तरोंसे इन महाअक्षरहीका निकृपण  
करना चाहिये । केवल एक नाम ( महाअक्षरहीमात्र ) से अथवा अन्य प्रत्युत  
आदि प्रत्ययसे उनका वर्धन नहीं हो सकता ॥ ११ ॥

इति प्राधानि॥०॥ एतत्सं सम्पूर्णम् ।

[illegible]

## अथ वैकृतिकं रहस्यम्

न्यायिहारा

ॐ त्रिगुणाशामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधादिता ।

सा क्षमा चण्डिका दुर्गा भद्रा मगधतीर्यते ॥ १ ॥

आदि कहते हैं—वाक् । जहाँ किन तरावराना त्रिगुणमयी महा-  
कल्पीके तमनी आदि मेरते तीन स्वरूप कठोरवे गये वे ही उर्वा चण्डिका,  
दुर्गा भद्रा और मगधती आदि अनेक नामोंसे कही जाती हैं ॥ १ ॥

अंति है । वे करने कर हाथोंसे चतुर्भिः ( चार ) एक केर ( एक ) और  
बाजकर चाल करती हैं तथा अत्यन्त बल किं और योग्य चरम देने रहती  
हैं । उरवेकी नहिनके अनुभार चतुर्भिः कर्मगुणिना एक विग्रहविग्रह केर  
बाजविग्रह और चमकत तुलित इति ( करने लभितकामन करनमें मिलि )  
यह वक्त है । रही मगध नामसे बाजकर नोचिने मगधिन और निरते पुनरा  
प्राप्त होता है । गानन यह कि मरुति, पुन और वक्त—तीनों नहिन  
पारनेकी मगधनी ही है । वक्त चतुर्भुज महाकम्पने किं हाथों कीरते चतुर्भुज  
है, हमने यह मानने है । गुना महाकम्पने कथा पद्य है बाजिनी कीरते कीरते  
हाथों चमकत और उरवे हाथों कथा है । वनी कीरते अरके हाथों केर  
तथा बाजके हाथों वक्त है । वस्तु विग्रहिन रहनमें चण्डिकाचमकत  
कथन वा वक्त विग्रहाय गया है । वक्त चतुर्भुज बाजिनी कीरते निरते हमने  
चतुर्भिः अरके हाथों गता वनी नोचके अरके हाथों केर तथा कीरके  
हाथों पानपाय है । चतुर्भुज महाकम्पने मगध तमोभुज और ललपुनक चतुर्भि-  
के हाता मानने हो वक्त और मगध निरते विग्रहा अरके महाकम्पने और महाकम्पने  
के नामसे प्रमिति । वे दोनों अरके मगध और वक्त चतुर्भिः वक्त  
महाकम्पने और महाकम्पने किं है । वक्त वे दोनों ही चतुर्भुज व और  
वक्त चतुर्भिः वक्त महाकम्पने वक्त तथा महाकम्पने वक्त चतुर्भिः है । चतुर्भुज  
महाकम्पने हाथों वक्त चमकत, अरके और वक्त है । वक्त वक्त ही वस्तु ही

योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमागुणा ।  
 मधुकैटमनासार्थं यां तृष्टावाम्पुद्गामन ॥ २ ॥  
 दशवक्ष्या दशसुखा दशपादाञ्जनप्रभा ।  
 विशालया राजमाना त्रिशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥  
 स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा मीमरूपापि भूमिप ।  
 रूपसंभाष्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः ॥ ४ ॥

तमोगुणमयी महाकाली मगान विष्णुजी योगनिद्रा करी गयी हैं। मधु और कैटमका नाश करनेके लिये ब्रह्माजीने जिनकी स्मृति की थी उ र्तिना नाम महाकाली है ॥ २ ॥ उनके दश मुख दश मुखार्थ और दश पर हैं। दश कालके लक्षण का यह रंगही है तथा तीस नेत्रों की विषय पर्याप्त सुगन्धित होती हैं ॥ ३ ॥ भूगल । उनके दान और दाँतें पमकती रहती हैं। यन्त्र उनका रूप भवकर है तथाविधे रूप, मोक्षाय कर्मिण्य एवं मरती गगदारी है। यन्त्रुय सरस्वतीके शरीरमें अत्रमन्त्र, अष्टम वंश और पुण्ड्र स्थान पर है। दशम भी परमे ही स्थान पर है। फिर दश तीनों देविकाने ॥ पुण्ड्रय एक एक सेवा करके दिये। ब्रह्माजीने अष्टम और सरस्वती मगानजीने दश और सरस्वती तथा महासरस्वतीने विष्णु जीर गौरीय आहुतों व हुवा। इनमें काली विष्णुकी पौरी अष्टमके तथा सरस्वती ब्रह्माजीके पास है। ब्रह्माजीने मन्त्रों के लिये विष्णुने ब्रह्म और सरस्वतीने ब्रह्मका कार्य भक्षण। दश अष्टमके दश दश प्रभार है—

यन्त्रुय ब्रह्माजी ( १० मन्त्र )



सहस्राक्षगदाशूलचक्रशङ्खशुभ्रिभृत् ।  
 परिपं कर्णकं क्षीरं निश्च्युतहृषिरं दधौ ॥ ५ ॥  
 एषा सा दैव्यवी माया महाकाशी दूरत्यया ।  
 आरापिता वक्षीहृषोत् पूजाकर्तुमराधरम् ॥ ६ ॥  
 सर्वदपश्यरीरेभ्या वाऽऽविर्भूतामिहप्रभा ।  
 त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साद्यान्मदिपमर्दिनी ॥ ७ ॥  
 श्वेतानना नीलसूत्रा सुध्वेतस्तनमण्डला ।  
 रक्तमभ्या रक्तपादा नीलब्रह्माकरन्मदा ॥ ८ ॥  
 सुचित्रवधना चित्रमान्याम्बरविमूपमा ।  
 चित्रानुलपना कातिरुपर्षाभाम्पद्यासिनी ॥ ९ ॥

अविष्टन ( समिष्टान ) हैं ॥ ४ ॥ वे अपने शरीरों में बहुत सारा  
 द्रव्य जमा करके मुकुण्डि परितः बहुत सारा मिष्ठे एक चूल्ह चूल्हा है  
 ऐसा बना हुआ मलक पारण करती हैं ॥ ५ ॥ वे महाकाशी मयना  
 निष्कृती हुन्त मया हैं । आराधना करनेपर वे परमेश्वर के रूपमें अपने  
 उपासकों के लक्ष्मी बन जाती हैं ॥ ६ ॥

तत्पुत्रं वक्षामोके अहोति किंरा प्राशुर्मात्र हुमा वा वे अन्त  
 कान्तिमे पुनः प्रभवत् महाकाशी हैं । उन्हें ही त्रिगुणमयी प्रकृति करते हैं  
 तथा वे ही सर्वांगमयका मर्दन करोगायी हैं ॥ ७ ॥ उनका मुख मोर  
 मुखों के समान लज्जामय अत्यन्त श्रेष्ठ कटिमात्र नीर अरुण काष्ठ तथा  
 अङ्गा और निष्कृती नात्र रगयी हैं । अत्रेय होनेके कारण उनको मरने शीर्षका  
 समिष्टान ॥ ८ ॥ उचित नामोंका माग बहुरीये बलसे व्याप्यारित होनेके  
 कारण अन्त हुन्त एव त्रिभिन्न विभायी देता है । इनकी मया का  
 आनन्द तथा अन्तर्मात्र मयी विविध हैं । वे अन्ति कम नीर लोभायके

अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ।  
 आयुधान्यत्र दक्ष्यन्ते दक्षिणाधः करक्रमात् ॥१०॥  
 अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ।  
 चक्रं त्रिशूल परशुः शङ्खा घण्टा च पादकः ॥११॥  
 शक्तिर्दण्डधर्म चार्प पानपात्रं कमण्डलुः ।  
 अलंकृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥१२॥  
 सर्वद्वयमयीमीक्षा महालक्ष्मीमिमां नृप ।  
 पूजयत्सर्वलोकानां स देवानां प्रसुर्मवेत् ॥१३॥  
 गौरीदहात्समुद्भूता या सर्वव्याघुणाभया ।  
 साक्षात्सरस्वती प्राक्ता शुम्भासुरनिवर्हिणी ॥१४॥  
 दधी चाष्टभुजा बाणमुसले शूलचक्रभृन् ।  
 सद्यं घण्टां लाङ्गलं च कार्मुकं समुधाधिप ॥१५॥

सुशोभित है ॥ १ ॥ यद्यपि उनकी मुखर्षे अत्यन्त है तथापि उन्हें अठारह  
 भुजाओंसे युक्त मानकर उनकी पूजा करनी चाहिये । अरु उनके हाथोंमें  
 ओरके निचन हाथोंसे लेकर बायी ओरके निचन हाथोंमें कमण्डलु मोमल  
 है उनका वर्णन किया गया है ॥ १ ॥ अक्षमाला कमल, बाण, शङ्ख,  
 गदा, घण्टा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शङ्खा, धर्म, पात्र, शक्ति, दण्ड, धर्म  
 ( दण्ड ) चक्र, पानपात्र और कमण्डलु—इन आयुधोंसे उनकी मुखर्षे  
 विभूषित है । ये कमण्डलु आचमनार्थ विद्यमान हैं । अश्विनीमयी है तथा  
 सद्यो ईश्वरी है । शङ्ख । जो इन महालक्ष्मी देवीका पूजन करता है वह  
 सब स्थानों तथा देवताओंका भी स्वामी होता है ॥ ११- १ ॥

जो एकमात्र सर्वगुणके अतिशय हो सर्वलोकोंके चरिते प्रष्टुं  
 थी तथा शिवने शुभ नामक देवता गहात किया था ये लक्ष्मी नरन्त्री  
 कहो गयी है ॥ १४ ॥ इत्यादि । उनके आठ मुखर्षे हैं तथा वे अपने  
 हाथोंमें कमण्डलु, चक्र, मुक्त, शङ्ख, चक्र, शङ्ख, घण्टा इत एव चक्र, पान



एषा सम्प्रमिता भक्त्या सर्वज्ञस्य प्रयच्छति ।  
 निद्रुम्ममधिनी तेषी शुम्भासुरनिर्दिनी ॥१६॥  
 इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तत्र पार्थिव ।  
 उपासुनं जगन्मातुः पूजगातां निदामय ॥१७॥  
 महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सारम्भली ।  
 दक्षिणाक्षरयाः पूज्ये पृष्ठता मिथुनत्रयम् ॥१८॥  
 विरञ्चि स्वर्गा मध्ये रुद्रा गौर्या च दक्षिण ।  
 वाम लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरता देवतात्रयम् ॥१९॥  
 अष्टाष्टसूत्रा मध्य वामे चास्या दक्षानना ।  
 दक्षिणऽष्टसूत्रा लक्ष्मीर्देवीति समर्थयेत् ॥२०॥

श्रुती ६ ॥ ॥ २ नरमलो देवी श्री निद्रुम्भका मर्दन तथा शुम्भासुरका  
 मर्दन करनेवाली अतिप्रबल पूर्वाष्ट होनेपर सर्वज्ञा प्रदान करती है ॥१६॥

शक्ति इस प्रकार तुम्हें महाकाली मूर्ति दीनी प्रतिबिम्ब स्वरूप  
 उत्पन्ने भद्र चक्रमात्रा महाकालीनी तथा इन महाकाली अर्थात् तीनों  
 निर्दिष्टा प्रत्येक एक उपासना अर्थ रखे ॥१७॥ अब महाकालीकी पूजा  
 ज्ञाता तथा उक्त मन्त्रों के द्वारा उनके उत्पन्न होने और वामभागमें  
 महा लक्ष्मीका और महाकालीकी पूजन करना चाहिये और पूजाभागमें  
 अन्य दुर्गा तथा शक्ति प्रत्येक करनी चाहिये ॥ १८ ॥ महाकालीके ठीक  
 पश्चात् ॥ २० ॥ महाकालीका साथ उपासना पूजन कर । उनके दक्षिणभागमें  
 ॥ १६ ॥ श्री लक्ष्मी तथा वामभागमें लक्ष्मीर्देवी विद्रुका पूजन  
 करना । ॥ १७ ॥ दक्षिण वामने निद्रुम्भिका तीन देवियोंकी भी  
 पूजा करना ॥ ॥ २० ॥ महाकालीकी आगे मध्यभागमें अष्टाष्ट  
 सूत्रा तथा वाम भागमें पूजन कर । उनके वामभागमें दक्ष मुनीयकी  
 पूजा करना ॥ ॥ २० ॥ वामभागमें आठ सूत्रावाली महाकालीकी पूजन

अष्टादशमुखा धैषा यदा पूज्या नराधिप ।  
 दशानना चाष्टमुखा दक्षिणोत्तरयास्तदा ॥२१॥  
 कलमृत्यु च सम्पूज्यो सवारिष्टप्रणान्तये ।  
 यदा चाष्टमुखा पूज्या शुम्भासुरनिषर्हिणी ॥२२॥  
 नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्रविनायका ।  
 नमो दम्पा इति स्तात्रर्महात्म्यमीं समर्चयेत् ॥२३॥  
 अवतारत्रयाधारां स्तात्रमन्त्रास्तदाभयाः ।  
 अष्टादशमुखा धैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥२४॥  
 महात्म्यमीर्महाकाली संव प्राक्ता सरय्यती ।  
 ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥२५॥

करे ॥ २ ॥ धाम् ! जब केवल अठारह मुखधोषाणी महाकालीका भवता दशमुखी कालीका वा अष्टमुख सरस्वतीका पूजन करना हो तब जब मर्दिनी शक्ति के त्रिने इनके दक्षिणमायमी बासवी और वामभागमी मृत्युकी भी भस्मीमूर्ति पूजा करनी चाहिये । जब शुम्भासुरका महात् करनेवाली अष्टमुख देवीकी पूजा करनी हो तब उनके साथ उनकी नौ शक्तियों का भी शक्तिमागमी रुद्र एवं वामभस्वने दक्षिणकी भी पूजन करना चाहिये ( सादी मदेवरी, कौमारी, दम्पा कीरादी नागिनी, रानी शिरदुली तथा अमुन्ना—ये नौ शक्तिया हैं ) ।

नमो देवी—इलजीवने महाकालीकी पूजा करनी चाहिये ॥ २१-२३ ॥ तथा उनके तीन अवतारोंकी पूजाके समय उनके चरित्रोंमें जो जोश और मन्त्र आये हैं उहीका उरणय करना चाहिये । अठारह मुखधोषाणी महिषमर्दिनी महाकाली ही विशेषकरने पूजनीय हैं । इन्हीं के ही महाकाली महाकाली तथा महासरस्वती कहलती हैं । वे ही पुण्य-पापीकी सबकी तथा कर्तुं लोकोकी महाशक्ति हैं ॥ २४-२५ ॥

महिषान्तकरी येन प्रविता स जगत्प्रभुः ।  
 पूजयेज्जगतां भार्गी चण्डिका मङ्गलसंज्ञाम् ॥२६॥  
 अम्बादिभिरलंकारैर्गन्धपुष्पैस्तथाकृतैः ।  
 पुष्पैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः ॥२७॥  
 रुषिगच्छेन वलिना मांसेन सुरया च ।  
 ( वलिमांसादिपूजैर्ब विप्रबन्ध्या मयेरिता ॥  
 तेषां क्लृप्त सुरामांसैर्नोक्ता पूजा च कश्चित् । )  
 प्रणामाचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥२८॥  
 सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्मक्तिमात्रसमन्वितैः ।  
 वामभागऽग्रता द्वेष्पाभिरक्षणीर्ष मालुरम् ॥२९॥

चित्रने महिषान्तकरी अन्त करनेवाली महाकम्पीली भक्तिपूजक आराधना  
 की है वही ललायक स्त्री है । अतः अम्बुको वरदा करनेवाली  
 मङ्गलसंज्ञा मारती चण्डिकाजी अक्षरपूज करनी चाहिये ॥ २६ ॥

अर्घ्य आदिने आभूषणोंसे गन्ध पुष्प अक्षर चूर् आदि तथा नम्य  
 प्रकारके भक्ष्य पदार्थोंसे कुछ नैवेद्योंसे रत्नसिद्धिप वस्त्रोंसे मातसे तथा अस्त्रिणसे  
 भी श्रेणीका पूजन होता है । ( ताम्बूल । वक्ति और मात आदिसे भी अनेकप्रकार  
 पूजा आक्षरोंका ओहकर बनायी गयी है । उनमें से किये मात और अस्त्रिणसे  
 कही भी पूजाका विधान नहीं है । ) प्रणाम आचमनसे शोभ्य अक्ष, सुगन्धित  
 चन्दन चूर् तथा ताम्बूल आदि लालचिह्नोंकी मक्तिमात्रसे निवेदन करने  
 देवीकी पूजा उन्नी चाहिये । देवीके नामने साथै मातमें चन्दे महाकम्पीले

वा त न नम और महिषाक्ष अन्त करने दे, कही कोशिके सिने  
 नित श्रीगणेश पूजना विधान है कही कोशिकी अन्त-अस्त्रिण अक्षिके अन्त  
 पूजा नही करना चाहिये ।

पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीश्वरा ।  
 दक्षिणे पुरतः सिंहे समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥३०॥  
 वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् ।  
 कुर्याच्च स्तवनं धीमास्तस्या एकाग्रमानसः ॥३१॥  
 ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमै ।  
 एकेन वा मन्त्रमेव नैकेनेतरयोरिह ॥३२॥  
 चरिताद्यं तु न जपेज्जपच्छिद्रमवाप्नुयात् ।  
 प्रदक्षिणानमस्कारान् कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥३३॥  
 क्षमापयेज्जगद्वात्रीं शुद्धुर्गुहुरवन्धितः ।  
 प्रतिश्लोकं च शुद्धया स्थायसं तिष्ठसर्पिषा ॥३४॥  
 शुद्धयात्त्वोन्नमन्त्रैर्वा चण्डिकायै ह्युमं हविः ।

महादेव श्रीगणेश्वर पूजन करना चाहिये जिसने भगवत्की श्राव समुच्च प्राप्त कर लिया । इसी प्रकार देवीके सामने दक्षिणमागमें उनके वाहन सिंहका पूजन करना चाहिये जो सम्पूर्ण धर्मका प्रतीक एवं पशुचिह्न ऐश्वर्यसिंहासना है । उसीने इस चराचर जगत्को धारण कर रक्खा है ।

तदनन्तर बुद्धिमान् पुण्य एकाग्रचित्त हो देवीकी स्तुति करे । फिर हाथ जोड़कर तीनों पूर्वोक्त चरित्रोंका भगवत्की श्राव करे । यदि कोई एक ही चरित्रसे स्तुति करना चाहे तो केवल मध्यम चरित्रके पाठसे कर ले । किन्तु प्रथम और उत्तर चरित्रोंमेंसे एकका पाठ न करे । आधे चरित्रका भी पाठ करना भ्रम है । जो आधे चरित्रका पाठ करता है उसका पाठ एकक नहीं होता । पाठ-समाप्तिके बाद शेषक प्रदक्षिणा और नमस्कार कर तथा आश्विन जोड़कर जगद्माताके उद्देश्यसे महाकर हाथ जोड़े और उनसे बारबार मुटियाँ या भस्मपत्रोंके लिये सम्म-प्रार्थना करे । उत्तरचरित्र प्रत्येक स्त्रीके मन्त्ररूप है, उससे शिव और पूत मिश्री हैं और श्री आहुति है ॥ २७—३४ ॥ अथवा उत्तरचरित्रमें जो शीघ्र जाने हैं उन्हींके मन्त्रोंसे चण्डिकाके लिये पवित्र

मृषो नामपदैर्देवी पूजयत्सुसमाहितः ॥३५॥  
 प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्ण प्रणम्यारोप्य चात्मनि ।  
 सुचिरं भाग्येदीक्षां चण्डिकां तन्मयो भवेत् ॥३६॥  
 एवं सः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ।  
 सुप्त्वा योगान् यथाकर्म देवीसाधुन्यमाप्नुयात् ॥३७॥  
 या न पूजयत नित्यं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ।  
 भस्मीकृत्यास्य पुष्पानि निर्द्वेष्टपरमेश्वरी ॥३८॥  
 तस्मात्पूज्य मृषात् सर्वसाधुमहेश्वरीम् ।  
 यथास्तन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ॥३९॥  
 इति वैदिकं सूत्रं तन्मूर्त्युः

इतिपुष्पा इत्येव कर । होमके पञ्चाङ्ग एवमपि हो महात्म्यदेवीके सम्-  
 मन्त्रोक्तो उक्तप्रकारेण होय पुनः उक्तो पूज करे ॥ ३५ ॥ तत्राभ्यास मन-  
 धोर उन्मिषोका यद्यपि लभते होय हाव सोह मित्रि माकते देवीको प्रभाव  
 को जौर अन्ताकरवर्ग लक्षण करके उन सर्ववर्ग चण्डिका देवीका देवक  
 चिन्तन करे । चिन्तन करते-करते उन्मिषि लभ्य हो जाय ॥ ३६ ॥ इत  
 प्रत्यह सो मनुष्य प्रतिदिन चण्डिपूर्वक परमेश्वरीका पूजन करवा दे कर  
 मन्त्राचिन्तित योगीशो लोककर अन्तर्ग देवीका नातुम् प्राप्त करवा दे ॥ ३७ ॥  
 सो मन्त्रमन्त्रा चण्डिका प्रतिदिन पूजन मही करवा समस्त परमेश्वरी उक्त  
 पुण्योशो कष्टकर भय कर देती है ॥ ३८ ॥ इनविने उक्त । तुम सर्वदेव-  
 मन्त्रगी चिन्ताका वाक्छाण चिन्तते पूजन करो । उक्तो पुण्य पुण्य  
 मित्रगा ॥ ॥

पूजा अर्चन के अतिरिक्त चण्डिकाके अन्तर्गत करनीय अर्चन-  
 का अर्चन अर्चन के अतिरिक्त अर्चन अर्चन के अतिरिक्त अर्चन अर्चन के अतिरिक्त  
 अर्चन अर्चन के अतिरिक्त अर्चन अर्चन के अतिरिक्त अर्चन अर्चन के अतिरिक्त

[illegible]

करके कपटी नहीं है। सीमा अधिक है। कुछ लोग हीनपुत्री कादि वस्तुओंको भी प्रतिरोध में प्रत्यक्ष करते हैं किन्तु वह ठीक नहीं है; क्योंकि उन्हें वास्तुशक्ति की कमी नहीं मालूम पड़ती है। वे शायद कादि शक्तियों की व्यापकताके कारण प्रसन्न हों। वास्तु के ही कपटी भी प्रतिरोध है। वास्तुशक्तिके क्षेत्रोंमें इतिवृत्तमें सिद्ध और वास्तवमें अधिकारी हुआ करे। कुछ लोगोंका कथन है कि जब वास्तुशक्तिके क्षेत्रोंकी वृद्ध करनी हो तो उनके इतिवृत्तमें वास्तविक और वास्तविकमें वास्तुशक्ति की वृद्ध करे। जब केवल इतिवृत्तकी वृद्ध करनी हो, तो उनके लक्ष इतिवृत्तमें वास्तविक और वास्तविकमें वस्तुकी वृद्ध करे तथा जब केवल वास्तुशक्ति की वृद्ध करनी हो तो उनके लक्ष वस्तुकी वृद्ध करनी हो। वास्तुशक्तिके क्षेत्रोंकी वृद्ध करनी अधिक है। जब कम विचार केवल हीनपुत्री की वृद्धावस्था में हीनपुत्री है। कुछ लोग ऐसा करते हैं कि वास्तुशक्तिके क्षेत्रोंमें विचारों के वृद्ध करवा हों, उसे मध्यमें कादि करते हैं और वास्तविकमें क्षेत्र ही इतिवृत्तमें वास्तविक और मध्यमें विचार क्षेत्रोंके इतिवृत्तमें वास्तविकका कादि करते तथा वृद्ध करे। वह वास्तु की मूलमें सिद्ध नहीं होती। क्षेत्रोंकी वास्तुशक्तिके वृद्धावस्था में विचार मध्यमें है। वास्तु काय है कि वास्तुशक्तिके लक्ष वास्तु काय काय वस्तुकी ही वृद्ध करे वास्तु की शक्तियोंकी वास्तविकता ही वृद्ध करे, तथा वह लक्ष नहीं। किन्तु वेही वास्तविक क्षेत्रों की क्षेत्रों मध्यमें नहीं है। क्षेत्रों केवलमें वास्तु-वास्तविक और वास्तविककाय काय लक्ष किन्तु वास्तु है—

( लक्ष्य-वास्तविक )

लक्ष्य-वास्तविक	वास्तु-वास्तविक	वास्तु-वास्तविक
वास्तुशक्ति वास्तविक	वास्तुशक्ति वास्तविक	वास्तुशक्ति वास्तविक
वास्तविक वास्तुशक्ति	वास्तविक वास्तुशक्ति	वास्तुशक्ति

# अथ मूर्तिरहस्यम् •

आर्पित्वा

ॐ नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दवा ।

स्तुता सा पूजिता मक्त्वा वशीकृत्याञ्जगत्प्रियम् ॥ १ ॥

कनकाक्षमकान्तिः सा सुकान्तिकनकाम्बरा ।

देवी कनकवर्णामा कनकाक्षमभूषणा ॥ २ ॥

कमलाङ्कशुपाद्याञ्जैरलंकृतचतुर्भुजा ।

इन्दिरा कमला लक्ष्मी सा श्री लक्ष्माम्भुजासना ॥ ३ ॥

आदि कहते हैं—पञ्च ! कनका नामकी देवी, जो नन्दसे उत्पन्न होनेवाली है उसकी यदि भक्तिपूर्वक स्तुति और पूजा की जाय तो वे तीनों लोकोंमें उपासकके अर्चन कर देती हैं ॥ १ ॥ उनके श्रीमङ्गलोंकी कान्ति कनकके समान उत्तम है । वे सुन्दरे रंगके सुन्दर कनका धारण करती हैं । उनकी आभा सुवर्णके तुल्य है तथा वे सुवर्णके ही उत्तम आभूषण धारण करती हैं ॥ २ ॥ उनकी चार भुजाएँ कमल अङ्गुल पाद और चक्रसे सुशोभित हैं । वे इन्दिरा कमला लक्ष्मी भी तथा लक्ष्माम्भुजासना (सुवर्णमय कमलके अन्तर्गत विराजमान) आदि नामोंसे पुकारी जाती हैं ॥ ३ ॥

( इति-अष्टावक्र )

अष्टावक्रमुद्रा-पूजा

वृद्धावक्रा पूजा

अष्टमुद्रा पूजा

अष्टावक्रमुद्रा	वृद्धावक्रा	अष्टमुद्रा
अष्टावक्रमुद्रा देवी	वृद्धावक्रा देवी	अष्टमुद्रा देवी
मित्र मन्दिर	मित्र मन्दिर	मित्र मन्दिर

देवीकी अष्टमुद्रा य. देवीकी है—कनका रत्नमय कादम्बरी कुली नील और आभरी । वे देवीकी लज्जा नृसिंह दे वक्रों वक्ररथ मन्दिरान्तर्गतोंमें वन वदरगाय नृसिंह वदते हैं ।



या रक्तदन्तिका नाम देवी प्राक्ता मयानघ ।  
 तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वमयापहम् ॥ ४ ॥  
 रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा ।  
 रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तफेष्वातिभीषणा ॥ ५ ॥  
 रक्तीक्ष्णस्ता रक्तदधना रक्तदन्तिका ।  
 पतिं नारीश्वरतुरका देवी मर्त्तं मञ्जन्वनम् ॥ ६ ॥  
 बहुधेव विघाता सा सुमरुपुगसक्तनी ।  
 शीर्षो हम्पावतिस्पृक्तो तावतीव मनाहरौ ॥ ७ ॥  
 कर्कशावदिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयानिधी ।  
 भक्तान् सम्पापयेदेवी सर्वकामदुषौ हन्तौ ॥ ८ ॥

निम्नान् श्लोक । पहले मैं रक्तदन्तिका नामके हिन्दू देवीका परिचय  
 दित्त है अन्त उनके स्वरूपका वर्णन करेगा। सुनो । यह सब प्रकारके मर्त्यको  
 दूर करनेवाली है ॥ ४ ॥ वे काल रंगके वस्त्र धारण करती हैं । उनके शरीरका  
 रंग भी काल ही है और अङ्गोंके समस्त आभूषण भी काल रंगके हैं । उनके  
 वस्त्र-सज्ज मेव किरके बाल लोले मल और रोंग सभी रक्तवर्णके हैं।  
 इन्होंने वे रक्तदन्तिका कहावाली और अत्यन्त भयानक शिवाजी देती हैं।  
 डेढे की बलिके प्रति अनुयायि रहती है उली प्रकार देवी अपने भक्तपर  
 ( माताजी भाति ) स्नेह रखते हुए उलझी सेवा करती हैं ॥ ५-६ ॥ देवी  
 रक्तदन्तिकाका अकार कमुवाकी मूर्ति विज्ञात है । उनके दोनों हान मुख  
 पर्यन्तक मन्त्रन है । वे अपने पीछे अत्यन्त लम्ब एवं बहुव ही मनोहर हैं ।  
 कदार हात १० की अत्यन्त कमनीय हैं तथा पूर्ण आनन्दके समुद्र हैं ।  
 कपुर्ष कामना प्राप्ति करनेवाले वे हानी हान देवी अपने भक्तोंकी विनाश

तत्र पार्थ च मुसलं लाङ्गलं च विभर्ति सा ।  
 आस्न्याता रक्तचामुण्डा देवी योगधरीति च ॥ ९ ॥  
 अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्यावरजसम् ।  
 इमां यः पूजयेद्भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ॥ १० ॥  
 ( भुक्त्वा भागान् यथाकामं देवीसायुन्यमाप्नुयात् )  
 अर्षीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुस्तपम् ।  
 तं सा परिचरेद्देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥ ११ ॥  
 छाकम्मरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना ।  
 गम्भीरनामिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी ॥ १२ ॥  
 सुकर्कशसमोन्मुग्गावपनीनयनस्तनी ।  
 मुष्टिं क्षिणीमुत्सापूर्णं कमलं कमलालया ॥ १३ ॥

है ॥ ७-८ ॥ वे बनती चार भुजाओंमें गह्वर धनराज सुकल और एक  
 धारण करती हैं। वे ही रक्त चामुण्डा और योगधरी देवी कहलाती हैं ॥ ९ ॥  
 इनके द्वारा तत्पूर्य करण कर जगत् व्याप्त है। जो इन रक्तदन्तिका देवीका  
 भक्तिपूर्वक पूजन करता है वह भी करण कर जगत् व्याप्त होता है ॥ १० ॥  
 ( वह वषट् मोगीको मोगकर जगत् में देवीके साथ सायुन्य प्राप्त कर लेता  
 है। ) या प्रतिदिन रक्तदन्तिका देवीके शरीरका वह स्नान करता है उसकी  
 वे देवी प्रेमपूर्वक तर्लक्षणस्नान सेवा करती हैं—ठीक उसी तरह जैसे पतिव्रता  
 नारी अपने प्रियतम पतिकी पत्तिनवा करती है ॥ ११ ॥

छाकम्मरी देवीके शरीरकी कान्ति नीले रंगकी है। उनके नेत्र नील  
 कमलके समान हैं नाभि मीची है तथा त्रिबलीसे विभूषित उदर ( मध्यभाग )  
 लक्ष्म है ॥ १२ ॥ उनके शरीरों जगत् अत्यन्त कठोर तथा अद्वय करण  
 ऊँचे गोल स्तन तथा परस्पर सटे हुए हैं। वे परमेश्वरी कमलमें निवास  
 करनेवासी हैं और हाथमें बाणसे मरी मुष्टि कमल छाक-समूह तथा मकर-

पुष्पपल्लवमूलादिकलाध्वं शाकसञ्चयम् ।  
 क्षम्भानन्तरसैर्युक्तां शुभृण्मृत्पुत्रयापहम् ॥१४॥  
 कार्द्वर्कं च सूरस्कान्तिं विम्रती परमेखरी ।  
 शाकम्मरी घृताक्षी सा तैव दुग्धा प्रकीर्तिता ॥१५॥  
 विश्वोक्ता दुष्टदमनी क्षमनी दुरितापदाम् ।  
 उभा गौरी सती चण्डी काठिका सा च पार्वती ॥१६॥  
 शाकम्मरीं स्तुवत प्यायन्ध्वपन् सम्प्रयन्नमन् ।  
 मध्वय्यमश्नुते श्रीमन्नपानाभुतं फलम् ॥१७॥  
 मीमापि नीलवणा सा रंष्ट्रसुखमासुरा ।  
 विशाललोचना नारी हृत्पदीनयमोचरा ॥१८॥  
 चन्द्रहास्तं च कमलं क्षिरः पात्रं च विम्रती ।  
 एकवीरा कालरात्रिः सैषोक्ता कामदा स्तुता ॥१९॥

मान् वनुष बारण करती हैं । वह राजचमूह अनन्त मनोहरिष्ठ रत्नो  
 पुष्प तथा मूला तथा और मनुष्य मयने म्हा कजेराज तथा पुष्प पञ्चम  
 मूक भादि एवं फलैति लगता है । वे ही शाकम्मरी, घृताक्षी तथा दुर्गा  
 गौरी हैं ॥ १४—१५ ॥ वे शोकसे पीड़ित दुष्टों-का दमन करनेवाली  
 तथा राम और विपत्तियों काहत करनेवाली हैं । उभा गौरी सती चण्डी  
 काठिका और पार्वती भी वे ही हैं ॥ १६ ॥ जो मनुष्य शाकम्मरी देवीकी  
 स्तुति म्हा करे उस पुत्रा और मन्त्रन करता है वह शीघ्र ही भक्त पान एवं  
 भक्तवत्सल भक्षण फलम प्राप्ति होता है ॥ १७ ॥

मीमा देवीका कर्ण भी नील ही है । उनका हाथ और रंष्ट्र कमलसे  
 युक्त हैं । उनके मुख बड़े-बड़े हैं लक्ष्म्य की-सा है ज्ञान योग-योग और  
 मूक हैं । वे अपनी हाथोंमें चन्द्रहात नामक एक कमल मस्तक और  
 पद्मराग वस्त्र करती हैं । वे ही एकवीरा कालरात्रि तथा कामदा करवाती  
 और इन नामोंसे प्रसिद्ध होती हैं ॥ १८ १९ ॥

तत्रोमच्छलदुर्धर्षा आमरी चित्रकान्तिसुत् ।  
 चित्रानुलेपना देवी चित्रामरणभूषिता ॥२०॥  
 चित्रभ्रमरपाणिः सा महामारीति गीयते ।  
 इत्येता मूर्तयो देव्या याः स्म्यता वसुधाधिप ॥२१॥  
 अगन्मातुमष्टिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः ।  
 इदं रहस्यं परमं न बाह्यं कस्यचित्त्वया ॥२२॥  
 व्याख्यानं दिव्यमूर्तिनामभीष्टफलदायकम् ।  
 तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देवीं जप नितन्तरम् ॥२३॥  
 सप्तत्रिंशत्तर्पणैर्ब्रह्महत्यासमरपि ।  
 पाठमात्रेण मन्त्राणां मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥२४॥  
 देव्या ध्यान मया स्म्यते गुह्यात् गुह्यतरं महत् ।  
 तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वकर्मफलप्रदम् ॥२५॥

आमरी देवीकी कान्ति विविध ( अनेक रंगकी ) है । वे करने  
 त्रयोमच्छलके करके दुर्धर्ष दिक्कारी होती हैं । उनका अङ्गण मी अनेक  
 रंगका है तथा वे चित्र-विचित्र अभूषणोंसे विभूषित हैं ॥ २० ॥ चित्रभ्रमर  
 पाणि और महामारी आदि नामोंसे उनकी महिमाका गान किया जाता है ।  
 राजन् ! इस प्रकार अगन्माता अष्टिका देवीकी वे मूर्तियाँ बतलायी गयी  
 हैं ॥ २१ ॥ जो कीर्तन करनेपर कामधेनुके समान लभ्यते कामनामाको पूर्ण  
 करती हैं । यह परम गोपनीय रहस्य है । इसे तुम्हें वृत्ते किम्बो नहीं  
 बतलाना चाहिये ॥ २२ ॥ दिव्य मूर्तियोंका यह आख्यान मनोबान्धित फल  
 देनेवाला है । इसलिये पूज प्रयत्न करके तुम निरन्तर देवीके जप ( आराधन )  
 में लगे रहो ॥ २३ ॥ सप्तशतीके मन्त्रोंके पाठमात्रसे मनुष्य सप्त अर्थोंमें  
 उपार्जित ब्रह्महत्यासहस्र घोर पातकी एवं समस्त कर्मरोंसे मुक्त हो जाता  
 है । २४ ॥ इसलिये मैंने पूर्ण प्रयत्न करके देवीके गोपनीयसे भी अत्यन्त  
 गोपनीय ध्यानका वचन किया है जो तब प्रकारके मनोबान्धित कर्मोंको

( एतस्यास्त्वं प्रसादेन सर्वमान्या भविष्यसि ।  
 सर्वरूपमयी देवी सर्व देवीमयं जगत् ।  
 अताञ्च विस्वरूपा तां नमामि परमेश्वरीम् । )

इति मूर्तिरहस्यं सम्पूर्णम् ॥

## समा-प्रार्थना

अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽर्निशं मया ।  
 दासाऽयमिति मां मत्वा समस्त परमेश्वरि ॥ १ ॥  
 मायाहिनं न जानामि न जानामि विमर्जनम् ।  
 पूजां चैव न जानामि सम्पत्तां परमेश्वरि ॥ २ ॥  
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं मन्त्रिहीनं सुरेश्वरि ।  
 यत्पुत्रितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ३ ॥

हेनेकथ है ॥ १५ ॥ ( उनके प्रचारने तुम सम्मान्य हो जाओगे । देवी  
 सर्वरूपमयी है तथा सम्पूर्ण जगत् देवीमय है । अतः मैं उन विस्वरूपा  
 परमेश्वरीको सम्भार करता हूँ । )

परमेश्वरि । मेरे द्वारा तत्कालिन किसी अराधन होती रहते हैं । पर  
 मेरा राज है — जो समस्तकर मेरे उक्त अराधनीकी तुम गुणार्थक सम्य करो । १ ।  
 परमेश्वरि । मैं मायाहिन नहीं जानता विमर्जन करण नहीं जानता तथा  
 पूजा करनेका रीत भी नहीं जानता । सम्य करो ॥ २ ॥ देवि । सुरेश्वरि । मेरे को  
 मन्त्रहीन क्रियाहीन गौर भक्तिहीन पूजन विद्या है वह सब भाग्यी गुणों

गणना योग्यकी सम्पत्ती हुए अग्निने एतद्विचार करनेके पश्चात्किन्हीन  
 रूप ॥ ३ ॥ हे देवि । मेरे अराधनीके भिन्ने जगत् सर्वता को ।

अपराधशुद्ध कृत्वा जगदम्बेति शोभरेत् ।  
 यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ ४ ॥  
 सापराधोऽसि क्षरणं प्राप्तस्त्वा जगदम्बिके ।  
 इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ५ ॥  
 ब्रह्मानाद्विस्मृतेर्ब्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् ।  
 तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ॥ ६ ॥  
 कामेश्वरि जगन्मातः सखिदत्तनन्दविग्रहे ।  
 शुद्धाणां चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि ॥ ७ ॥  
 गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं शुद्धाणां सत्कृतं जपम् ।  
 सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादात्सुरेश्वरि ॥ ८ ॥

॥ श्रीगुर्गापणमस्तु ॥

पूज हो ॥ १ ॥ सैकड़ों अपराध करके भी जो तुम्हारी क्षरणमें आ जाय 'अहम्' कह कर पुकारता है उस वह गति प्राप्त होती है जो ब्रह्मादि देवताओं के लिये भी सुखम नहीं है ॥ ४ ॥ जगदम्बिके ! मैं अपराधी हूँ, किंतु तुम्हारी क्षरणमें आया हूँ । इत समय दयाकर पान हूँ । तुम कृपा पायी करो ॥ ५ ॥ देवि ! परमेश्वरि ! अनन्तसे नृक्षसे अथवा बुद्धि भ्रान्त होनेके कारण मैंने जो न्यूनता या अधिकता कर ही हो वह सब क्षमा करो और प्रमत्त होमा ॥ ६ ॥ सखिदत्तनन्दस्वरूपा परमेश्वरी ! जगन्माता कामेश्वरि ! तुम प्रेमपूर्वक मेरी वह पृथक् स्वीकार करो और मुझपर प्रयत्न रखो ॥ ७ ॥ देवि ! सुरेश्वरि ! तुम गोवनीय से भी गोवनीय बलुकी रखा करनेवाली हो । मेरे निवेदन क्रिये हुए इत करको प्रदत्त कर । तुम्हारी कृपासे मुझे सिद्धि प्राप्त हो ॥ ८ ॥

## श्रीदुर्गामानस-पूजा

उद्यच्छन्दनङ्कुमाकनपयापराभिराध्यापितां

नानानर्घ्यमभिप्रयाळषट्ठितां दत्तां शुभानाम्भिके ।

आशुषां सुरसुन्दरीमिरभितां इस्ताम्बुजैर्भक्तितो

मातः सुन्दरि भक्तकल्पलतिके श्रीपाशुकाभादरात् ॥१॥

देवेन्द्रादिमिरचितं सुरगणैरादाय सिंहस्रन

पञ्चस्काञ्चनसंचयामिरचितं चाक्षप्रमामास्वरम् ।

एतच्चम्यककलकीपरिमलं तैलं महानिमलं

गन्धोद्धर्तनमादरेण तक्ष्णीदत्तं शुभानाम्भिके ॥२॥

माता विष्णुस्वरूपी । तुम भक्तकलकी मनीषाम्बल पूर्ण करनेकरी कल्पकल हो । म्भ । वह पाशुका नाभरपूर्वक तुम्हारे बीचरभोंमें लम्पित है इसे धूप करो । वह उत्तम कञ्चन और कुङ्कुमसे मिली हुई कल कल की चारुसे बोधी गयी है । भक्ति भक्तिकी बहुमूल्य मन्त्रियों तथा मैत्रियों इत्यादि निर्माण हुआ है और बहुत-सी देवालयमाने करने कर-कर्मजोड़ता भक्तिपूर्वक इसे सब ओरसे भी पौकडर लच्छ बना दिया है ॥ १ ॥

म्भ । देवताजीमे तुम्हारे बैठनेके लिये वह विष्णु विदालन क्यकर रज दिया है हमपर विराज्ये । वह बर विहायन है भिजनी देवराज इन्द्र भाई भी पूजा करते हैं । मगनी कान्तिमे समरते हुए लक्षि लक्षि तुम्हारे इत्यादि निर्माण किया गया है । वह अपनी समोदर प्रभुसे लदा प्रकटात्मन रह्य है । इसके निरा वह पत्नी और कैलकीकी तुम्हारे पूर्ण करकल निर्माण लेक और तुम्हारेपुत्र उवाहन है भिसे विष्णु पुत्रविर्ष्य नाभरपूर्वक तुम्हारी नेचामे प्रत्युत पर गयी है कन्या हमे स्वीकार करो ॥ १ ॥

पद्मादेवि गृहाण क्षम्भुगृहिणि भीसुन्दरि प्रायशो  
 गन्धद्रव्यसमूहनिर्मरतरं चाथ्रीफलं निर्मलम् ।  
 तत्केशान् परिष्ठाप्य कङ्कतिक्रया मन्दाकिनीक्षोतसि  
 स्नात्वा प्रोज्ज्वलगन्धकं भषतु ह भीसुन्दरि त्वन्मुदे ॥ ३ ॥  
 सुराधिपतिकामिनीकरसरोजनालीपुतां  
 सचन्दनसकुङ्कुमागुरुमरणं विभ्राजिताम् ।  
 महापरिमलाज्ज्वलां सरसशुद्धकस्तुरिकां  
 गृहाण वरदायिनि त्रिपुरसुन्दरि भीप्रद ॥ ४ ॥  
 गन्धवामरकिञ्चरप्रियतमासन्तानहस्ताम्बुज  
 प्रस्तारैर्घ्रियमाणमुचमतरं काश्मीरजापिञ्जरम् ।

देवि ! इसके पश्चात् वह विष्टुद आक्नेछा फल ग्रहण करो ।  
 शिवप्रिये ! त्रिपुरसुन्दरी ! इस आँखमें प्रायः कितने भी सुगन्धित पदार्थ हैं  
 वे नभी छोड़े गये हैं इससे वह परम सुगन्धित हो गया है । अतः इसके  
 लगाकर बायींको कपीले लाङ्ग को और गङ्गाबीड़ी पवित्र वायामें नहाओ ।  
 तदनन्तर वह दिव्य गन्ध तैयारमें प्रस्तुत है, वह तुम्हारे अन्तर्यामी  
 रुद्रि करनेवाला हो ॥ ३ ॥

तन्नाति प्रधान करनेवाली वरदायिनी त्रिपुरसुन्दरि ! वह सरस शुद्ध  
 कस्तूरी ग्रहण करो । इसे स्वयं दशराज इन्द्रकी पत्नी महायन्त्री शम्बी अपन  
 कर-कम्मनोंमें छेकर तैयारमें लव्ही हैं । इसमें चन्दन कुसुम तथा भगुन्दरा  
 मेल होनेसे और भी इसकी शोभा बढ़ गयी है । इसके बहुत अधिक गन्ध  
 निकलनेके कारण वह वही मन्दोहर प्रतीत होती है ॥ ४ ॥

मा भीसुन्दरी ! वह परम उत्तम निर्मल गन्ध तैयारमें लयारित है वह  
 तुम्हारे हार्दको बढावे । अतः ! इसे गन्धर्व देवता तथा विष्टुरी मेवनी  
 सुन्दरियों अग्ने देवा । हुए कर-कम्मनोंमें धारण किये लव्ही हैं । यह वेगारमें  
 रंगा कुभा रीताभर है । इनमें परम प्रकाशमान नृपमण्डलकी शोभायसी



मातमोस्वरभानुमण्डलसत्कान्तिप्रदानान्म्वलं

चैतभिर्मलमातनासु वसन भीसुन्दरि त्वन्मुदम् ॥ ५ ॥

म्वनाकन्तिस्तकुण्डले भुतिपुगे इताम्बुजे मुद्रिका

मभ्ये सारसना नितम्बफलके मङ्गीरमङ्गप्रिये ।

इतो वक्षसि कङ्कणौ कम्परणत्कारौ करद्वन्द्वक

विन्यस्तं मुकुटं शिरस्त्रुदिनं दत्तान्मदं स्तुयताम् ॥ ६ ॥

ग्रीवायां वृत्कान्तिकान्तपटलं ग्रैवेयकं सुन्दरं

सिन्दूरं विठसल्लुलाटफलके सौन्दर्यमुद्रावरम् ।

राजत्कञ्जलमुन्मल्लात्पल्लवतभीमोचने छावने

तद्विभ्यापविनिर्मितं रचयतु भीष्माभ्यामपि भीप्रद ॥ ७ ॥

अमन्दतरमन्दरान्मभितदुग्धसि पूरय

निष्ठाकरकरापमं त्रिपुरसुन्दरि भीप्रद ।

हिम्ब जाम्बि निम्ब रही है जिनके कारण यह बहुत ही सुघोमित हो रहा है ॥ ५ ॥

तुम्हारे दोनों कमरोंमें दोनोंके की हुए कुण्डल कितनीमिलते हैं वर कमल की एक अद्भुतम अमूर्ती सोम पावे कटिस्थायी नितम्बोंपर करफनी मुद्रावे होना कनकम मङ्गीर मुद्रावित होता रहे कम्परणमई इत सुघोमित हो और दोनों कनकस्थायी कवन गन्धनमिले यह । तुम्हारे मङ्गलपर रचना हुआ हिम्ब मुकुट प्रतिविन अमन्य प्रचल करे । ये सब माधुर्य प्रशान्तके योग्य हैं ॥ ६ ॥

अन रजसायी शिर्यिका पार्वती । तुम गयेही बहुत ही पयसीली तुम्हारे ममरी पन्न ही कनकके मध्यमायमे सौन्दर्यकी मुद्रा ( निद्र ) कारण वरजसा निम्ब ही रही कनकमो लया अत्यन्त सुन्दर पल्लवकी सोमायी निरल्लत वरजसाव नेयाम यह काकम भी लगा हो यह काकम हिम्ब गन्धस्थायी नेयाम निम्ब गया है ॥ ७ ॥

॥ ५ ॥ वरजसायी मय्यानिर्दयिनी त्रिपुरसुन्दरी । जाने सुन्दरी

गृहाण मुन्वमीधितु मुञ्जुसिम्बमाविमुमै-  
 विनिर्मितमपच्छिद् रसिकराम्पुत्रम्यापिनम् ॥ ८ ॥  
 कस्तूरीद्रवचन्दनागुरुमुधाधाराभिगङ्गापिप्तं  
 चञ्चलम्पफपाटलादिमुरभिद्रव्यैः सुगन्धीकृतम् ।  
 देवस्त्रीगणमन्तकमित्तमहारत्नादिकुम्भप्रक्षे-  
 रम्भ धाम्मवि सप्रमेण विमल दर्शं गृहाणाम्बिक ॥ ९ ॥  
 कटारास्पलनागकस्तूरसराज्ञास्यावलीमालवी  
 मालीकरवफलादिबुभुभै रक्ताशमारादिभिः ।  
 पुष्पमास्त्वमरण पै मुरमिणा नानारसस्रातसा  
 ताम्राम्माधनियासिनी मगवती भीषण्डिका पूजये ॥ १० ॥

छाया निहायनेके सिरे यह दर्शन प्रदान करो । इसे माताएं एवं रानी अपने  
 करकमलोंमें लेकर ले जाने उपायित है । इस दर्शनके चारों ओर दूंगे जड़े हैं ।  
 प्रसन्न बंगले पूज्येश्वर मन्त्रपत्रकी मयानीभ जब धरिणमुद्र मया गद्य  
 उन समय यह द ज उभीने प्रकट हुआ था । यह पञ्चमाङ्की किरणोंके  
 कम्पन उगमक है ॥ ८ ॥

मगवान घट्टरकी पत्रपत्रा पापती देवी देवाहनाभ के मन्त्रकर रक्षक  
 हुए बहुमुख स्वयं कण्ठोत्तरा शीघ्रतत्पूरक रिया जनेदण यह निर्दय  
 जन प्रदान करा । इसे मया और गुणान भर्तृ गुणमित्र दण्डैग मुद्रित  
 किया गया है तथा यह करुणीम प्रदान अगुद और गुहाकी बाणने  
 भर्तृगित है ॥ ॥

ये बह्म उक्त नगद्वार कन्द मन्त्र मन्त्रका बुभु कोकी  
 और लाल कन्द भर्तृपुत्रन गुणमित्र बुधमागभने तथा मया प्रचारके  
 रानीकी बाणने लाल कन्द ॥ ३९ निराल कानेहानी भीषण्डिका देवीकी  
 पूजा कराये ॥ १० ॥

मातर्मस्त्रिमानुमण्डलसुसत्कान्तिप्रदानाग्न्यसं

वैतभिर्मलमातनातु वसनं श्रीसुन्दरि त्वन्मदम् ॥ ५ ॥

स्वगाकम्पितकुण्डले भुतिपुगे इत्याम्पुत्रे मुद्रिष्य

मये सारसना नितम्बफलके मञ्जीरमङ्गप्रिय ।

हारा वसति कङ्कणौ कणरपत्करौ करद्वन्द्वक

चिन्वस्तं मुकुटं क्षिरस्रनुदिनं दत्तोन्मद स्तुयताम् ॥ ६ ॥

प्रीयायां वृत्तकान्तिकान्तपटलं प्रेषेयकं सुन्दरं

सिन्दूरं विलसल्लुलाटफलके सौन्दर्यमुद्रावरम् ।

राम्यत्कञ्जलमुन्मलतास्पलदलप्रीमोचने लाघने

तरिष्यापधिनिर्मितं रचयतु श्रीदाम्मवि श्रीमदे ॥ ७ ॥

अमन्दतरमन्दरोन्मथितदुग्धसिन्धुद्वयं

निष्ठाकरकरापमं त्रिपुरसुन्दरि श्रीमदे ।

दिव्य काण्ट निकल रही है किन्के कसल वह बहुत ही सुघोमित हो रहा है ॥ ५ ॥

तुम्हारे दोनों कानोंमें सोनेके की डुर कुन्डल किन्किमिट्टीरों पर-कमल की एक मङ्गुलीमें जगुड़ी सोमा पासे कटिमाणमें नितम्बोंपर करवनी मुहावे दोनों करवोंमें मञ्जीर सुनारित होता रहे कण-कणों पर मुघोमित हो और दोनों कन्धारवाय कवन रजस्तनो रहे । तुम्हारे मस्तकपर रक्ता हुआ दिव्य मुकुट प्रज्ज्वलित मानन्द प्रदान करे । ये सब आभूषण प्रसन्नक होय है ॥ ६ ॥

धन देनेवाली चिन्मया वारंती । तुम गलेमें बहुत ही कमलीली सुन्दर देनेवाली पदन को कन्धारके मन्मथमाणमें सौन्दर्यकी मुद्रा ( मुद्रा ) धारण करनेवाली त्रिपुरकी बेटी कणामो तथा मानन्द सुन्दर पदरजकी सोमाकी तिरस्कृत करनेवाली नेत्रोंमें वह काञ्च भी लगा कर वह काञ्च दिव्य भोज्यकीसे सेकर किया गया है ॥ ७ ॥

पानीका नाम करनेवाली तन्मथिर्दाहिनी त्रिपुरसुन्दरी । माने सुनधी

एवमन्तलिकञ्ज्वलं बहुलनागयाद्रीदल  
 मञ्जातिफलकोमल सधनसारपूगीफलम् ।  
 मुषामपुरिमाकुल रुधिररत्नपात्रमित  
 गृहाण मुखपद्मे स्फुरितमम्ब ताम्पूटकम् ॥ १४ ॥  
 वरन्प्रभवचन्द्रमस्फुग्तिचन्द्रिकागुन्दरं  
 गन्तुरतरङ्गिणीललितमौक्तिकदम्बरम् ।  
 गृहाण नरकाग्रनप्रभपदण्डगण्डाञ्ज्वल  
 महात्रिपुरगुन्दरि प्रकटमाणपर्त्र महत् ॥ १५ ॥  
 मामन्त्रमुदमातनातु गुमगर्भाभिः मदाऽऽन्दालिनं  
 गुमं धामरामिन्दुवृन्दमद्य प्रम्वेन्दु मापदम् ।

श्रीग. वा. ३। सुगन्धिच. इत्येते श्लोक. वरन्प्रभव वनाये हुए नान्य प्रकारके  
 ध्वजान भी हैं इनमें भी मन्त्रमूर्तिके गङ्गाल ली। मनु १६१ और धीका  
 भी मेव है ॥ १३ ॥

भा. १। सुगन्धिच. वनाये लक्ष्मण वर दिव्य ताम्पूत्र धवन  
 धुमे दत्त व।। मन्त्रगो वनी सुवोच इन्ने कीड़े ललाये गये हैं अन्त्र-  
 वरन् सुन्दर अन्त्र परने हैं इनमें बहुतसे वस्त्रके चन्द्रिका वरन्नाग विष्ट  
 गता है। इन में कीड़े वस्त्रके अन्तर्गत कुर और अन्तर्गत वदे है। वर  
 ताम्पूत्र मुक्के स्फुरित वी, वी है ॥ १४ ॥

भा. २। त्रिपुरगुन्दरी का प्र. वा. ३। गुमने लक्ष्मण वर दिव्य दम् ३  
 वर दम् ३ का है इनमें दम् वरी। वर ताम्पूत्रकाके काटलकी काटली  
 अन्तर्गत के अन्तर्गत गता है। इनमें अन्तर्गत दम् अन्तर्गत अन्तर्गत दम्  
 वर वरी है काटले वरकी गता अन्तर्गत अन्तर्गत वरी गता है। वर  
 वर दम् वर वरके वर वर अन्तर्गत वर वर है ॥ १५ ॥

भा. ३। त्रिपुरगुन्दरी का प्र. वा. ३। गुमने लक्ष्मण वर दिव्य दम् ३  
 वर दम् ३ का है इनमें दम् वरी। वर ताम्पूत्रकाके काटलकी काटली  
 अन्तर्गत के अन्तर्गत गता है। इनमें अन्तर्गत दम् अन्तर्गत अन्तर्गत दम्  
 वर वरी है काटले वरकी गता अन्तर्गत अन्तर्गत वरी गता है। वर  
 वर दम् वर वरके वर वर अन्तर्गत वर वर है ॥ १५ ॥

मांसीगुम्फुत्तपन्दनगुकरव कर्पूरमैलेयवै

मौष्मीकै सह कङ्कुमै सुरचितैः सर्पिर्मिरामिमितैः ।

सौरम्यम्पितिमन्दिरे मभिमये पात्रे मवेत् प्रीतये

पूपाऽर्प सुरक्षामिनीनिरचितः श्रीचण्डिके त्वन्दुदे ॥११॥

वृत्तद्रवपरिष्कृत्युपिरत्नमण्यपान्विता

महाविमिरनायनः सुरनिवम्बिनीनिर्मितः ।

सुवर्णचक्रवित्त सुवनसारवर्षान्वित-

स्त्व विपुसुन्दरि स्फुरति देवि दीपा हृद ॥१२॥

जालीसौरमनिर्मरं रुचिकरं श्लाघादर्न निर्मलं

पुक्तं द्विद्वयरीचश्रीसुरमिद्विभ्यान्वितैर्म्यञ्जनैः ।

पद्मान्नेन सपायसेन मधुना दध्यान्मसमिभितं

नवेद्यं सुरक्षामिनीनिरचितं श्रीचण्डिके त्वन्दुदे ॥१३॥

श्रीचण्डिका देवी । देवप्रभुभक्ति दाय्य तैपार चिन्ता दुमा यह दिव्य रूप  
तुम्हारी प्रणमता बहमिवाका हो । यह रूप रत्नमय पात्रमें जो सुवर्णका  
निरालम्बन है रक्ता दुमा है यह तुम्हें लंछीय प्रणम करे । इनमें बहमिवाका  
गुम्फुत्त पन्दन मधुक कर्पूर पाण्डुमीतः मधु कुङ्कुम तथा की  
मिराकर उत्तम रत्नित बनाया गया है ॥ ११ ॥

उन्नी विपुसुन्दरी । तुम्हारी प्रणमताके लिये वही यह दीप प्रणमिता  
हो रहा है । वह लीने मण्डता है । इनकी दीपकमें सुन्दर रक्ता रंका ज्वा  
है इन बजाइना जाने बनाया है । यह दीपक सुरक्षके चरण ( पात्र ) में  
ज्वाला गया है । इनमें उपरके पात्र वली रखी है । यह मण्डिते मारी  
अम्बकाका श्री नारा करनराज्य है ॥ १२ ॥

जालिन्ना नी । देवप्रभुभक्ति तुम्हारी प्रणमताके लिये यह दिव्य  
जैवज नैका रत्ना है इनमें जगदीशके श्लाघा मण्ड मण्ड है जो बहुत  
ही मण्डक जोर कोकीकी गुम्फुत्त वणित है । मण्ड ही दीप मिर्च और

## अथ दुर्गाद्वात्रिंशन्नाममाला

एक समबन्धी बात है, ब्रह्मा आपि देवताओंनि पुत्र्य आदि विविध उपजातोंसे महेष्टरी दुर्गाका पूजन किया। इससे प्रसन्न होकर दुर्गातिनाथिनी दुर्गानि कहा—देवताओ ! मैं तुम्हारे पूजनसे संतुष्ट हूँ। तुम्हारी ओ रक्षक हो माँगो मैं तुम्हें दुर्धम-से-दुर्धम वस्तु भी प्रदान करूँगी। दुर्गाका वह वचन सुनकर देवता बोले—देवि ! हमारे शत्रु मरिचासुरको ओ तीनों लोकोंके किये कंटक या आपने भार डाल्य। इससे सम्पूर्ण जगत् स्वस्थ एवं निर्मम हो गया। आपकी ही कृपासे हमें पुनः अपने-अपने पदवी प्राप्ति हुई है। आप मर्त्योंके किये कष्टरहित हैं। हम आपकी शरणमें आये हैं। अतः अब हमारे मनमें कुछ भी पानिकी अमिषता शेष नहीं है। हमें अब कुछ भिन्न गया। तथापि आपकी आज्ञा है। इसलिये हम जगत्की रक्षाके किये आपसे कुछ पूजना चाहते हैं। महेष्टरि ! कौन-सा देव्य उपयुक्त है जिससे शत्रु प्रसन्न होकर आप संकटमें पड़े हुए जीवकी रक्षा करती हैं। देवेष्टरि ! वह बात सर्वथा योग्यनीय हो-तो भी हमें अक्षर्य बचाने।

देवताओंके इस प्रकार प्रार्थना करनेपर स्वामयी दुर्गा देवीने कहा—देवताय ! तुनो—वह रहस्य अत्यन्त गोपनीय और दुर्धम है। मेरे वक्षीत नामोंकी मात्रा सब प्रकारकी आराधिका विनाश करनेवासी है। तीनों लोकोंमें इसके सम्मान दूसरी कोई स्तुति नहीं है। वह रहस्यकर है। इसे बतलाती हूँ तुनो—

दुर्गा दुर्गातिष्ठमनी दुर्गापद्मिनिवारिणी ।  
 दुर्गमन्त्रेदिनी दुर्गसाभिनी दुर्गनाथिनी ॥  
 दुर्गताद्वारिणी दुर्गनिहन्त्री दुर्गमापहा ।  
 दुर्गमप्रानदा दुर्गदैत्यलोकदधानला ॥

सद्योजास्त्यसिष्ठनारदशुक्ल्यासादिवाल्मीकिभिः  
 स्वे चित्ते क्रियमाणेष्वङ्गुलानां क्षमाभि वेदम्वनिः ॥१६॥  
 सर्गाङ्गमे वेष्टुमुदङ्गुलमेरीनिनादैरुपगीबमाना ।  
 कोटाहसैराकठिता तथास्तु विद्याधरीनृत्त्यकटा मुस्ताम् १७  
 रेभि मक्तिरसमाविष्टाचे प्रीयतां यदि कुतोऽपि लम्बते ।  
 तत्र लौन्ध्रमपि सस्फुल्लमेकं अन्मकोटिमिरपीह न लम्बम् १८  
 एतैः पोष्टसमिः पदैरुपचासावकल्पितैः ।  
 यः परां वेष्टतां तौति स तथा कलमानुयात् ॥१९॥

६. तुम्हारे हृदयों अपने । इतके विद्या महर्षि जगन्नाथ कविष्ठ, नरद, कुच  
 व्यास आदि तथा वाल्मीकि मुनि अपने-अपने चित्तों को वेदमन्त्रोंके उपकरण-  
 का विचार करते हैं । उनकी वह अनासक्तचित्त वेदभावि तुम्हारे सम्मुखों  
 इति करे ॥ १६ ॥

स्वर्गके योगममें वेष्टु मुदङ्गुल तथा मेरीनी मङ्गुर आनिके वाच  
 को लगीत होया है तथा कितने अनेक प्रकारके औन्नत्यका अर्थ प्राप्त  
 करता है । वह विद्याधरीनाम प्रसिद्ध नृत्य-कटा तुम्हारे मुखाधी इति  
 करे ॥ १७ ॥

रेभि । तुम्हारे मक्तिरकसे माक्ति इस पद्यमय सोचमें बरि कहति मैं  
 कुच मक्तिरकसे मिके तो उलीसि प्रथम हो जाओ । मा । तुम्हारी मक्तिके कितने  
 चित्तों को नाकुल्य होतो है । वही एकमात्र औन्नत्यका अर्थ है । वह कोटि  
 कोटि कर्म बरस करसपर भी इस तत्तामें तुम्हारी कुराके विद्या मुक्तम  
 नहीं होती ॥ १८ ॥

इन उपचारकल्पित लोच पत्तीसे जो पद्य देखा सम्मुखी विपुलसुन्दरीका  
 वाचन करता है । वह उन उपचारोंके लक्षणका अर्थ प्राप्त करता है ॥१९॥

हो जाता है। विपत्तिके समय इसके समान भक्त्यात्मक उपाय दूसरा नहीं है।  
 देवमय। इस नाममात्मका पाठ करनेवाले मनुष्योंकी कभी कोई हानि नहीं  
 होती। अमर, मातृक और षष्ठ मनुष्यको इसका उपदेश नहीं देना चाहिये।  
 जो भरी विपत्तिमें पड़नेपर भी इस नामात्मकीका हठकर, लठ हठकर अथवा  
 अथवा बार पाठ करता है, स्वयं करता या आसनोंसे करता है वह उस  
 प्रकारकी आपत्तियोंसे मुक्त हो जाता है। सिद्ध अभिमें मनुष्यभिन्न छेद  
 सिद्धोंसे इन नामात्मका अथवा बार हवन करे तो मनुष्य सब विपत्तियोंसे छूट  
 जाता है। इस नाममात्मका पुरस्कार लीला हठकरा है। पुरस्कारपूर्वक पाठ  
 करनेसे मनुष्य इसके द्वारा सम्पूर्ण कार्य सिद्ध कर सकता है। मेरी सुन्दर  
 मिट्टीकी मष्टमुख्य मूर्ति बनाने आठों सुखाभोगोंमें कम्पा: गन्ध (गन्ध), विष्णु,  
 ब्रह्म, धनुष, कमल, शेट (शाल) और मुद्गर धारण करावे। मूर्तिके मस्तकमें  
 चन्द्रमाक्ष चिह्न हो उसके तीन नेत्र हों उसे लाल कप पहनाया गया हो  
 वह तिहके कन्धेपर सवार हो और छन्दे महिषासुरका वध कर रही हो, इस  
 प्रकारकी प्रतिमा बनाकर नाना प्रकारकी लक्ष्मियोंसे भक्तिपूर्वक सेवा पूजन  
 करे। मेरे ठक नामोंसे अथवा कनैरके पूज्य पढ़ाते हुए वो बार पूज्य करे और  
 मन्त्र मन करते हुए पूज्यसे हवन करे। भाति भातिके उत्तम पदार्थ मोना  
 समान। इस प्रकार करनेसे मनुष्य अक्षय्य कार्यको भी सिद्ध कर लेता है।  
 जो मानव प्रतिदिन मेरा भजन करता है वह कभी विपत्तिमें नहीं पड़ता।  
 देवताओंसे ऐसा कहकर आत्मा वहीं अन्तर्धान हो गयी। दुर्गाष्टाके  
 इस उपास्यात्मको जो सुनते हैं उनपर कोई विपत्ति नहीं आती।





दुर्गमा दुर्गमालोका दुर्गमात्मस्वरूपिणी ।  
 दुर्गमागप्रदा दुर्गमविद्या दुर्गमाभिता ॥  
 दुर्गमज्ञानसंस्थाना दुर्गमध्यानमाप्तिनी ।  
 दुर्गमाद्या दुर्गमगा दुर्गमार्थस्वरूपिणी ॥  
 दुर्गमासुरसंहन्त्री दुर्गमाशुचपारिणी ।  
 दुर्गमाङ्गी दुर्गमता दुर्गम्या दुर्गमेश्वरी ॥  
 दुर्गमीमा दुर्गमामा दुर्गमा दुर्गदारिणी ।  
 नामाशक्तिमिमां यस्तु दुर्गया मम मानवः ॥  
 पठेद् सर्वमया मुक्ता मविष्यति न संशयः ।

गुणा २ दुर्गाकल्पिणी ३ दुर्गावहनिधारीणी ४ दुर्गानन्देदिनी  
 ५ दुर्गमाभिनी ६ दुर्गमाद्यिनी ७ दुर्गादेवारीणी ८ दुर्गनिन्दनी  
 दुर्गमागहा ९ दुर्गमकल्पदा १० दुर्गावहोदरामया ११ दुर्गमा  
 १२ दुर्गमाब्जेका १३ दुर्गमात्मस्वरूपिणी १४ दुर्गमागप्रदा १५ दुर्गमविद्या  
 १६ दुर्गमाभिता १७ दुर्गमज्ञानसंस्थाना १८ दुर्गमध्यानमाप्तिनी  
 १९ दुर्गमाद्या २० दुर्गमगा २१ दुर्गमार्थस्वरूपिणी २२ दुर्गमासुरसंहन्त्री  
 २३ दुर्गमाशुचपारिणी २४ दुर्गमाङ्गी २५ दुर्गमता २६ दुर्गम्या  
 २७ दुर्गमेश्वरी २८ दुर्गमीमा २९ दुर्गमामा ३० दुर्गमा ३१ दुर्गदारिणी ।  
 जो मनुष्य मुक्त दुर्गाकी इष्ट नाममात्रका पाठ करता है वह निश्चयेन  
 सब प्रकारके भक्ते मुक्त हो जायगा ।

कोई धनुर्भोजे पीड़ित हो जबका दुर्गेका कल्पमें पड़ा हो इस वृत्ति  
 नामके पाठमात्रसे नकहते कुरकारण पा जाता है । इसमें धनिक भी सिरहके  
 छिने ज्ञान नहीं है । यदि राजा लोकमें सरकर बचके छिने जबका और  
 किसी प्रकार दुर्गाके छिने भाषा दे दे या दुर्गाके धनुर्भोजन मनुष्य फिर  
 जब जबका वनमें व्याज आदि दिव्य जन्तुओंके बंगुओंके दैव काय जो इन  
 वृत्ति नामके एक ही नाम बार पाठमात्र करनेसे वह सम्पूर्ण भवोत्ति मुक्त

हो जाता है। विपत्तिके समय इसके समान भयानक उपाय दूसरा नहीं है।  
 देवराज ! इस नाममात्रका पाठ करनेवाले मनुष्योंकी कमी कोई इन्ति नहीं  
 होती। अमल, नैतिक और सठ मनुष्योंके इसका उपदेश नहीं देना चाहिये।  
 जो भरी विपत्तिये पहुँचने में इस नाममात्रका इस्तेमाल, इस इस्तेमाल अपना  
 समय बार पाठ करता है स्वयं करता या बाहरवाले करता है वह सब  
 प्रकारकी आपत्तियोंसे मुक्त हो जाता है। सिद्ध अग्निमें मधुमिश्रित लोह  
 छिन्नसे इन नामोंका बार बार हवन करे तो मनुष्य सब विपत्तियोंसे दूर  
 रहता है। इस नाममात्रका पुरस्कार तीस हज़ारका है। पुरस्कारपूर्वक पाठ  
 करनेसे मनुष्य इसके द्वारा समूह कार्य सिद्ध कर सकता है। मेरी कुम्हार  
 मिट्टीकी अष्टमुख मूर्ति बनाने, आठों मुखोंमें कमल, गन्ध, पद्म, सिद्धि,  
 वाता धनुष कमल पेट (बाक) और मुद्रा धारण कराने। मूर्तिके मूलमें  
 कमलका चिह्न हो, उसके तीन मेरु हों उसे लाल कपड़ा पहनाया गया हो  
 वह छिन्नके कन्धे पर लटका हो और छिन्नके मण्डपसुरका वप कर रखी हो इस  
 प्रकारकी प्रतिमा बनाकर नाना प्रकारकी आपत्तियोंसे मल्लपूर्वक मेरा पूजन  
 करे। मेरे उक्त नामोंसे लाल कन्धेके छूट पड़ते हुए चौ बार पूजा करे और  
 मन्त्र ब्रह्म करे हुए पूछे हवन करे। माति माँतिके उत्तम पदार्थ मोग  
 लगाए। इस प्रकार करनेसे मनुष्य असाध्य कार्यको भी सिद्ध कर लेता है।  
 जो मानव प्रतिदिन मेरा भजन करता है वह कभी विपत्तिमें नहीं पड़ता।  
 देवताओंसे ऐसा बहुरंग आहम्मा नहीं अन्तर्धान हो गयी। दुर्गादेवीके  
 इस उपासकानको जो सुनते हैं उनपर कोई विपत्ति नहीं आती।



## अथ देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

न मन्त्रं ना मन्त्रं तदपि न न ज्ञाने स्तुतिमहा

न चाष्टान ध्यानं तदपि न न ज्ञानं स्तुतिकथाः ।

न ज्ञाने मुद्रास्ते तदपि न न ज्ञाने विठपनं

पर ज्ञाने मातस्त्वदनुसरणं कलञ्जहरणम् ॥ १ ॥

विधेरज्ञानन

ब्रविष्यविरहेणात्मसतया

विधेयाश्चक्ष्मत्वात्पद धरण्यार्था व्युत्तिरभूत् ।

तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलप्राणिषु विधे

कुपुत्रो ज्ञायेत् कश्चिदपि कुमाता न ममति ॥ २ ॥

॥ १ ॥ मैं न मन्त्र जानता हूँ न कन्त्रा भरी । तुम स्तुति का भी ज्ञान नहीं है । न आष्टाइन का फल है न ध्यान का । सोच भीर कथा की भी ज्ञान नहीं है । न तो तुम्हारी मुद्रा है ज्ञान है और न मुझे व्युत्ति होकर पद धरण करना ही ज्ञान है ; परन्तु एक बात ज्ञान है । केवल तुम्हारा अनुसरण—तुम्हारे पाँउ पचना । जो कि सब कथ्यों की—ज्यादा गुण-विशेषों—के हर मन्त्रात्म्य है ॥ २ ॥

तब का उच्चार करने वाली कल्पवृक्ष की माता । मैं पूजा की विधि नहीं जानता । २ पाप पनका भी ज्ञान है, मैं स्वभाव से भी ज्ञान नहीं हूँ तथा धर्म के १४ १५ पदों का मन्त्राइन गुणों की नहीं जानता इन सब कारणों से मुझ ज्ञान की मर्यादा तो पूर्ण हो गयी है उसे क्षमा करना क्योंकि कुपुत्र का दोष तो न १४ १५ विधि बड़ा भी कुमाता नहीं होती ॥ २ ॥

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः

परं तेषां मन्त्रे विरलतरलोऽहं तव सुतः ।

मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिषे

कृपुत्रो जायेत कश्चिदपि कुमाता न भवति ॥ ३ ॥

अगन्मातर्ममस्तव चरणसेवा न रचिता

न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।

तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपम यत्प्रकुरुषे

कृपुत्रो जायेत कश्चिदपि कुमाता न भवति ॥ ४ ॥

परिरपक्ता देवा विविधविधसेवाकुलतया

मया पञ्चाङ्गीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।

अ ! इस पृथ्वीपर तुम्हारे लीये-लाये पुत्र तो बहुत-से हैं, किन्तु उन सबमें मैं ही अत्यन्त प्रिय तुम्हारा बाळक हूँ। मेरे-जैसा पञ्चाङ्ग जोड़ निरुपम ही होमा। शिषे ! मेरा ओ यह त्याग तुम्हा दे यह तुम्हारे शिष्ये करायि ठकित नहीं है। क्योंकि संसारमें कृपुत्रका होना सम्भव है किन्तु कहीं भी कुमाता नहीं होती ॥ ३ ॥

आहम्ब ! मया । मैंने तुम्हारे चरणोंकी सेवा कभी नहीं की देवि। तुम्ह अधिक धन भी समर्पित नहीं किया। तथापि मुझ-जैसे अशक्तपर ओ तुम मनुष्य स्नेह करती हो इत्यत्र चरण नहीं है कि तत्कारणें कृपुत्र पैदा हो सकती है। किन्तु कहीं भी कुमाता नहीं होती ॥ ४ ॥

गजेन्द्रादीको जन्म देनेवासी माता पार्वती । [ अग्न देवताओंकी आराधना करते समय ] मुझे नाना प्रकारकी सेवाओंमें व्यग्र रहना पड़ता था इसलिये पञ्चाङ्गी बर्षे अधिक अवस्था बीत जानेपर मैंने देवताओंको छोड़ दिया है अब उनकी सेवा-पूजा मुझसे नहीं हो पाती। अतएव उनसे

## अथ देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

न मन्त्रं ना यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो

न वाङ्मार्गं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः ।

न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विष्णुपत्नं

परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥

विधेयानेन

द्रव्यविरोधेयान्सतया

विधेयान्कथयत्वात्तव परमार्थाभ्युत्थिरम् ।

तदेतत् कन्तव्यं जननि सकलाहारिणि धिमे

हृत्पुत्रो ज्ञायेत कथिदपि ह्यमाता न भवति ॥ २ ॥

अथ । मैं न मन्त्र जानता हूँ न यन्त्रा काहो । मुझे स्तुति का भी ज्ञान नहीं है । न वाङ्मार्ग तथा न ध्यान । शीघ्र और कथाओं भी जानकरी नहीं है । न तो मुद्राओं मुद्राओं ज्ञान हूँ और न मुझे मन्त्रों को लेकर विष्णु करण ही आता हो । परंतु एक बात जानता हूँ केवल तुम्हारा अनुसरण—तुम्हारे पीछे चलना । जो कि तब कभीभी—जब तुम्हारे विरक्ति को हर केनेवाला है ॥ १ ॥

तथा उद्धार करनेवाली कर्मकर्मणी माता । मैं पूजा की विधि नहीं जानता मेरे पास ज्ञान भी अभाव है, मैं ज्ञानवाले भी आकाशी हूँ तथा मुझसे डीक डीक पूजा का सम्पन्न नैर्जन्म नहीं करता । इन सब कर्मों से तुम्हारे कर्मों की सेवा में जो मुक्ति हो कभी न उसे क्षमा करना क्योंकि हृत्पुत्र का होना सम्भव है किंतु नहीं भी तुम्हारा नहीं होती ॥ २ ॥

कपाठी भूतेष्टो मज्जति जगदीशैक्यदर्शी

। मवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥ ७ ॥

न मोक्षसाध्यज्ञान मश्विभववाञ्छापि च न मे

न विद्यानापेक्षा क्षक्षिमुस्ति सुखेष्ठापि न पुनः ।

वतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै

मृडानी रुद्राणी शिव शिव मवानीति जपतः ॥ ८ ॥

नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः

किं रुद्धचिन्तनपरैर्न कृतं वधोमिः ।

क्ष्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाये

धत्से कृपापुष्टिमम्य परं तवैव ॥ ९ ॥

मी को एकमात्र भगवद्भक्तों परकी धारण करते हैं इसका क्या कारण है ? वह मन्त्र उन्हीं कैसे मिला ? वह केवल तुम्हारे पाणिग्रहणकी परिपाटीका फल है तुम्हारे साथ निवास होनेसे ही तनका मन्त्र बढ गया ॥ ७ ॥

मुझमें कर्ममाकी छोटा धारण करनेवाली म्म ! मुझे मोक्षकी इच्छा नहीं है, संसारके वैभवकी मी अभिलाषा नहीं है न विद्याकी अपेक्षा है, न मुक्तकी आकाङ्क्षा तुमसे मेरी बड़ी माचना है कि मेरा कर्म मृडानी, रुद्राणी, शिव शिव मवानी इन मागोंका जप करते हुए बीते ॥ ८ ॥

मा क्यामा । माना प्रकारकी पूजन-सामर्थ्यसे कमी विधिपूर्वक तुम्हारी भावना मुझसे न हो सकी । तथा क्योर भावका चिन्तन करनेवाली मेरी भावने कौन-ठा व्यसय नहीं किया है । फिर मी तुम स्वयं ही प्रयत्न करके मुझ मनापर जो किञ्चित् कृपादृष्टि रखती हो म्म ! वह तुम्हारे ही योग्य है । तुम्हारी-सी दयामयी म्मता ही मेरे-सीते कुपुत्रकी मी आश्रय दे सकती है ॥ ९ ॥

इदानीं चेन्मातस्त्व यदि कृपा नापि मयि ता

निराश्रया सम्भारवननि कं यामि शरणम् ॥ ५ ॥

अपाको बन्धाको मयति मनुषाकोपमगिरा

निराश्रयो रजो विहरति निरं कोटिकनकैः ।

तथाप्ये कर्मे विधति मनुष्ये कलमिदं

वनः का जानीते वननि वननीर्य अपविधौ ॥ ६ ॥

वितामसास्त्रेणो गरुडमश्ननं दिक्पटवरो

अष्टाधारी कण्ठे सुव्रगपतिहारी पद्मपतिः ।

कुछ भी कहावत मिलनेकी शक्या नहीं है । इस समय यदि तुम्हारी कृपा नहीं होती तो मैं अशक्तविरहित होकर कितनी शरणमें आऊँगा ॥ ५ ॥

महा कपर्दी । तुम्हारे मन्दरा एक भस्वर भी कममें यह नाम तो उलझ एक बार होता है कि मूर्ख मान्यता भी मनुषाको के समान मनुष्य मान्यता उधारण करनेवाला उच्चम बका हो जाता है वीन मनुष्य भी कर्णों स्वर्ग-सुखाशोके समान हो फिरकावत निर्मय विहार करता जाता है । जब मनुष्य के एक मन्दरके भगवत्ता देता पता है तो वो लोग विधिपूर्वक अपने कर्मे करते हैं उनके कर्मे प्राप्त होनेवाला उच्चम एक केना होगा । इससे वीन मनुष्य मान्य करता है ॥ ६ ॥

भगवती ! वो अपने मूर्खोंमें विताकी एक-मसूत लपेटे करते हैं जिसका विष ही भोजन है वो दिगम्बरधारी (ब्रह्म रहनेवाले) हैं महाकपर्दक्य और कर्णमें नाममात्र वासुकिको हारते कर्णमें मान्य करते हैं तथा जिन्हें हाथमें कपाक (मिष्टानाम) धोना पता है ऐसे भूतनाथ पद्मपति

## सिद्धकुञ्जिकास्तोत्रम्

### ਸਿਖ ਤਿਆਰ

गृणु देवि प्रशस्यामि इति श्रुत्वास्तोत्रमुत्तमम् ।

येन मन्यप्रमाधेग षण्ठीश्राप शुभा मवेत् ॥१॥

न क्षयं नार्गलाम्बोत्रं कीलकं न रहस्यकम् ।

न घृतं नापि ध्यानं च न न्यागा न च शार्चनम् ॥२॥

द्विजस्य मातुः दूगापाठकत्वं लभेत् ।

अनि गुपतरं दयि दयानामपि दुःखम् ॥३॥

गायनीयं प्रयत्नेन श्रवणानिरिष पायति ।

मारयं मोहनं वश्यं भ्रमनाशाटनादिकम् ।

पाठमात्रेण नमिद्वयत् इतिहासाप्रामाण्यम् ॥१॥

अप मग्त्रः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वासुदेवाय नमः ॥ ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं नमः

[illegible]



आपस्तु ममः सरणं त्वदीयं

करोमि दुर्गे करुणार्थवेष्टि ।

नैवच्छेदस्व मम भक्त्येषाः

सुधातृपार्ता वननी सरन्ति ॥ १० ॥

अगदम्ब विचित्रमत्र किं

परिपूर्णा करुणास्ति चे मयि ।

अपराधपरम्परापरं

न हि माता सहपेक्षने सुतम् ॥ ११ ॥

मत्सम पातकी नास्ति पापघ्नी स्वत्समा न हि ।

एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायाग्यं तथा कुरु ॥ १२ ॥

इति श्रीसुयोक्तसहाय्याम् देव्यपराधसमन्वितोऽर्थः सम्पूर्णः ।

माता दुर्गे । करुणाश्लिष्ट मरेषी । मैं त्रिगिरिमें पैठकर भक्त को सुम्हारा स्मरण करता हूँ [ पहले कभी नहीं करता रहा ] ऐसे मेरी घठछ न भन केना। क्योंकि भूल-ग्याल्ले पीड़ित बाळक मत्सम ही स्मरण करते हैं ॥ १० ॥

कदम्ब । सुतपर को सुम्हाए पूर्ण ज्ञान कनी हुई है, हममें भाव्यर्ष की कौन-सी बात है, पुन भगवान पर भगवान क्यों न करता आछ हो फिर भी मत्सम उसकी उपेक्षा नहीं करती ॥ ११ ॥

महादेवि । मेरे लगान कोई पातकी नहीं है और तुम्हारे समान दूसरी कोई पातकी नहीं है। एका मनकर को अधिक मन नहे कर कहे ॥ १२ ॥

## सप्तशतीके कुछ सिद्ध सम्पुट मन्त्र

श्रीमार्कण्डेयपुराणान्तर्गत देवीमाहात्म्यमें 'मण्डोदर', 'अर्च' 'मण्डोदर' और 'पञ्चमहा' आदि मिश्रकर ७ मन्त्र हैं। यह माहात्म्य दुर्गास्तोत्रकी श्रवणसे प्रसिद्ध है। माताश्री अर्च, बर्च काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंको प्रदान करनेवाली है। जो पुरुष जिस माता और जिस कम्पनासे मन्त्र एवं शिष्टिके साथ सप्तशतीका पारायण करता है उसे उन्हीं मायना और कम्पनासे अनुगार निश्चय ही वर-निधि होती है। इस बातका अनुभव अर्थात् पुरुषोंको प्रत्यक्ष हो चुका है। वरदा हम कुछ ऐसी तुने हुए मन्त्रोंका टंकन करती हैं जिसका सम्पुट देकर शिवाय पारायण करनेसे निमित्त पुरुषार्थोंकी पूर्तिमल और नागदिकभले सिद्ध होती है। इनमें अतिशय समशील ही मन्त्र हैं और कुछ बादरके भी हैं—

( १ ) मामूर्तिक कल्पानके सिये

ऐसा क्या तन्मिदु अगारमण्डप

मिशोर्दिव्यमण्डपिभ्यद्वरमूर्त्ति ।

तार्किकमण्डपिभ्यद्वरमूर्त्ति

अस्या मताः यः शिवायु शुभाभि सा ॥

( ) विष्णुक मनुम तथा मपद्य विमाना कनक छिय

मन्त्राः प्रसादमनुर्ध्व अगारमण्डप

अद्या इत्येव न हि मनुमर्ध्व कर्त्तुं ॥

आ अतिशयमिदमगारमण्डप

मन्त्राव चामुममपद्य मति करोतु ॥

( ३ ) विष्णुर्वा इत्याह छिय

या श्रीः अर्च शुभनिर्वा मण्डोदरमूर्त्तिः

अस्यामता इत्येव न हि मनुमर्ध्व कर्त्तुं ॥

अद्या मताः यः शिवायु शुभाभि सा ॥

मन्त्राव चामुममपद्य मति करोतु ॥



(७) स्वाद्यकराकमाधुप्रमथेपासुरनृधनम् ।

त्रिष्टुभं पातु नो मीतिर्महकाकि मयोऽस्तु ॥

(१०) पापनाशके नित्यं

द्विचक्षि द्वैत्यतेजोसि क्लेशपूर्वं वा जगत् ।

सा वक्ष्य पातु नो द्वेवि पापेभ्योऽन्ना सुतमिव ॥

(११) रोग-नाशके नित्यं

रोगप्रवोचामपहंसि तुष्टा

कष्टा तु कामाद् सकलजमीष्टम् ।

त्वाग्नाधियायो न विपन्नराशौ

व्याघ्राधिता हास्यतर्ता प्रयान्ति ॥

(१२) मदामारी-नाशके नित्यं

अवन्ती भद्रका काशी भद्रकाशी कदाकिमी ।

हुता कमा शिवा बाजी न्नादा न्नादा नमोऽस्तु ते ॥

(१३) मारोन्ध मीर मीमांस्यहो मासिके नित्यं

द्वेदि मीमांस्यकाशीर्धं द्वेदि मे वरम् सुखम् ।

कथं द्वेदि अर्धं द्वेदि कमी द्वेदि द्विती अर्धं ॥

(१४) सुन्दरणा पत्नीप्री मासिक नित्यं

वही मन्दैरमा द्वेदि अमोहवानुगन्तिमीम् ।

ताहिनी दुर्गमं नारायणारण्यं सुखेन्द्रकम् ॥

(१५) बाधा-नाशिके नित्यं

सर्वोपाशान्धकर्वं पीडोन्धमानिकेवरी ।

दुःखमेव त्वया कार्यककार्हेतिदयानम् ॥

(१६) नापविष अङ्गुधुधक नित्यं

द्वे वासना अनवहेतु अचानि तेरा

तेरा कान्ति न न लैरुति अमीरान् ।

अन्धज दुःख मिश्रनामदुःखदारा

वैरा नारायणारण्यं अवन्ती एवम् ॥

( ४ ) विश्वके भम्बुवयके छिये

विह्वैकरी त्वं परिपासि विह्वं  
 विह्वैकरी त्वं परिपासि विह्वं  
 विह्वैकरी त्वं परिपासि विह्वं  
 विह्वैकरी त्वं परिपासि विह्वं ।

( ५ ) विश्वक्यापी विपत्तिपोंके नाशके छिये

हेमि मयकारिहो मसीह  
 मसीह मयकारिहो मसीह  
 मसीह मयकारिहो मसीह  
 मसीह मयकारिहो मसीह ।

( ६ ) विश्वके पाप-ताप-निवारणके छिये

हेमि मसीह परिपाक्य नोऽप्रिमीते-  
 विह्वं नवाभुवयकारिहो  
 विह्वं नवाभुवयकारिहो  
 विह्वं नवाभुवयकारिहो ।

( ७ ) विपत्ति-नाशके छिये

नवाभुवयकारिहो नवाभुवयकारिहो  
 नवाभुवयकारिहो नवाभुवयकारिहो  
 नवाभुवयकारिहो नवाभुवयकारिहो ।

( ८ ) विपत्तिनाश और शुभकी प्राप्तिके छिये

नवाभुवयकारिहो नवाभुवयकारिहो  
 नवाभुवयकारिहो नवाभुवयकारिहो  
 नवाभुवयकारिहो नवाभुवयकारिहो ।

( ९ ) भयनाशके छिये

(क) सर्वभयके सर्वभयके सर्वभयके  
 सर्वभयके सर्वभयके सर्वभयके  
 सर्वभयके सर्वभयके सर्वभयके ।  
 (ख) सर्वभयके सर्वभयके सर्वभयके  
 सर्वभयके सर्वभयके सर्वभयके  
 सर्वभयके सर्वभयके सर्वभयके ।

(८) स्वाद्यकराकम्पुमममेयामुरभूतम् ।

त्रिपुलं पाणु मो मतिर्मद्व्याकि नमोभ्यु ते ॥

(१०) पापनाशके लिये

दिग्विदि दैत्यदेवांसि ह्यनेकार्घ्यं च अगद ।

स्य वन्द्य पाणु मो हेति पापेभ्योऽन्ना सुतानिह ॥

(११) रोग-नाशके लिये

रोगप्रकोपानपहंसि तुष्टा

कष्टं तु कमाद् सकृन्ममीष्टान् ।

त्यामाधितानां न विपन्नराजां

त्यामाधितां ह्यध्वयनां प्रथामिह ॥

(१२) महामारी-नाशके लिये

अवन्ती अत्रका काशी अत्रकाशी कराकिनी ।

कुर्गा क्षमा शिवा वाही न्यादा न्यादा नमोभ्यु ते ॥

(१३) व्याध्यान्त्र और माभाष्यके प्रातिके लिये

हेति माभाष्यकारीर्ष्यं हेति मे परमं सुखम् ।

अर्ष्यं हेति अर्ष्यं हेति वातो हेति हिरो अर्ष्यं ॥

(१४) सुन्दरणा पत्नीकी प्रातिके लिये

वही अमीरतां हेति अमीरतापुनःतिनीम् ।

लाहिनीं कुर्गर्ष्यतामगारण कुर्गर्ष्यताम् ॥

(१५) बाघा-नाशिके लिये

मर्षीबाघाप्रपञ्चं वीर्यवन्तामिहेश्वरि ।

वृक्षमेव त्वया वार्यवन्तर्हिर्वराणां ॥

(१६) राक्षसिण्डु अम्बुदपक लिये

हे माञ्जरा अमरदेव्यं वन्यानि मेवां

मेवां वार्यति न च मीरुनि चर्यवर्माः ।

वन्द्यताम् वृक्ष विपुलाञ्जल्यवराणां

हेवां मार्यवृक्षतां मरुती अमरा ॥

(१७) वारिध-पशु-पादिमाशके द्विये

हुने स्पृता इहमि भीतिमसेवमन्तोः

अथैः स्पृता मतिमतीव शुभा इहमि ।

इति-पशु-पाद-वहिरिनि का इहमि

सर्धेपचरकरणाव

मयाऽऽर्चिता ॥

(१८) रक्षा पानेके द्विये

शून्ये वादि नो द्वेदि यदि नृनेन चाम्बिने ।

वच्यस्तनैव ना यदि चपम्यनिऽन्वयेन च ॥

(१९) समस्त विद्यामोक्षी और समस्त क्षियामें भवभाषकी प्राप्तिके द्विये

विद्याः समस्तान्य द्वेदि सेवाः

क्षिपाः समस्तः सकला जगत्सु ।

त्वयैकदा

परिममन्वीत्य

का ते शक्तिः कल्पयत करोमि ॥

(२०) सब प्रकारके कल्याणके द्विये

सर्वमङ्गलान्य द्वेदि सर्वार्थसाधिके ।

वाक्ये ज्ञानके गौरी नारायणि कर्मोऽस्तु ते ॥

(२१) शक्ति-प्राप्तिके द्विये

सृष्टिक्रिष्टिविधाकर्माणि शक्तिनृते सन्नाद्वि ।

गुणान्ये गुणमये वाक्यनि नमीऽस्तु ते ॥

(२२) प्रसन्नताकी प्राप्तिके द्विये

प्रसन्नानां प्रसीद त्वं द्वेदि निश्चार्तिहारिनि ।

दैवोत्पन्नसिनामीहो कौकानां नरहा मय ॥

(२३) विविध उपद्रवोंसे बचनेके द्विये

रक्षामि

बन्धोऽग्निपाव

वाय

वज्रास्त्रो

इत्युपद्रवाणि

मय

।

वाचनस्यै

वच

तथाविधमन्यै

तत्र स्थिता त्वं परिप्राप्ति विधाय ॥

(२४) वाचामुक्त होकर धन-पुत्रादिकी प्राप्तिके लिये

सर्वाकारप्रतिनिर्जुष्यै धनवाञ्छासुताम्बिता ।

मनुष्ये मन्त्रसाधनं भविष्यति यः संस्तवाः ॥

(२५) मुक्ति-मुक्तिकी प्राप्तिके लिये

विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां शिवम् ।

कर्म देहि कर्म देहि पत्नी देहि द्विपो यदि ॥

(२६) पापनाश तथा भक्तिकी प्राप्तिके लिये

कृतेभ्यः सर्वेषां मन्त्रां चण्डिके दुरितहरि ।

कर्म देहि कर्म देहि पत्नी देहि द्विपो यदि ॥

(२७) स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्तिके लिये

सर्वभूता भवा देवि स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी ।

त्वं सुता सुतये क्व वा मन्त्रो परमोक्तवाः ॥

(२८) स्वर्ग और मुक्तिके लिये

मर्त्यस्य मुक्तिरूपेण जगत्स्य हृदि संनिधये ।

स्वाप्तपरांरि देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

(२९) मोक्षकी प्राप्तिके लिये

त्वं वैष्णवी ह्यतिरमन्तरीर्या

विचाला बीजं परमाप्तिं साधवा ।

सम्प्राप्तित्वं देवि समग्रमेतत्

त्वं मे प्रसन्ना मुक्तिं मुनिदेवताः ॥

(३०) स्वप्नमें सिद्धि-असिद्धि जाननेके लिये

दुर्गे देवि नमस्तुभ्यं सर्वकामार्थसाधिके ।

मम सिद्धिअसिद्धिं वा ज्ञप्ते सर्वं प्रार्थय ॥



## श्रीदेवीजीकी आरती

अगबननी अय ! अय ॥ ( मा ! अगबननी अय ! अय ॥ )  
 मयहारिणि, मयहारिणि, मयमामिनि अय ! अय ॥ अय०  
 तू ही सत-चित्त-सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा ।  
 मत्स्य सनातन सुन्दर पर-शिव सुर मूषा ॥ १ ॥ अगबननी-  
 आदि अनादि अनामय अविच्छिन्न अविनाशी ।  
 अमल अनन्त अगाधर अज अर्नैदराशी ॥ २ ॥ अग०  
 अविकारी, अपहारी, अकल, कलाधारी ।  
 कर्षा विधि, मर्षा हरि, हर सैशारकारी ॥ ३ ॥ अग०  
 तू विविधतु, रमा, तू उमा, महामाया ।  
 मूलप्रकृति विद्या तू, तू जननी, बापा ॥ ४ ॥ अग०  
 गम, कृष्ण तू, सीता, ब्रह्मरानी राधा ।  
 तू बाष्पहास्यह्रुम, हारिणि सब बापा ॥ ५ ॥ अग०  
 इत्य विद्या, नव दुर्गा, नानाशक्तकरा ।  
 अष्टमातृका, यागिनि, नव नव रूप धरा ॥ ६ ॥ अग०  
 तू परधामनिवामिनि, महाविद्यासिनि तू ।  
 तू ही अमृतानभिहारिणि, वाष्पयलासिनि तू ॥ ७ ॥ अग०

मुर-मुनि-मोहिनि सौम्या तू क्षोमाऽऽधारा ।  
 विषमन विघट-सरूपा, प्रलयमयी धारा ॥ ८ ॥ जग०  
 तू ही स्नेह-सुधामयि, तू अति गरलमना ।  
 रत्नविमूषित तू ही, तू ही अस्त्रि-तना ॥ ९ ॥ जग०  
 मूलाधारनिवासिनि, इह-पर-सिद्धिप्रद ।  
 कालातीता काली, कमला तू परदे ॥ १० ॥ जग०  
 शक्ति शक्तिपर तू ही नित्य अमेदमयी ।  
 मेदप्रदर्शिनि बाणी विमले ! वेदत्रयी ॥ ११ ॥ जग०  
 हम अति दीन दुखी मा ! विपक्ष-जाल घेर ।  
 हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेर ॥ १२ ॥ जग०  
 निब स्वभावबन्ध जननी ! दयाघटि कीजै ।  
 कल्या कर करुणामयि ! शरण-शरण दीजै ॥ १३ ॥ जग०



## देवीमयी

एव च का किल न स्तुतिरम्बिके ।

सकलशब्दमयी किल ते तनुः ।

निखिलमूर्तिषु म मयदन्वया

मनसिवास्तु बहिःप्रसरस्तु च ॥

इति विचिन्त्य शिषे । शमिताशिषे ।

अगति आतमयत्नवशादिदम् ।

स्तुतित्रयपार्थनचिन्तनवर्जिता

न स्तुतु कश्चन कालकलास्ति मे ॥

“हे अम्बिके ! संसारमें कौन-सा वाक्य ऐसा है, तुम्हारी स्तुति नहीं है क्योंकि तुम्हारा शरीर तो सकलशब्दमय है । देवि ! जब मेरे मनमें सकलव्यक्तिकल्याणक रूपमें उद्भूत होनेवाला एवं संसारमें हर्यरूपसे सामने आनेवाली सम्पूर्ण आदित्योर्में आपका स्वरूपका दर्शन होने लगा है । हे समस्त अमङ्गलार्थशून्य कल्याणशक्तये शिषे ! इस बातको सोचकर जब दिन-रात निरन्तर ही सम्पूर्ण आचार-आत्ममें मेरी यह स्थिति हो गयी है कि मरे सम्पूर्ण कल्याण वंश भी तुम्हारी स्तुति, अथवा पूजा अथवा ध्यानसे रहित नहीं है । क्योंकि मरे सम्पूर्ण जागतिक आचार-व्यवहार तुम्हारे भिन्न-भिन्न रूपोंके प्रति पर्याप्त रूपसे व्यञ्जित होनेके कारण तुम्हारे पूजाक रूपमें परिणत हो गये हैं ।

—सतगुरुदेव आचार्य श्रीमद्विष्णु

